लेव तोलस्तोय

कज़्ज़ाक

कज़्ज़ाक

रादुगा प्रकाशन
मास्को

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड
५ ई, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली-११००५५

अनुवादक : योगेन्द्र नागपाल

Л. Толстой

КАЗАКИ

На языке хинди

L. Tolstoy

THE COSZACKS

in Hindi

सोवियत संघ में मुद्रित

ISBN 5-05-000395-4

$T\frac{4702010100-496}{031(05)-85}$ 356—85

प्रकाशकीय

रूसी साहित्य में प्रायः कज़्ज़ाकों का उल्लेख आता है। कौन हैं ये कज़्ज़ाक ?

कज्जाक का शाब्दिक अर्थ है – आज़ाद आदमी। रूसी भाषा में यह शब्द १४ वीं सदी से प्रचलित हुआ। उन दिनों नगरों और सीमावर्ती चौकियों में प्रहरियों का काम करने के लिए जो वैतनिक सिपाही रखे जाते थे, वे ही कज्जाक कहलाते थे। सीमावर्ती चौकियों में उन्हें अपने परिवार के लिए थोड़ी-थोड़ी ज़मीन भी दी जाने लगी। उधर १५ वीं-१६ वीं सदियों में रूस में सामंतवादी शोषण बढ़ा और भूदास प्रथा का तीव्र विकास हुआ, जिसके फलस्वरूप काफ़ी बड़ी संख्या में किसान और कारीगर रूस से भागने लगे और उसकी सीमाओं के पार दोन, द्नेप्र, याइक और उनकी सहायक नदियों के तटों पर खाली पड़ी ज़मीनों पर बसने लगे। ये लोग भी कज़्ज़ाक कहलाये। कालांतर में ये सैनिक समुदायों में गठित हुए। रूस के साथ अपने संपर्क इन्होंने बनाये रखे। १६ वीं-१७ वीं सदियों में इन्होंने रूस के सीमावर्ती भागों में – दक्षिण में और साइबेरिया में नये स्थानों पर बसकर रूसी राज्य का विस्तार किया। ज़ारशाही सरकार कज़्ज़ाकों को भांति-भांति के पुरस्कार और अनाज देकर अपनी सीमाओं की रक्षा के लिए इनका उपयोग करती थी। इसके लिए इन्हें नये सीमावर्ती स्थानों पर बसाती भी थी। इन दिनों कज़्ज़ाकों को प्रशासन, न्यायपालन और दूसरे राज्यों के साथ संबंधों के मामले में स्वतंत्रता प्राप्त थी। कज़्ज़ाक समुदाय अपनी पंचायत में अपने मामलों का निबटारा करता था, अपने सरदार चुनता था। सत्रहवीं सदी के उत्तरार्ध में रूसी चर्च में कुछ सुधार किये गये, जिन्हें इस चर्च के अनुयायी कई संप्रदायों ने स्वीकार नहीं किया और वे पुरातनपंथी कहलाने लगे। कज़्ज़ाकों ने भी ये सुधार नहीं माने। पुरातन-

पंथी अधिकृत रूसी चर्च के अनुयायियों को "दुनियावी" अधर्मी कहते थे, उनके साथ उठना-बैठना, खाना-पीना पाप समझते थे।

अठारहवीं सदी से रूस की केंद्रीय सरकार एक ओर कज़्ज़ाकों की स्वतंत्रता सीमित करने लगी, दूसरी ओर उन्हें ज़मीन, आदि के मामले में विशेषाधिकार देने लगी। कज़्ज़ाक सैनिक समुदाय सीमा के जिस भाग की रक्षा करता था, वहां की ज़मीन उसे सौंप दी जाती थी। इस ज़मीन का एक भाग कज़्ज़ाकों में बांट दिया जाता था। इस प्रकार उन्नीसवीं सदी के आरंभ तक कज़्ज़ाकों की एक विशेषाधिकारसंपन्न सैनिक श्रेणी बन गयी। रूसी होते हुए भी कज़्ज़ाक आम रूसियों से भिन्न था। प्रायः सभी कज़्ज़ाकों के पास अपनी थोड़ी-बहुत ज़मीन होती थी, जबकि "ख़ास" रूस में सारे किसान भूदास होते थे। इसका अर्थ यह था कि वे अपने स्वामी ज़मींदार की संपत्ति होते थे, वह उन्हें बेच-ख़रीद तक सकता था। उन्नीसवीं सदी में भूदास प्रथा के अंतर्गत शोषण और उत्पीड़न अपनी चरम सीमा पर पहुंच गया था। देश की बहुसंख्य आबादी भूदासता की बेड़ियों में छटपटा रही थी। कहना न होगा कि सचेतन संपन्न लोग भी जनता की इस पीड़ा से अछूते न रह सकते थे। ज़मींदारों और भूदासता के बंधनों से मुक्त, स्वतंत्र कज़्ज़ाकों का जीवन उनके हृदय पर गहरी छाप छोड़ता था। संक्षेप में यही तोलस्तोय के उपन्यास 'कज़्ज़ाक' की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है।

अंत में इतना और बता दें कि इस उपन्यास में जिन कज़्ज़ाकों का चर्चा है उनके पूर्वज सोलहवीं शताब्दी में दोन से आकर उत्तरी काकेशिया में बसे थे। ज़ार प्योत्र महान के ज़माने में, अठारहवीं शताब्दी के आरंभ में तेरेक नदी पर सीमा चौकियां बनायी गयीं और इन कज़्ज़ाकों को यहां नदी के रूसी तट पर ज़मीनें देकर बसाया गया। यह ऐतिहासिक घटना कज़्ज़ाकों की एक किंवदंती में प्रतिबिंबित हुई जिसका उल्लेख तोलस्तोय ने किया है। लेकिन जैसा कि किंवदंतियों में प्रायः होता है, यहां भी इस घटना को अधिक पुराना दिखाने के लिए इसका संबंध सोलहवीं सदी के ज़ार इवान रौद्र से जोड़ दिया गया।

* * *

'कज़्ज़ाक' उपन्यास तोलस्तोय ने अपने निजी अनुभव के आधार पर लिखा।

१८५१ में बाईस वर्षीय तोलस्तोय अपने बड़े भाई निकोलाई के साथ

काकेशिया गये। यहां तेरेक नदी के बायें तट पर स्थित स्तारोग्लाद्कोव्स्काया नामक कज़्ज़ाक गांव में तोलस्तोय लगभग तीन वर्ष तक रहे। काकेशिया में हुई सैनिक कार्रवाइयों में उन्होंने भाग लिया। तोलस्तोय ने स्वयं यह लिखा कि वह अपना साहस परखने और यह देखने कि लड़ाई क्या होती है, काकेशिया आये हैं।

काकेशिया में ही वह लेखक बने। वैसे लेखन कार्य उन्होंने, यहां आने से पहले मास्को में ही शुरू कर दिया था। यह उनका लघु-उपन्यास 'बचपन' था, जिसे उन्होंने काकेशिया में पूरा किया। सेंट पीटर्सबर्ग से छपनेवाली पत्रिका 'सोव्रेमेन्निक' (समसामयिक) के संपादक विलक्षण रूसी कवि निकोलाई नेक्रासोव को जब यह रचना प्रकाशनार्थ मिली तो वह इससे इतने प्रभावित हुए कि इसके लेखक का असली नाम जाने बिना ही उन्होंने इसे छाप दिया।

काकेशिया की भव्य प्रकृति और उसके साथ पूर्ण सामंजस्य में जीते सुंदर, स्वतंत्रताप्रिय लोग, जो भूदासता के अंकुश से अपरिचित थे, इन सब ने युवा तोलस्तोय को मोहित कर लिया।

'कज़्ज़ाक' उपन्यास का नायक ओलेनिन बहुत हद तक आत्मचरित्रात्मक है। ओलेनिन कुलीन समाज की आलोचना और भर्त्सना ही नहीं करता, वह उससे नाता तोड़ने को भी तत्पर है, ताकि साधारण लोगों के समीप आ सके, उनका जीवन अपना सके।

लेकिन बांके कज़्ज़ाक लुकाश्का, गर्वीली सुंदरी मर्यान्का और दानिशमंद बूढ़े शिकारी येरोश्का और उसके बीच अलंघनीय खाई है, जिसे पाटने के ओलेनिन के प्रयास निष्फल रहते हैं।

कज़्ज़ाकों का गांव ओलेनिन के लिए परदेस है और वह इस गांव के लिए परदेसी है। प्रसंगतः, इस अर्थ में उपन्यास का नायक उसके लेखक से भिन्न है। तोलस्तोय ने कज़्ज़ाकों के साथ बड़े अच्छे संबंध स्थापित कर लिये थे।

उन दिनों के अपने एक पत्र में तोलस्तोय ने लिखा कि काकेशिया में उन्होंने जीवन की शिक्षा पायी। सैनिक सेवा के लिए दूसरे स्थान पर जाते हुए उन्होंने अपनी डायरी में लिखा: "काकेशिया से मुझे गहरा अनुराग हो गया है।.. यह बीहड़ इलाक़ा सचमुच अनुपम है। यहां दो विपरीत बातों–युद्ध और स्वतंत्रता–का इतना विचित्र और काव्यमय संयोजन हुआ है।"

'कज़्ज़ाक' उपन्यास के साथ तोलस्तोय के लेखन कार्य का पहला दशक पूरा हुग्रा। उनके सृजन में यह उपन्यास एक सीमा का महत्त्व रखता है: लेखक की खोजों का ग्रत्यंत तनावपूर्ण काल पूरा हुग्रा ग्रौर उन्होंने ग्रपने सृजन के परिपक्व काल में पदार्पण किया, जिसके परिणाम थे उनके विश्वबिख्यात उपन्यास 'युद्ध ग्रौर शांति', 'ग्रान्ना करेनिना', 'पुनरुत्थान'।

१

शीतकालीन मास्को की सारी चहल-पहल शांत हो गई है। विरले ही कहीं पहियों की चरचर सुनाई दे जाती है। खिड़कियों से कोई रोशनी नहीं झांक रही श्रौर सड़क की बत्तियां बुझ गई हैं। गिरजों में घंटे बजने लगे हैं। निद्रामग्न नगर में फैलती उनकी गूंज प्रभात के श्रागमन की सूचना दे रही है। सड़कें सूनी हैं। कभी-कभार कोई गाड़ीवाला श्रपनी स्लेजगाड़ी से बालू मिला हिम मथता दूसरे नुक्कड़ पर चला जाता है श्रौर सवारी के इंतज़ार में ऊंघने लगता है। कोई बुढ़िया गिरजे को जाती है, जहां इक्की-दुक्की मोमबत्तियों की लाल लौ देवप्रतिमाश्रों के सुनहरे चौखटों में प्रतिबिंबित हो रही है। जाड़ों की लंबी रात के बाद कामगार लोग उठ रहे हैं, श्रपने-श्रपने काम को निकल रहे हैं।

साहब लोगों के लिए श्रभी शाम ही है।

शेवल्ये के होटल की एक खिड़की की बंद झिलमिली के पीछे से क़ानून तोड़ती रोशनी श्रा रही है। होटल के बाहर एक बग्घी श्रौर कुछ स्लेज गाड़ियां एक दूसरी से सटी खड़ी हैं। तीन घोड़ों की त्रोइका गाड़ी भी यहीं खड़ी है। चौकीदार श्रपने कोट में लिपटा श्रौर गठरी-सा बना नुक्कड़ के पीछे छिपता जाता है।

मुरझाया चेहरा लिये ड्योढ़ी में बैठा होटल का नौकर सोचता है: "हे भगवान, कब इनकी ये गप्पें ख़त्म होंगी? मेरी ड्यूटी पर ही ऐसे गाहकों को श्राना होता है!" बगल के उजले कमरे से तीन नौजवानों की श्रावाज़ें श्रा रही हैं। वे यहां खाना खा रहे हैं। मेज़ पर बचा-खुचा खाना श्रौर शराब रखी है। मेज़ के पास नाटा-दुबला, साफ़-सुथरा श्रौर साधारण से चेहरेवाला नौजवान बैठा है। वह विदा होनेवाले पर नज़रें टिकाये है। उसकी श्रांखों से सहृदयता श्रौर थकावट टपक रही है। ऊंचे

कद का दूसरा नौजवान खाली बोतलों से भरी मेज़ के पास कोच पर लेटा हुआ है और घड़ी की चाबी से खेल रहा है। तीसरा भेड़ की खाल का नया लंबा कोट पहने कमरे में टहल रहा है। कभी-कभार वह रुक जाता है और अपनी खासी मोटी व ताकतवर, किंतु सफ़ाई से कतरे नाखूनोंवाली उंगलियों से बादाम तोड़ता है। वह जाने किस बात पर मुस्कराता जा रहा है। उसके चेहरे पर चमक है और उसकी आंखें भी चमक रही हैं। वह बड़े जोश से हाथ नचाता बोल रहा है; लेकिन स्पष्ट है कि वह आवश्यक शब्द नहीं ढूंढ पा रहा है और वे सभी शब्द जो उसकी जीभ पर आ रहे हैं, उसे अपने मन में उमड़ते भावों को व्यक्त करने के लिए अपर्याप्त लगते हैं। वह लगातार मुस्कराता जा रहा है।

"अब मैं सब कुछ कह सकता हूं!" विदा होनेवाला कहता है। "मैं अपनी कोई सफ़ाई नहीं दे रहा, किंतु मैं चाहता हूं कि कम से कम तुम मुझे समझो, जैसे कि मैं स्वयं अपने आपको समझता हूं, न कि वैसे जैसे ओछा संसार इस बात को देखता है। तुम कहते हो कि मैं उसके सम्मुख दोषी हूं," वह उस नौजवान की ओर उन्मुख होता है, जो सौहार्द भरी दृष्टि से उसे देख रहा है।

"हां, दोषी हो," नाटा-दुबला उत्तर देता है और उसकी दृष्टि पहले से भी अधिक सहृदयता व थकान भरी प्रतीत होती है।

"मैं जानता हूं तुम ऐसा क्यों कहते हो," विदा होनेवाला अपना बात जारी रखता है। "तुम्हारे विचार में किसी का प्रिय होना वैसा ही सौभाग्य है, जैसा कि स्वयं प्रेम करना और एक बार यह सौभाग्य पा लेने पर जीवन भर के लिए पर्याप्त है।"

"बिल्कुल पर्याप्त है! आवश्यकता से अधिक पर्याप्त है," नाटा-दुबला आंखें खोलते और मूंदते हुए अपनी बात की पुष्टि करता है।

"किंतु स्वयं प्रेम क्यों न किया जाये!" विदा होनेवाला कहता है और विचारमग्न हो जाता है, वह मानो खेदभरी दृष्टि से अपने मित्र को देखता है। "प्रेम क्यों न किया जाये? प्रेम हो, तब न! नहीं, प्रिय होना दुर्भाग्य है। हां, यह दुर्भाग्य है जब तुम यह अनुभव करते हो कि दोषी हो क्योंकि प्रत्युत्तर में प्रेम नहीं दे सकते, देने में असमर्थ हो। हे, भगवान!" वह हाथ झटकता है। "कहीं कुछ ढंग से भी तो होता हो, किंतु नहीं, सब उलटा है, अपने ही ढंग से सब कुछ होता है। मैंने तो जैसे यह भावना चुरा ली है। तुम भी यही सोचते हो; इंकार मत करो, ज़रूर तुम यही सोचते

होगे। परंतु विश्वास मानो अपने जीवन में जो बहुत-सी बेवक़ूफ़ियां और बेहूदगियां कर चुका हूं, उनमें एक यही है, जिसका मुझे पश्चात्ताप नहीं है और न हो सकता है। पहले भी और बाद में भी मैंने न अपने आप से. न उससे कभी झूठ बोला। मुझे लगा था कि अंततः मुझे प्रेम हो गया है, किंतु बाद में मैंने देखा कि यह अनचाहा झूठ है, कि ऐसे प्रेम नहीं हो सकता, सो मैं आगे नहीं बढ़ सकता था; लेकिन वह बढ़ गई। इसमें मेरा क्या दोष है कि मैं प्रेम नहीं कर सकता था? मैं करता तो क्या करता?"

"अब तो सब समाप्त हो चुका है!" दोस्त ने कहा और नींद भगाने के लिए सिगरेट जलाई। "बस एक बात है: तुमने अभी किसी से प्रेम नहीं किया है और तुम नहीं जानते हो कि प्रेम क्या है।"

भेड़ की खाल का कोट पहने युवक फिर से कुछ कहने को हुआ, उसने अपना सिर थाम लिया। किंतु वह जो कहना चाहता था, वह बात कह नहीं पा रहा था।

"हां, प्रेम नहीं किया! सच कहते हो, मैंने किसी से प्रेम नहीं किया! पर मुझमें प्रेम की अभिलाषा तो है, ऐसी अभिलाषा, जिससे तीव्र कोई अभिलाषा हो ही नहीं सकती! किंतु क्या ऐसा प्रेम है भी? सब कुछ कहीं अधूरा रह जाता है। ख़ैर, अब कहने की कोई ज़रूरत नहीं! हां, मैंने अपने जीवन में सब कुछ उलझा डाला है, एकदम उलझा डाला है। लेकिन अब सब कुछ समाप्त हो गया है, तुम ठीक ही कहते हो। मैं अनुभव कर रहा हूं—मेरे लिए अब नया जीवन आरंभ हो रहा है।"

"जिसे तुम फिर से उलझा डालोगे," कोच पर लेटे और चाबी से खेल रहे दोस्त ने कहा, लेकिन विदा होनेवाला उसकी बात नहीं सुन रहा था। वह कहता जा रहा था:

"मैं उदास भी हूं और ख़ुश भी कि जा रहा हूं। उदास क्यों हूं? पता नहीं।"

और वह केवल अपनी ही बात करने लगा, यह देखे बिना कि दूसरों के लिए यह सब उतना दिलचस्प नहीं है, जितना कि उसके लिए। मनुष्य अपने भावावेग के क्षणों में ही सबसे अधिक स्वार्थी होता है। उसे लगता है कि इस क्षण संसार में उससे अधिक रोचक व अनुपम और कुछ भी नहीं है।

"मालिक, त्रोइकावाला और नहीं रुकना चाहता!" अंदर आये जवान

ख़िदमतगार ने कहा। वह टखनों तक लंबा ओवरकोट पहने और गुलूबंद बांधे था। "बारह बजे से गाड़ी बुला रखी है और अब चार बजने को हैं।"

मालिक द्मीत्री अन्द्रेयेविच ओलेनिन ने अपने ख़िदमतगार वन्यूशा पर नज़र डाली। उसके गले में बंधे गुलूबंद, उसके नमदे के बूटों और उसके उनींदे चेहरे में उसे एक दूसरे जीवन का, परिश्रम, अभाव और सक्रियता भरे जीवन का आह्वान सुनाई दिया।

"हां, सचमुच चलना चाहिए!" अपने कोट पर खुला हुक टटोलते हुए उसने कहा।

मित्रों ने सलाह दी कि त्रोइकावाले को वोद्का के लिए और कुछ पैसे देकर रोके रखें, लेकिन उसने अपनी टोपी पहन ली और कमरे के बीचोंबीच खड़ा हो गया। उन्होंने एक दूसरे के गालों पर चुंबन जड़ा – एक बार, दो बार और फिर रुककर तीसरी बार। भेड़ की खाल का कोट पहने युवक ने मेज़ के पास जाकर वहां रखा जाम पी लिया, नाटे-दुबले का हाथ पकड़ा और संकोच से लाल हो गया।

"नहीं, कहे ही देता हूं।... मुझे तुमसे सब कुछ साफ़-साफ़ कहना चाहिए और मैं कह भी सकता हूं, क्योंकि मुझे तुमसे लगाव है।... तुम तो उससे प्रेम करते हो न? मैं सदा यही सोचता था।... करते हो न?"

"हां," मित्र ने उत्तर दिया। उसकी मुस्कान में पहले से भी अधिक नम्रता आ गई थी।

"और हो सकता है..."

"जी, मोमबत्तियां बुझाने का हुक्म हुआ है," उनींदे नौकर ने कहा, जो अंतिम बातचीत सुनता हुआ सोच रहा था कि क्यों ये साहब लोग सदा एक-सी ही बातें करते हैं। "बिल किसके नाम चढ़ाना होगा? आपके नाम?" ऊंचे कदवाले से उसने पूछा, पहले से ही यह जानते हुए कि सवाल किससे पूछना चाहिए।

"मेरे नाम," ऊंचे कदवाले ने कहा। "कितना हुआ?"

"छब्बीस रूबल।"

ऊंचे कदवाला पल भर को सोच में पड़ गया, लेकिन कुछ भी कहे बिना उसने बिल जेब में रख लिया।

उधर दोनों मित्रों की बातें जारी थीं।

"अच्छा तो, विदा! तुम बड़े प्यारे आदमी हो!" विनम्रता भरी आंखोंवाले नाटे-दुबले ने कहा।

दोनों की आंखें भर आई। वे बाहर निकल आये।

"अरे, हां!" विदा होनेवाले ने संकोच से लाल होते हुए ऊंचे कद-वाले से कहा। "शेवल्ये का हिसाब तुम कर देना और फिर मुझे लिख देना।"

"ठीक है, ठीक है," ऊंचे कदवाले ने दस्ताने पहनते हुए कहा। "कितनी ईर्ष्या हो रही है मुझे तुमसे!" बाहर आकर सहसा वह बोला।

विदा होनेवाला त्रोइका स्लेजगाड़ी में जा बैठा और ओवरकोट में लिपटकर बोला: "अच्छा, चलते हैं!" और वह ज़रा सरक भी गया, उसे जगह देने के लिए जिसने कहा था कि उसे ईर्ष्या हो रही है; उसका स्वर कांप रहा था।

विदा करनेवाले ने कहा: "अच्छा, द्मीत्री, भगवान करे..." उसकी कोई कामना नहीं थी, सिवाय इसके कि जानेवाला जल्दी से चला जाये, सो वह यह नहीं कह पाया कि भगवान क्या करे।

वे थोड़ी देर चुप रहे। फिर से किसी ने कहा: "अलविदा!" किसी ने कहा: "चलो!" और त्रोइकावाला चल पड़ा।

"येलिज़ार, बग्घी लाओ!" विदा करनेवालों में से एक ने चिल्लाकर कहा।

कोचवान येलिज़ार और गाड़ीवाले हिलने-डुलने लगे, पुचकारते हुए लगाम खींचने लगे। ठंड से अकड़ी बग्घी हिम पर चरचर करती चल दी।

"अच्छा प्यारा आदमी है यह ओलेनिन," विदा करनेवालों में से एक बोला। "पर क्या सनक उठी है इसे काकेशिया जाने की, सो भी कैडेट बनकर? फूटी कौड़ी का भी काम नहीं है। तुम कल क्लब में डिनर करोगे?"

"हां।"

और विदा करनेवाले अपने-अपने रास्ते चले गये।

ओलेनिन को ओवरकोट बहुत गरम लगने लगा। उसने ओवरकोट खोल लिया। त्रोइका गाड़ी अंधेरी सड़क से दूसरी सड़क पर, किन्हीं ऐसे मकानों के सामने से चल दी, जो उसने पहले कभी नहीं देखे थे। ओलेनिन को लग रहा था कि दूर जानेवाले ही इन सड़कों से जाते हैं। चारों ओर अंधेरा था, खामोशी और उदासी थी, लेकिन उसका हृदय यादों से, प्रेम से, खेद से और उमड़ते हुए मीठे आंसुओं से लबालब था।...

"प्यार है! बहुत प्यार है! बड़े प्यारे हैं! कितना अच्छा है!" – वह कहता जा रहा था और उसका मन हो रहा था कि बस रो पड़े।। लेकिन उसका ऐसा मन क्यों हो रहा था? कौन बड़े प्यारे हैं? किससे उसे प्यार है? इसका उसे ठीक से आभास नहीं था। कभी वह किसी इमारत को बड़े ध्यान से देखता और हैरान होता कि वह इतने अजीब ढंग से क्यों बनाई गई है; कभी उसे इस बात पर आश्चर्य होता कि यह त्रोइकावाला और वन्यूशा, जो उसके लिए इतने पराये हैं, क्यों उसके इतने पास बैठे हैं और उसके साथ स्लेजगाड़ी में धचके खा रहे हैं, और वह फिर से कहने लगता: "बड़े प्यारे हैं, कितना प्यार है", एक बार तो वह बोल उठा: "क्या कहने हैं! बहुत खूब!" और स्वयं ही चकित हुआ कि उसने ऐसा क्यों कहा, और अपने आप से उसने पूछा: "मैं नशे में तो नहीं?" यह सच है कि उसने कोई दो बोतलें पी थीं, लेकिन मदिरा का ही उस पर यह प्रभाव नहीं पड़ रहा था। उसे यह याद आ रहा था कि चलने से पहले उसके मित्रों ने लजाते हुए, मानो अनजाने में ही मैत्री के कैसे शब्द कहे थे, उसे वे स्नेहसिक्त लगे थे। हाथों का मिलना, वे नज़रें, खामोशियां और वह स्वर, जिसने उसके स्लेज में बैठ जाने के बाद कहा था: "अलविदा, द्मीत्री!" – यह सब उसे याद आ रहा था। उसे याद आ रहा था कि स्वयं उसने कितनी दृढ़ता से दिल खोलकर बात की थी। यह सब उसे बड़ा मर्मस्पर्शी प्रतीत हो रहा था। उसके विदा होने से पहले न केवल उसके मित्रों और संबंधियों ने, न केवल उसके प्रति उदासीन लोगों ने, बल्कि उसे न चाहनेवाले, उससे द्वेष रखनेवाले लोगों ने भी – सबने मानो मिलकर यह तय कर लिया था कि उसे और भी अधिक चाहेंगे, उसे सब कुछ क्षमा कर देंगे, जैसा कि पापस्वीकृति या मृत्यु से पहले होता है। "हो सकता है, काकेशिया से लौटना मेरे भाग्य में न हो," वह सोच रहा था और उसे लग रहा था कि उसे अपने मित्रों से लगाव है तथा किसी अन्य से भी। उसे अपने आप पर दया आ रही थी। लेकिन यह मित्रों के प्रति प्रेमभाव नहीं था जिसने उसके हृदय में इतनी कोमलता और इतना भावावेश भर दिया था कि वह अपने आप मुंह से निकल रहे निरर्थक शब्दों को रोक नहीं पा रहा था। यह किसी नारी के प्रति प्रेम भी नहीं था (उसने अभी तक किसी से प्यार नहीं किया था) जो उसे इस दशा में

ले आया था। यह तो स्वयं अपने प्रति प्रेम था, आशाओं से परिपूर्ण उत्कट प्रेम, उसके हृदय में जो कुछ भी अच्छाई थी (इस क्षण उसे लग रहा था कि उसमें केवल अच्छाई ही अच्छाई है) उसके प्रति प्रेम से उद्वेलित होकर ही वह रोता और असंबद्ध शब्द बुदबुदाता जा रहा था।

ओलेनिन ऐसा युवक था, जिसने कहीं पर भी नियमित शिक्षा नहीं पाई थी, कहीं नौकरी नहीं की थी, अपनी आधी पैतृक सम्पत्ति लुटा चुका था और चौबीस वर्ष का हो जाने पर भी कोई जीवन-वृत्ति नहीं चुनी थी और कभी कोई काम नहीं किया था। वह तो बस मास्को के कुलीन समाज का नवयुवक था।

अठारह वर्ष की आयु में ओलेनिन इतना आज़ाद था, जितना कि छोटी उम्र में माता-पिता के बिना रह गये धनी नवयुवक पांचवें दशक में होते थे। उसके लिए न कोई शारीरिक बंधन था, न कोई नैतिक बंधन। वह सब कुछ कर सकता था और उसे कुछ भी करने की ज़रूरत नहीं थी और उसके लिए कोई बंदिश नहीं थी। उसका कोई परिवार नहीं था, कोई पितृभूमि नहीं थी, कोई आस्था नहीं थी, उसे कोई अभाव नहीं था। वह किसी चीज़ में विश्वास नहीं करता था और कुछ भी मानता नहीं था। लेकिन कुछ भी न मानते हुए वह मुंह लटकाये फ़लसफ़ा झाड़नेवाला युवक नहीं बन गया था, उलटे सदा किन्हीं भावावेगों में बहता रहता था। उसने तय किया कि प्रेम नहीं है, लेकिन हर बार सुंदर युवा स्त्री की उपस्थिति में उसका दिल धड़कने लगता था। वह बहुत पहले से जानता था कि उपाधियां और सम्मान सब बकवास हैं, लेकिन किसी पार्टी में जब प्रिंस सेर्गी उसके पास आता और उससे मीठी बातें करता तो वह अनचाहे ही पुलकित हो उठता। किंतु वह अपने भावावेगों में उस हद तक ही बहता था, जिस हद तक वे उसके लिए बंधन नहीं बनते थे। जैसे ही किसी कामना के वश में आकर वह अनुभव करता कि आगे कठिनाइयां आयेंगी, संघर्ष करना होगा, छोटी-छोटी बातों के लिए जूझना होगा, उसी क्षण वह अवचेतन मन से इस भावना से या इस काम से अलग होने और अपनी आज़ादी फिर से पाने की जल्दी करता। कुलीन समाज का जीवन, नौकरी, ज़मींदारी – सभी कुछ उसने इसी तरह शुरू करके छोड़ दिया। एक ज़माने में उसने अपना जीवन संगीत को समर्पित करने की सोची थी और प्रेम करने की भी, जिसमें उसका विश्वास नहीं था, कोशिश की थी। वह यह सोचता

रहता था कि यौवन की इस सारी शक्ति की, जो जीवन में एक बार ही मनुष्य में होती है, किस काम में लगाये—कला में, विज्ञान में, स्त्री से प्रेम में या व्यावहारिक कार्य में। मस्तिष्क, हृदय और ज्ञान की शक्ति को नहीं, बल्कि एक बार ही आनेवाले उफ़ान को, मानव को एक ही बार मिलनेवाले उस बल को, जिससे वह अपने आप को जो चाहे बना सकता है और जैसा कि उसे लगता है, सारे संसार को भी जो चाहे बना सकता है। हां, ऐसे भी लोग होते हैं, जो इस आवेग से वंचित होते हैं, जो जीवन में प्रवेश करते ही हाथ में पड़ा कोई भी जुआ गले में डाल लेते हैं और जीवनपर्यंत उसका बोझ ईमानदारी से ढोते हैं। लेकिन ओलेनिन को इस बात की अत्यंत तीव्र चेतना थी कि उसमें यौवन का यह सर्वशक्तिमान देवता विराजमान है, एक अभिलाषा, एक विचार में घनीभूत हो जाने की यह क्षमता उपस्थित है, चाहने और कर डालने की क्षमता है, कुछ भी सोचे-विचारे बिना अथाह गर्त में कूद पड़ने की क्षमता है। वह अपने में यह चेतना लिये था, उसे इस पर गर्व था और वह इस चेतना से सुखी था, हालांकि स्वयं उसे इसका आभास नहीं था। अभी तक वह केवल अपने आप को ही प्यार करता था और अपने आप को प्यार किये बिना रह भी नहीं सकता था, क्योंकि उसे अपने से केवल अच्छाई की उम्मीद थी और अभी अपने आप से वह निराश नहीं हो पाया था। मास्को छोड़कर जाते हुए वह उस उत्साहपूर्ण, सुखद मनोदशा में था, जब अपनी पुरानी गलतियों को समझकर युवक सहसा अपने आप से कहता है कि यह सब असली जीवन नहीं था, कि पहले जो कुछ भी हुआ वह मात्र संयोग था, उसमें कुछ भी महत्वपूर्ण नहीं था, कि पहले वह अच्छी तरह जीना नहीं चाहता था, किंतु अब मास्को छोड़ने के साथ नया जीवन आरंभ हो रहा है, जिसमें अब वे गलतियां नहीं होंगी, पश्चात्ताप नहीं होगा और शायद सुख ही सुख होगा।

जैसा कि लंबे सफ़र में सदा होता है, पहले दो-तीन स्टेशनों तक कल्पना वहीं बनी रहती है, जहां से तुम चले हो, और फिर सहसा, रास्ते में हुई पहली सुबह के साथ वह सफ़र की मंज़िल पर पहुंच जाती है और वहां भविष्य के किले बनाती है। ओलेनिन के साथ भी यही हुआ।

शहर के बाहर पहुंचकर जब उसने दोनों ओर फैले हिमाच्छादित खेत देखे तो उसे इस बात पर खुशी हुई कि वह इन खेतों के बीच अकेला है। ओवरकोट अच्छी तरह लपेटकर वह लेट गया, शांत हो गया और

ऊंघने लगा। दोस्तों से विदाई ने उसे विचलित कर दिया था, उसे मास्को में बिताया सारा आखिरी जाड़ा याद आने लगा। इस अतीत के बिंब अस्पष्ट-से विचारों और उलाहनों में घुल-मिलकर अनचाहे ही उसकी कल्पना में उभरने लगे।

उसे अपने उस दोस्त का ख़याल आया जो उसे विदा करने आया था और उस लड़की के साथ जिसकी चर्चा वे करते रहे थे, उसके संबंधों का भी। यह लड़की अमीर थी! "वह कैसे उससे प्यार कर सकता था यह जानते हुए कि वह मुझसे प्यार करती है?" वह सोच रहा था। उसके मन में कटु संदेह उठने लगा। "सोचा जाये तो लोगों में अभी कितनी बेइमानी हैं। पर मैंने अभी तक सचमुच किसी से प्यार क्यों नहीं किया?" उसके दिमाग़ में यह सवाल आया। "सभी कहते हैं कि मैंने प्यार नहीं किया। क्या मैं इतना गया-गुज़रा हूं कि इसके क़ाबिल नहीं?" और वह याद करने लगा कि किस-किस पर रीझा था। उसे कुलीन समाज में अपने पहले दिन और अपने एक दोस्त की बहन याद आई। उसके साथ मेज़ के पास बैठा वह शामें काटा करता था; मेज़ पर लैम्प जलता होता जिसकी रोशनी उसकी कढ़ाई करती कोमल उंगलियों पर और सुंदर चेहरे के निचले भाग पर पड़ती। ओलेनिन को याद आयीं वे बातें, जिनका सिलसिला बुझते-बुझते सुलग उठनेवाली आग की तरह बना रहता था, और इन शामों का अटपटापन व संकोच, इस सारे खिंचे-खिंचे वातावरण पर विद्रोह की स्थायी भावना। कोई अंतःस्वर उससे कहता रहता था: यह वह नहीं, वह नहीं; और सचमुच ऐसा ही निकला। फिर उसे बॉल-नृत्य की शाम याद आयी, जब उस सुंदरी द० के साथ वह नाचता रहा था। "मैं तो उसका बिल्कुल दीवाना हो गया था और कितना खुश था मैं उस रात! मगर अगले दिन मन कितना खीजा था, कितना दुख हुआ था मुझे यह महसूस करके कि मैं आज़ाद हूं! क्यों मेरे मन में ऐसा प्रेम नहीं जागता कि मैं सुध-बुध खो बैठूं?" वह सोच रहा था। "नहीं, नहीं होता प्रेम! वह पड़ोसिन, जो एक ही अंदाज़ में मुझ से, दुब्रोविन से और उस अफ़सर से भी यह कहती थी कि उसे तारों भरी रात कितनी अच्छी लगती है – वह भी तो वह नहीं थी।" तब उसे याद आया कि कैसे अपनी ज़मींदारी संभालने, देहात में खुद कुछ काम करने की ललक उसके मन में उठी थी, लेकिन इन यादों में भी उसके लिए हर्षदायक कुछ नहीं था। "कितने दिनों तक वे मेरे चले जाने की चर्चा करते रहेंगे?" उसे ख़याल

आया। लेकिन वे कौन हैं – यह वह नहीं जानता था। इसके साथ ही उसके दिमाग में ऐसा विचार आया जिस पर वह अनायास ही नाक-भौंह सिकोड़ने और बड़बड़ाने लगा : यह टेलरमास्टर मोस्ये कपेल की याद थी, जिसका छह सौ अठहत्तर रूबल का कर्ज़ा उसके सिर पर चढ़ा हुआ था। उसे याद आया कि किन शब्दों में उसने दर्ज़ी को मनाया था कि वह एक साल और इंतज़ार कर ले और तब दर्ज़ी के चेहरे पर हैरानी का और किस्मत के आगे सिर झुकाने का कैसा भाव अंकित था। "हे भगवान, हे भगवान!" भौंहें सिकोड़ते हुए वह कह रहा था और इस कटु विचार को भगाने का यत्न कर रहा था। "पर वह मुझसे फिर भी प्यार करती थी," वह उस लड़की के बारे में सोचने लगा जिसकी चर्चा विदाई के समय हो रही थी। "हां, अगर मैं उससे शादी कर लेता तो मेरे सिर पर कोई कर्ज़ा न होता। अब तो मैं वसील्येव का भी कर्ज़दार हूं।" और उसे वसील्येव के साथ खेल की आखिरी शाम याद आयी : अपनी उस के यहां से ही वह सीधा क्लब गया था। उसे याद आया कि कैसे वह और खेलने के लिए गिड़-गिड़ाता रहा था और वसील्येव बड़ी बेरुख़ी से इंकार करता रहा था। "बस एक साल बचत कर लूं, सारे कर्ज़े चुक जायेंगे, और तब भाड़ में जायें ये सब..." अपने इस विश्वास के बावजूद वह फिर से अपने कर्ज़े गिनने लगा, यह हिसाब लगाने लगा कि उनकी मियाद कब पूरी होती है और कब वह चुका सकेगा। "शेवल्ये के अलावा, मोरेल से भी तो उधार ले रखा है," उसे ख़याल आया और वह सारी रात उसके दिमाग में घूम गयी जब उसने इतना उधार ले लिया था। यह जिप्सियों के साथ पीने-पिलाने का क़िस्सा था, जो पीटर्सबर्ग से आये एड-डे-कैम्प साश्का ब०, प्रिंस द० और उस घमंडी बुढ़ऊ ने छेड़ा था... "क्योंकर ये लोग अपने घमंड में इतने चूर रहते हैं?" वह सोचने लगा। "क्यों इनका ख़ास दायरा है, जिसमें शामिल हो पाना, इनके ख़याल में, दूसरों के लिए बड़े मान की बात है? क्या सिर्फ़ इसलिए कि ये ज़ार के एड-डे-कैम्प हैं? तौबा! दूसरों को कितना बेवकूफ़ और नीच समझते हैं ये लोग! लेकिन मैंने भी इन्हें दिखा दिया कि मुझे इनसे दोस्ती-वोस्ती बढ़ाने की कोई परवाह नहीं है। वैसे, अगर अन्द्रेई कारिंदे को पता चले कि कर्नल और एड-डे-कैम्प साश्का ब० जैसे आदमी से मेरा बराबरी का मेल-मिलाप है तो वह कितना हैरान हो।... हां, उस रात मुझसे ज़्यादा किसी ने नहीं पी। मैंने जिप्सियों को नया गाना सिखाया और सबने वह गाना सुना। हां, बड़ी बेवकूफ़ियां

की हैं मैंने, पर फिर भी मैं बड़ा ही अच्छा नौजवान हूं," वह सोच रहा था।

ओलेनिन तीसरे स्टेशन पर था जब सुबह हुई। उसने चाय पी, वन्यूशा के साथ मिलकर अपनी पोटलियां और सूटकेस दूसरी स्लेजगाड़ी में रखे और बड़े करीने से, सीधा होकर उनके बीचोंबीच बैठ गया। उसे पता था कि क्या चीज़ कहां रखी है—कहां पैसे हैं और कितने हैं, कहां सफ़र के काग़ज़ात हैं—यह सब उसे इतने ढंग से किया गया लगा कि वह खुश हो उठा और आगे का सारा रास्ता उसे एक लंबी सैर ही प्रतीत हुआ।

सारी सुबह और आधे दिन तक वह हिसाब-किताब में लगा रहा : कितने वेर्स्ता* का सफ़र वह तय कर चुका है, अगला स्टेशन कितनी दूर है, रास्ते में पड़नेवाला पहला शहर कितनी दूर है, कितनी देर बाद वे खाने के लिए रुकेंगे, कितनी देर बाद चाय के लिए, स्ताव्रोपोल कब आयेगा और अब तक तय किया गया रास्ता कुल रास्ते का कौनसा हिस्सा है। इसके साथ-साथ वह यह हिसाब भी लगा रहा था कि उसके पास कितने पैसे हैं, कितने बचेंगे, सारे कर्ज़े चुकाने के लिए कितने पैसे चाहिए और अपनी आमदनी का कौनसा हिस्सा वह महीने में खर्च किया करेगा। शाम की चाय पी चुकने पर उसने हिसाब लगाया कि स्ताव्रोपोल तक कुल रास्ते का ७/११ रास्ता बचा है, कर्ज़े बस इतने बचे हैं कि सात महीने की बचत से और उसकी जायदाद के १/८ वें हिस्से से चुक जायेंगे। ये सारी गणनाएं करके वह शांत हो गया ओवरकोट लपेटकर स्लेज में लेट गया और फिर से ऊंघने लगा। अब उसकी कल्पना भविष्य में, कोहकाफ़ में थी। भविष्य के उसके सपनों में रोमानी उपन्यासों के नायकों, कोहकाफ़ की हूरों, पहाड़ों, खड्डों, प्रचंड जलधाराओं और जोखिमों के बिंब गुंथे हुए हैं। यह सब बहुत अस्पष्ट हैं, धूमिल हैं, लेकिन कीर्ति का प्रलोभन और मृत्यु का भय इस भविष्य को आकर्षक बनाते हैं। कभी वह असाधारण साहस और सभी को चकित करती वीरता से असंख्य पर्वतवासियों को मारकर उन्हें वशीभूत कर लेता है; कभी वह स्वयं पर्वतवासी बन जाता है और उनके साथ मिलकर अपनी आज़ादी के लिए रूसियों से लड़ता है। इन सपनों में ज्यों ही कोई ब्योरे बनने लगते हैं तो उनमें मास्को के जाने-पहचाने चेहरे होते हैं। साश्का ब० यहां रूसियों या पर्वतवासियों के साथ उसके खिलाफ़

---

* १ वेर्स्ता = १.०६ किलोमीटर। — अनु०

लड़ता है। विजेता के समारोह में पता नहीं कैसे टेलरमास्टर मोग्ये कपेल भी हिस्सा लेता है। इसके साथ यदि पुराने अपमान, कमज़ोरियां, गलतियां याद आती हैं, तो ये सब यादें मीठी ही होती हैं। यह तो बिल्कुल स्पष्ट है कि वहां पहाड़ों, तूफ़ानी जलधाराओं, हूरों और जोखिमों के बीच ये गलतियां दुबारा नहीं हो सकतीं। एक बार अपने मन में उन्हें कबूल कर लिया है, तो बस, बात ख़त्म। एक और, सबसे प्यारा सपना भी है, जो भविष्य के बारे में नौजवान के हर विचार में घुल-मिल जाता है। यह है नारी का सपना। वहां, पर्वतों के बीच हूर सरीखी एक दासी उसकी कल्पना में चली आती है—छरहरा बदन, लजीले नयन। पर्वतों के एकांत में एक कुटिया उसकी कल्पना में उभरती है, जिसकी दहलीज़ पर बैठी वह उसकी राह देख रही है और इस राह पर खून-पसीने से लथपथ, कीर्ति-पताका फहराता वह लौटता है। वह उस पर चुंबनों की बौछार करती है, वह उसके चरणों की दासी है, कितना मधुर है उसका कंठ! वह लाजवाब है, किंतु वह असभ्य है, अशिक्षित है। जाड़ों की लंबी शामों में वह उसे पढ़ाने लगता है, उसे सभ्य समाज के तौर-तरीके सिखाने लगता है। वह समझदार है, होनहार है, बुद्धिमान है, बड़ी जल्दी ही सारा आवश्यक ज्ञान पा लेती है। क्यों नहीं? वह बड़ी आसानी से भाषाएं सीख सकती है, फ़्रांसीसी साहित्य की रचनाएं पढ़ सकती है, उन्हें समझ सकती है। «Notre Dame de Paris»* तो उसे अवश्य पसंद आयेगी। वह फ़्रांसीसी बोल भी सकती है। सभ्य समाज में वह ऊंचे से ऊंचे घराने की किसी महिला से भी अधिक सहज-सुलभ गरिमा से उठ-बैठ सकती है। वह सशक्त, भावसिक्त और साथ ही इतने उन्मुक्त स्वर में गा सकती है। "हुं, क्या बकवास है!" वह अपने आप से कहता है। तभी वे किसी स्टेशन पर पहुंच जाते हैं, उन्हें एक स्लेजगाड़ी से उतरकर दूसरी पर चढ़ना है, बख़शीश देनी है। लेकिन उसकी कल्पना फिर से वह बकवास ढूंढ़ती है, जो उसने छोड़ दी है। फिर से हूरों के, कीर्ति के ख़याल आते हैं, वह नाम कमाकर रूस वापस लौटा है, उसे ज़ार का एड-डे-कैम्प बनाया गया है, कितनी सलोनी पत्नी है उसकी। "लेकिन प्रेम तो नहीं है," वह अपने आप से कहता है। "ये उपाधियां और मान-सम्मान सब बकवास हैं। लेकिन छह

---

*विक्टर ह्यूगो का उपन्यास 'पेरिस की माता मरियम का मठ'।—अनु०

सौ अठहत्तर रूबल?... और वह मेरा जीता इलाक़ा, जिसने मुझे इतनी धन-दौलत दी है कि सारी उम्र कम न पड़े? नहीं, सारी धन-दौलत का लाभ अकेले को उठाना ठीक नहीं होगा। इसे बांट देना चाहिए। पर किसे? छह सौ अठहत्तर रूबल कपेल को, बाकी देखा जायेगा..." और बिल्कुल धुंधले बिंब उसके चित्त पर छा जाते हैं, वन्यूशा की आवाज़ और गाड़ी के रुकने के एहसास से ही उसकी जवानी की गाढ़ी नींद खुलती है और वह नींद में ही नये स्टेशन पर दूसरी स्लेजगाड़ी में बैठता है और आगे चल देता है।

अगले दिन भी यही क्रम जारी रहता है – वही स्टेशन, वही चाय, घोड़ों के वही उछलते पुट्ठे, वन्यूशा के साथ वही संक्षिप्त बातें, वही अस्पष्ट सपने, ऊंघना और रात को थककर जवानी की गाढ़ी नींद सोना।

३

ओलेनिन केंद्रीय रूस से जितनी दूर जाता जा रहा था, अपनी सब यादें उसे उतनी ही दूर लग रही थीं, और काकेशिया के वह जितनी पास पहुंचता जा रहता, उतना ही उसका दिल खिलता जा रहा। "सदा के लिये चला जाऊं, कभी लौटूं न, इस कुलीन समाज का मुंह न देखूं," उसके मन में जब-तब यह विचार उठता। "ये लोग जिन्हें मैं यहां देख रहा हूं, लोग नहीं हैं। इनमें कोई भी मुझे नहीं जानता, कोई भी मास्को के उस कुलीन समाज में कभी नहीं पहुंच सकता जिसमें मेरा उठना-बैठना था, और मेरे अतीत के बारे में नहीं जान सकता। उस समाज में भी कोई नहीं जान पायेगा कि इन लोगों के बीच रहते हुए मैं क्या करता रहा हूं।" अपने अतीत से मुक्ति की एक बिल्कुल नयी भावना उस पर व्याप्त होती जा रही थी – यहां, इन अनघड़ जीवों के बीच, जो उसे रास्ते में मिल रहे थे और जो मास्को के उसके परिचितों के आगे उसे आदमी ही नहीं लगते थे। लोग उसे जितने अधिक अनघड़ लग रहे थे और सभ्यता के चिह्न जितने कम नज़र आ रहे थे, उतना ही अधिक वह अपने को स्वतंत्र अनुभव कर रहा था। स्ताव्रोपोल ने, जहां से होकर उसे गुज़रना पड़ा, उसे खिन्न कर दिया। दुकानों पर बोर्ड लगे हुए थे, कुछ तो फ़्रांसीसी में थे, कुलीन महिलाएं बग्घियों में आ-जा रही थीं, भाड़े की घोड़ागाड़ियां चौराहे पर खड़ी थीं, लंबा कोट और ऊंचा टोपा पहने एक साहब चहलकदमी कर रहा था

ग्रौर राह चलतों को सिर से पांव तक घूर रहा था – यह सब उसे चुभा। "हो सकता है, ये लोग मेरे किसी परिचित को जानते हों," उसे ख़याल ग्राया ग्रौर फिर से क्लब, टेलरमास्टर, जुग्रा, कुलीन समाज याद ग्रा गया।... लेकिन स्ताव्रोपोल के बाद सब कुछ ठीक हो गया: यहां हर चीज़ पर बीहड़ता की छाप थी ग्रौर साथ ही वह सुंदर थी, यहां सब कुछ चुनौती देता लगता था। ग्रोलेनिन की प्रसन्नता बढ़ती जा रही थी। सभी कज़्ज़ाक, गाड़ीवाले ग्रौर स्टेशन मास्टर उसे सीधे-सरल जीव लगते थे, जिनके साथ वह सहज ही बातें कर सकता था, हंसी-मजाक कर सकता था, यह सोचे बिना कि कौन किस श्रेणी का है। वे सभी मानव जात के थे ग्रौर इस पूरी जात से ग्रोलेनिन को ग्रचेतन लगाव था, वे सभी उसके साथ दोस्ताना बर्ताव कर रहे थे।

दोन कज़्ज़ाकों के इलाके में ही उन्होंने स्लेज के स्थान पर पहियोंवाली घोड़ागाड़ी ले ली थी; ग्रब स्ताव्रोपोल के बाद ठंड इतनी कम रह गयी थी कि ग्रोलेनिन को ग्रपना ग्रोवरकोट पहनने की ज़रूरत नहीं थी। यहां वसंत था – ग्रोलेनिन के लिए ग्रप्रत्याशित, हर्षमय वसंत। ग्रब रात को वह कज़्ज़ाकों का गांव छोड़कर नहीं जा सकता था। लोग कहते थे कि शाम को भी सफ़र करना खतरनाक है। वन्यूशा डरा-डरा रहने लगा था ग्रौर वे गोलियां भरी बंदूक तैयार रखते थे। ग्रोलेनिन की हर्षमय उत्तेजना ग्रौर भी ग्रधिक बढ़ गयी। एक स्टेशन मास्टर ने उन्हें कुछ दिन पहले रास्ते में हुए खौफ़नाक कत्ल का किस्सा सुनाया। रास्ते में हथियारबंद लोग दिखायी देने लगे। "तो ग्रब शुरू होता है!" ग्रोलेनिन ग्रपने से कह रहा था ग्रौर यह इंतजार कर रहा था कि कब वे हिमाच्छादित पर्वत दिखेंगे, जिनके बारे में उसने इतना कुछ सुना था। एक बार दिन ढले उनके गाड़ीवाले ने ग्रपने चाबुक से बादलों से घिरे पहाड़ों की ग्रोर इशारा किया। ग्रोलेनिन बड़ी उत्सुकता से उधर देखने लगा, लेकिन धुंधलका हो रहा था ग्रौर पहाड़ बादलों के पीछे बिल्कुल छिप ही गये थे। ग्रोलेनिन को मटमैला, सफ़ेद ग्रौर उमड़ता-घुमड़ता सा कुछ दीखा, लेकिन बहुत कोशिश करने पर भी वह पहाड़ों में ऐसी कोई ख़ूबसूरती नहीं देख पाया, जिसके बारे में उसने इतना पढ़ा-सुना था। उसे लगा कि पहाड़ ग्रौर बादल देखने में बिल्कुल एक जैसे ही हैं ग्रौर उसने सोचा कि हिमाच्छादित पर्वतों का सौंदर्य, जिसकी उसने इतनी प्रशंसा सुनी थी, वैसी ही कपोल-कल्पना है जैसे कि बाख़ का संगीत ग्रौर नारी से प्रेम, जिनमें उसका विश्वास नहीं था। सो उसने

पहाड़ों की प्रतीक्षा छोड़ दी। लेकिन अगले दिन सुबह तड़के अपनी गाड़ी में ख़ास ताजगी के एहसास से उसकी आंख खुली और एक लापरवाह-सी नज़र उसने दायीं ओर को डाली। सुबह धुली हुई थी। सहसा कोई बीस कदम दूर, पहली नज़र में उसे ऐसा लगा, उसने देखे विराट और सुकोमल, निर्मल श्वेत गिरिपिंड और उनके शिखरों व सुदूर आकाश की उड़ती-सी विचित्र रेखा। जब उसे अपने और पर्वतों व आकाश के बीच की सारी दूरी का, पर्वतों की सारी विराटता का आभास हुआ, जब उसने इस सौंदर्य की निस्सीमता अनुभव की तो वह भयभीत हो उठा कि यह मृग-तृष्णा है, स्वप्न है। उसने अपना सिर झकझोरा ताकि जग जाये। पर्वत फिर भी वैसे के वैसे ही थे।

"यह क्या है? क्या है यह?" उसने गाड़ीवाले से पूछा।

"पहाड़ हैं," गाड़ीवाले ने उदासीन स्वर में जवाब दिया।

"मैं भी बड़ी देर से इन्हें देख रहा हूं," वन्यूशा बोला। "कितने अच्छे लगते हैं! घर पर कोई विश्वास ही नहीं करेगा।"

सपाट सड़क पर त्रोइका की तेज़ चाल के कारण पहाड़ क्षितिज पर दौड़ते लगते थे। उगते सूरज की किरणों में उनके गुलाबी शिखर चमक रहे थे। पहले तो ओलेनिन को पहाड़ देखकर आश्चर्य ही हुआ, फिर खुशी हुई, लेकिन फिर ज्यों-ज्यों वह इस हिमाच्छादित पर्वत श्रृंखला को निहारता गया, जो दूसरे, काले पहाड़ों के पीछे से नहीं, सीधे मैदान में से उठ रही थी और दूरी में विलीन हो रही थी, त्यों-त्यों वह इस सौंदर्य में पैठता गया और तब वह पहाड़ों को महसूस करने लगा। इस क्षण से वह जो कुछ भी देखता, जो कुछ भी सोचता, जो कुछ भी अनुभव करता—सभी कुछ उसके लिए एक नयी, पर्वतों जैसी भव्य छाप लिये होता। मास्को की सारी यादें, शर्मिंदगी और पश्चात्ताप, कोहकाफ़ के सारे ओछे सपने—यह सब गायब हो गया और फिर लौटकर नहीं आया। "बस, अब शुरू हो गया," मानो किसी विजयोल्लासमय स्वर ने कहा। यह सड़क, दूर में नज़र आती तेरेक नदी की धारा, कज़्ज़ाकों के गांव और लोग—ये सब अब उसे कोई मज़ाक नहीं लगते थे। वह आसमान पर नज़र डालता और उसे पहाड़ याद आ जाते। अपने पर, वन्यूशा पर नज़र डालता और फिर से पहाड़ याद आ जाते। घोड़ों पर सवार दो कज़्ज़ाक जा रहे हैं, खोल में बंद बंदूकें उनकी पीठ पीछे एक ताल में झूल रही हैं, उनके घोड़ों की भूरी और लाखी टांगें झिलमिल कर रही हैं; और उधर पहाड़...

तेरेक के पार गांव से धुआं उठ रहा है; और उधड़ पहाड़... सूरज उग रहा है, सरकंडों के पीछे दिखती तेरेक पर चमचमा रहा है; और उधर पहाड़... गांव से बैलगाड़ी आ रही है, सुंदर, जवान औरतें आ-जा रही हैं; और उधर पहाड़... मैदान में बटमार घोड़े दौड़ाते फिर रहे हैं, लेकिन मैं चला जा रहा हूं, मैं उनसे नहीं डरता, मेरे पास बंदूक है, मुझमें ताकत है, जवानी है; और उधर पहाड़...

४

तेरेक तट का लगभग अस्सी वेर्स्ता लंबा वह सारा भाग, जहां ग्रेबेन कज़्ज़ाकों के गांव बसे हुए हैं, इलाके और आबादी दोनों के लिहाज़ से बिल्कुल एक जैसा है। कज़्ज़ाकों को पहाड़ी लोगों से अलग करती तेरेक नदी का पाट यहां चौड़ा है, लेकिन पानी गंदला और बहाव तेज़ ही है। अपने दायें, सरकंडों से भरे नीचे तट पर तेरेक लगातार स्लेटी रेत बिछाती जाती है और बायें तट को जो ज़्यादा ऊंचा तो नहीं लेकिन तेज़ ढलान वाला है, सदा काटती रहती है। इस बायें तट पर सौसाला बलूतों की जड़ें, सड़ते चिनार और नयी पौध नज़र आती है। दायें तट पर चेचेनों के गांव हैं। ये चेचेन अब लड़ते नहीं, तो भी कभी-कभार भड़क उठते हैं। बायें तट पर किनारे से कोई आधा वेर्स्ता हटकर एक दूसरे से सात-आठ वेर्स्ता की दूरी पर कज़्ज़ाकों के गांव हैं। पुराने ज़माने में इनमें ज़्यादातर गांव बिल्कुल नदी किनारे ही थे, लेकिन तेरेक ने हर साल पहाड़ों से उत्तर को हटते हुए इनकी ज़मीन काट दी और अब वहां झाड़-झंखाड़ भरे पुराने गांव, बगीचे, नाशपाती और अलूचे के पेड़, जिनके बीच बेरियों की झाड़ियां और जंगली हो गई अंगूर की बेलें फैली हुई हैं, दिखायी देते हैं। वहां अब कोई नहीं रहता, बस रेत पर हिरनों, भेड़ियों, खरगोशों और फ़ेज़ेंटों की, जिन्हें ये जगहें भा गयी हैं, निशान ही नजर आते हैं। एक गांव से दूसरे गांव तक जंगल काटकर तीर-सा सीधा रास्ता बनाया गया है। रास्ते में चौकियां हैं, जहां कज़्ज़ाक तैनात रहते हैं और चौकियों के बीच बुर्जियों पर कज़्ज़ाक पहरा देते हैं। कोई सात सौ गज़ चौड़ी उपजाऊ ज़मीन की पट्टी ही कज़्ज़ाकों के पास है। इस संकरी पट्टी के उत्तर में नोगाई या मोज़्दोक स्तेपी के बालुई टीले शुरू हो जाते हैं। दूर उत्तर में कहीं यह स्तेपी तुर्खमेन, अस्तरख़ान और किर्गिज़-कायसाक स्तेपियों में जा

मिलती है। तेरेक के पार दक्षिण में विशाल चेचन्या पहाड़, कोचकालीक पर्वतमाला, काले पहाड़ तथा और भी कोई शृंखला है और अंततः हिमाच्छादित पर्वत हैं, जो केवल दिखायी ही देते हैं, लेकिन जहां अभी तक कोई नहीं गया है। इस उपजाऊ, जंगलों भरी पट्टी पर, जहां खूब पेड़-पौधे उगते हैं, न जाने कब से, लड़ाकू, सुंदर और सम्पन्न पुरातनपंथी रूसी रहते हैं, जो ग्रेबेन कज़्ज़ाक कहलाते हैं।

बहुत पहले उनके पुरातनपंथी पूर्वज रूस से भागकर आये थे और तेरेक के पार चेचेन लोगों के बीच बस गये थे – ग्रेबेन पर, जो वनाच्छादित विशाल चेचन्या पहाड़ों की पहली पर्वतमाला है। चेचेनों के बीच रहते हुए कज़्ज़ाक उनके साथ शादी-ब्याह करने लगे और उन्होंने इन पर्वतवासियों के रहन-सहन का ढंग, इनके रीति-रिवाज और तौर-तरीके अपना लिये; लेकिन वहां भी इन्होंने अपनी रूसी भाषा की और अपने धर्म की शुद्धता बनाये रखी। कज़्ज़ाकों में आज तक यह किंवदंती प्रचलित है कि ज़ार इवान रौद्र तेरेक पर आया था, उसने ग्रेबेन से कज़्ज़ाकों के सरदारों को बुलवाया था और उन्हें नदी के इस ओर ज़मीनें बख़्शी थीं, उन्हें मनाया था कि वे रूस के साथ मेल-मिलाप रखें और वायदा किया था कि वह उन्हें न अपना राज मानने को मजबूर करेगा और न ही धर्म बदलने को। आज भी कज़्ज़ाक घरानों में चेचेनों के साथ रिश्ता माना जाता है। स्वच्छंदता, मौज-मस्ती, लूट-पाट और लड़ाई का शौक कज़्ज़ाकों के चरित्र के प्रमुख लक्षण हैं। रूस का प्रभाव यहां बुरे पहलू से ही नज़र आता है: कज़्ज़ाकों के सरदार चुनने के मामले में दखल होता है, सज़ा के तौर पर गिरजों के घंटे उतार लिये जाते हैं और रूसी फ़ौजें कज़्ज़ाकों के इलाके से गुज़रती हैं, यहां डेरा डालती हैं।

कज़्ज़ाक उस पर्वतवासी जिगीत* से इतनी नफ़रत नहीं करता, जिसने शायद उसके भाई को मार डाला है, जितनी रूस से आये उस सिपाही से, जो उसके गांव की रक्षा करने के लिए उसके घर में डेरा डाले हुए है, मगर जिसने सारे घर में तम्बाकू की बू फैला दी है। वह अपने पर्वतवासी शत्रु का आदर करता है, लेकिन रूसी सिपाही को हिकारत से

---

*काकेशिया और मध्य एशिया में प्रचलित यह शब्द घुड़सवारी में और तलवार, बंदूक चलाने में निपुण, निर्भीक, साहसी, बांके नौजवान के लिए प्रयुक्त होता है। – अनु०

देखता है, जो उसके लिए बेगाना है, अत्याचारी है। वास्तव में कज्ज़ाक की नज़रों में रूसी किसान एक पराया, वहशी, हेय जीव है, जिसका नमूना वह कज्ज़ाक गांवों में आनेवाले बिसातियों में देखता है। उसके लिए छैलापन चेर्केसों की नकल करने में है। सबसे अच्छे हथियार वह पहाड़वालों से पाता है, सबसे अच्छे घोड़े भी उन्हीं से खरीदता और चुराता है। बांका कज्ज़ाक तातार भाषा का अपना ज्ञान दिखाने में अपनी शेखी समझता है, और नशे में आकर वह अपने कज्ज़ाक भाईबंद के साथ भी तातार भाषा बोलता है।

इस सबके बावजूद संसार के एक कोने में आ पड़ी, अर्द्धबर्बर मुस्लिम क़बीलों और सिपाहियों से घिरी यह ईसाई आबादी अपने को बहुत विकसित मानती है और केवल कज्ज़ाक को ही आदमी समझती है; बाकी सब उसके लिए तुच्छ हैं। कज्ज़ाक ज़्यादातर समय चौकी पर, मुहिम पर या शिकार करने और मछली मारने में बिताता है। वह प्रायः कभी भी घर पर काम नहीं करता। उसका घर पर होना अपवाद है, और तब वह मौज मनाता है। सभी कज्ज़ाक अपनी हल्की अंगूरी बनाते हैं, नशा यहां सबकी लत नहीं, एक अनुष्ठान है, जिसे पूरा न करना विधर्मी हो जाने के समान है। औरत को कज्ज़ाक अपनी खुशहाली का साधन मानता है; कुंआरी लड़कियां ही मन-बहलाव कर सकती हैं। शादीशुदा औरत से तो वह जवानी से बुढ़ापे तक अपने लिये काम कराता है और उससे यह उम्मीद रखता है कि वह उसका हुक्म कबूल करे। औरतों के लिए ऐसे रुख़ का नतीजा यह है कि औरतों का शारीरिक और मानसिक विकास तेज़ होता है, और यों देखने में, पूरब की सभी औरतों की भांति वे भले ही पुरुष के अधीन होती हैं, लेकिन घर-गृहस्थी में उनका प्रभाव और महत्व पश्चिमी औरतों से कहीं अधिक होता है। सामाजिक जीवन से दूर रहने और मरदों का भारी काम करने की अभ्यस्त होने के कारण परिवार में औरत का महत्व और भी अधिक होता है। कज्ज़ाक दूसरों के सामने तो अपनी औरत से प्यार से या बिना ज़रूरत के बात करना अशिष्टता मानता है, लेकिन उसके साथ अकेले में वह अनचाहे ही उसकी श्रेष्ठता महसूस करता है। उसका मकान, उसका सारा सामान, सारा घरबार ही औरत के श्रम से ही हासिल किया गया है और वही इसे संजोये हुए है। उसे इस बात में पूरा विश्वास भले ही है कि काम करने में कज्ज़ाक की हेठी होती है, कि काम करना तो बस नोगाई नौकर और औरत को ही शोभा देता है, लेकिन इस बात का भी

उसे धुंधला-सा ग्राभास है कि वह सब जिसका वह इस्तेमाल करता है और जिसे अपना कहता है, वह इस श्रम की ही उपज है, और उसकी मां या पत्नी के ही, उस औरत के जिसे वह अपनी बांदी समझता है, हाथ में यह है कि उसे उसके सारे सुखों से वंचित कर दे। इसके अलावा आये दिन के कठोर, मर्दोंवाले परिश्रम और उसके कंधों पर पड़े चिंताओं के बोझ ने ग्रेबेन की औरत का चरित्र विशेषतः आज़ाद, मर्दानगी भरा बना दिया है, उसके शारीरिक बल, सहज बुद्धि, संकल्प और चरित्र की दृढ़ता को आश्चर्यजनक ढंग से विकसित कर दिया है। ज़्यादातर औरतें कज़्ज़ाकों से अधिक बलवान, अधिक बुद्धिमान, अधिक विकसित और अधिक सुंदर हैं। ग्रेबेन की औरत की खूबसूरती में सच्चे चेर्केस चेहरे का उत्तरी औरत के सुडौल, शक्तिशाली गठन के साथ आश्चर्यजनक सुमेल हुआ है। कज़्ज़ाक औरतें चेर्केसों का पहनावा पहनती हैं: तातार कमीज़, बेशमेत* और जूतियां; लेकिन सिर पर रूमाल वे रूसी ढंग से ही बांधती हैं। खुद चुस्त-दुरुस्त और सज-संवरकर रहना और घर को भी करीने से साफ़-सुथरा रखना उनकी आदत है, उनके जीवन की आवश्यकता है। मर्दों के मामले में औरतों को, खास तौर पर कुंआरी लड़कियों को पूरी आज़ादी है। नोवोम्लीन्स्कया गांव ग्रेबेन कज़्ज़ाकों का गढ़ है। यहां पुराने ग्रेबेन कज़्ज़ाकों के रीति-रिवाज दूसरे गांवों से अधिक अच्छी तरह बने रहे हैं और इस गांव की औरतें भी पुराने ज़माने से अपनी खूबसूरती के लिए सारे कोहकाफ़ में मशहूर रही हैं। अंगूर और दूसरे फल, तरबूज़ और कद्दू उगाकर, मछली पकड़कर और शिकार करके, मकई और बाजरा उगाकर और लड़ाई में माल हासिल करके कज़्ज़ाकों का निर्वाह होता है।

नोवोम्लीन्स्कया गांव तेरेक से लगभग तीन वेर्स्ता दूर है, उनके बीच घना जंगल है। गांव से गुज़रती सड़क के एक ओर नदी है, दूसरी ओर अंगूर की बेलें और फलों के बाग हैं, जिनके पीछे नोगाई स्तेपी के बालुई टीले दिखाई देते हैं। गांव परकोटे और कंटीली झाड़ियों से घिरा हुआ

---

*बेशमेत – स्त्रियों का पूरा बांहों का और बंद गले का कमर तक लंबा चोली जैसा पहनावा, जो कमीज़ के ऊपर पहना जाता था। मर्दों का बेशमेत ऊंचे गले की कमीज़ जैसा होता था, जिसके ऊपर चेर्केस कोट पहना जाता था। यह कोट बिना कालर का, सामने से कमर तक खुला होता था। अचकन की तरह कमर पर यह सटा होता था और उससे नीचे खुला। – अनु०

है। उसमें जाने और उसमें से निकलने के रास्ते पर एक फाटक है। यह ऊंचे खंभों पर बना हुआ है और इसके ऊपर सरकंडों से छजी छत है। फाटक के पास लकड़ी की तोपगाड़ी पर एक पुरानी बदशक्ल-सी तोप रखी हुई है, जो कभी कज़्ज़ाकों ने जीती थी और जो सौ साल से दाग़ी नहीं गयी है। वर्दी पहने, बंदूक़ और तलवार धारण किये कज़्ज़ाक कभी यहां पहरा देता है, कभी नहीं देता; कभी वह यहां से गुज़रते अफ़सर को सलामी देता है और कभी नहीं देता। फ़ाटक की छत तले सफ़ेद पटरे पर काली स्याही से लिखा है: घर २६६, मरद ८९७, औरतें १०१२। कज़्ज़ाकों के सभी मकान खंभों पर ज़मीन से गज़ भर ऊपर उठे हुए हैं, सफ़ाई से लिपे-पुते और सरकंडों से छाजे गये हैं। सभी मकान यदि नये नहीं हैं तो भी उनकी दीवारें सीधी हैं, मकान साफ़-सुथरे हैं, सबके ओसारे अलग-अलग तरह के हैं। मकान एक दूसरे से सटे नहीं हुए हैं, बल्कि उनके इर्द-गिर्द काफ़ी ज़मीन है और वे खुली सड़कों-गलियों के दोनों ओर सुंदर ढंग से बने हुए हैं। बहुत से घरों की बड़ी-बड़ी, उजली खिड़कियों के सामने, बाड़ों के पार गहरे हरे पाप्लर वृक्ष सिर ऊंचा उठाये खड़े हैं, महकते सफ़ेद फूलों वाले बबूल उग रहे हैं और पास ही चटक पीले सूरजमुखी वेझिझक खिले हुए हैं, अंगूर की और दूसरी बेलें फैली हुई हैं। खुले चौक पर तीन दुकानें हैं। यहां कपड़े, मिठाइयां और बीज बिकते हैं। ऊंचे जंगले के पार, पुराने पाप्लर वृक्षों के पीछे दूसरे सभी मकानों से बड़ा व ऊंचा रेजिमेंट कमांडर का मकान दिखायी देता है, जिसकी खिड़कियों पर झिलमिलियां लगी हुई हैं। गांव की गलियों में, खास तौर पर गर्मियों के दिनों में लोग बहुत कम ही नज़र आते हैं। कज़्ज़ाक मर्द चौकियों पर ड्यूटी दे रहे हैं या मुहिम पर गये हुए हैं; बूढ़े शिकार पर या मछली पकड़ने निकल गये हैं या औरतों के साथ बागों-क्यारियों में काम करा रहे हैं। बिल्कुल बूढ़े, नन्हे और बीमार ही घर पर हैं।

५

शाम का वह ख़ास समां है, जैसा केवल काकेशिया में होता है। सूरज पहाड़ों के पीछे छिप गया है, लेकिन अभी उजाला है। सांझ की लाली एक तिहाई आकाश पर छायी हुई है। बुझी-बुझी सफ़ेदी लिये पहाड़ों की विशालता इस उजले आकाश पर उभर आयी है। विरल पहाड़ी हवा

ठहरी हुई है और उसमें खनक है। पहाड़ों की मीलों लंबी छाया मैदान पर फैली हुई है। मैदान में, नदी के उस पार और रास्तों पर कहीं कोई नहीं है। विरले ही कहीं कोई घुड़सवार नज़र आते हैं, तो चौकियों पर कज़्ज़ाक और अपने गांवों में चेचेन लोग आश्चर्य व कौतूहल से घुड़सवारों को देखते हैं और यह अनुमान लगाने की कोशिश करते हैं कि ये दुर्जन कौन हैं। सांझ घिरते ही लोग एक दूसरे से डरते हुए अपने-अपने घर की राह पकड़ते हैं, पशु-पक्षी ही इस वीराने में निर्भय विचरते हैं। हंसी-ठिठोली करती कज़्ज़ाक औरतें सूरज डूबने से पहले-पहले बागों से चल देती हैं, जहां वे अंगूर की बेलें काटती-छांटती रही हैं। आस-पास के सारे इलाके की ही तरह बाग भी सूने हो जाते हैं; लेकिन गांव में इस समय खूब चहल-पहल होती है। पैदल, घुड़सवार और चरचराती बैलगाड़ियों पर सवार लोग चारों ओर से गांव को चले आते हैं। लंहगा समेटे, छड़ी पकड़े लड़कियां हंसती-बतियाती हुई गांव के फाटक को जाती हैं, जहां ढोर-डंगर जमा हो रहे हैं। वे धूल के बादलों और झुंड के झुंड मच्छरों से घिरे हैं, जिन्हें मैदान से अपने पीछे-पीछे ले आये हैं। तगड़ी गाय-भैंसें गलियों में बढ़ जाती हैं, रंग-बिरंगे बेशमेत पहने कज़्ज़ाक लड़कियां उनके बीच भागती-दौड़ती नज़र आती हैं। उनकी तेज़ आवाज़ें, खिलखिलाहट और किलकारियां सुनायी देती हैं और उनके बीच-बीच में गाय-भैंसों के रंभाने की आवाज़ आती है। उधर, चौकी से छुट्टी लेकर, हथियारों से लैस एक कज़्ज़ाक घोड़े पर सवार चला आता है, घर के पास पहुंचकर खिड़की की ओर झुकता है, उस पर दस्तक देता है, जिस पर वहां सलोनी कज़्ज़ाक औरत का सिर दिखायी देता है और प्यार भरे, मुस्कराते शब्द सुनायी देते हैं। उधर फटे-पुराने कपड़े पहने चौड़े मुंह वाला नोगाई कमेरा स्तेपी से सरकंडे लाया है, वह चरचराती बैलगाड़ी कज़्ज़ाकों के कप्तान के खुले और साफ़ अहाते में मोड़ता है और सिर हिलाते बैलों की गर्दन से जुआ उतारता है, अपनी तातार बोली में मालिक से चिल्ला-चिल्लाकर कुछ बातें करता है। एक औरत पीठ पर लकड़ियों का गट्ठर लादे, अपना लहंगा ऊपर उठाये, गोरी टांगें उघाड़े उस डबरे के पास से गुज़र रही है, जो हर साल गली के आर-पार यों फैल जाता है कि बाड़ से सट-सटकर ही वहां से निकला जा सकता है। शिकार से लौट रहा कज़्ज़ाक उसे देखकर चिल्लाता है: "और ऊपर उठा ले, बेशर्म," और उसकी ओर निशाना लगाता है, औरत लहंगा छोड़ देती है और उसका गट्ठर गिर पड़ता है। सफ़ेद बालों से भरी

छाती खोले एक बूढ़ा कज़्ज़ाक पतलून ऊपर चढ़ाये मछली के शिकार से लौट रहा है, वह कंधे पर जाल उठाये है, जिसमें रुपहली मछलियां अभी भी कुलबुला रही हैं। अपना रास्ता छोटा करने के लिए वह पड़ोसी की टूटी हुई बाड़ लांघता है और फिर बाड़ में फंस गया कोट छुड़ाता है। उधर कोई औरत एक सूखी डाल घसीटे लिये जा रही है और फिर नुक्कड़ के पीछे से कुल्हाड़ी की आवाज़ आती है। गलियों में जहां कहीं थोड़ी सी सपाट जगह है वहां बच्चे शोर मचाते लट्टू घुमा रहे हैं। चक्कर लगाने से बचने के लिए जगह-जगह औरतें बाड़ लांघती नज़र आती हैं। सभी धुआरों से उपलों के धुएं की महक उठ रही है। हर आंगन में रात की खामोशी से पहले की हलचल हो रही है।

पाठशाला के अध्यापक कज़्ज़ाक कार्नेट* की पत्नी उलीत्का बीबी दूसरी औरतों की ही तरह अपने आंगन के फाटक पर आ खड़ी हुई है, ढोरों की राह देख रही है, जिन्हें उसकी लड़की मर्यान्का गली में खदेड़े ला रही है। वह टट्टर हटा भी नहीं पाती है कि भारी-भरकम भैंस मच्छरों के झुंड में लिपटी, रंभाती हुई अंदर घुस आती है; उसके पीछे तगड़ी गउएं धीमी चाल से चली आती हैं, उनकी बड़ी-बड़ी आंखें मालकिन को पहचानती हैं, पूंछें बगलों से मक्खियां उड़ाती हैं। सुघड़ सुंदर मर्यान्का फाटक से अंदर आती है, संटी फेंककर बाड़ का टट्टर बंद करती है और अपनी फुर्तीली टांगों की पूरी रफ़्तार से दौड़ती जाती है—ढोरों को अलग-अलग करने, अपने-अपने थान पर बंद करने। "अरी, शैतान की औलाद, जूतियां तो उतार ले," उसकी मां चिल्लाती है। "सारी जूतियां घिसा डालेगी!" मर्यान्का को शैतान की औलाद कहा जाना ज़रा भी बुरा नहीं लगता, वह इन शब्दों को लाड़ ही समझती है और मज़े से अपना काम करती रहती है। मर्यान्का का चेहरा सिर पर बंधे रूमाल में छिपा हुआ है, वह गुलाबी कमीज़ और हरा बेशमेत पहने है। हट्टे-कट्टे ढोरों के पीछे वह छप्पर तले छिप जाती है और भैंस को प्यार से मनाती उसकी आवाज़ वहां से आती है: "खड़ी हो जा न! कैसी है तू! मान जा, मैया, मान जा! ..." थोड़ी देर में लड़की और बुढ़िया छप्पर में से कोठरी में जाती हैं, वे दो बड़े मटके उठाये हैं—यह आज का दूध है। कोठरी के मिट्टी के धुआंरे से जल्दी ही उपलों का धुआं उठने लगता है—दूध काढ़ा जा

---

*कज़्ज़ाकों में सबसे छोटा अफ़सर पद।—अनु०

रहा है; लड़की चूल्हा जलाती है, उसकी मां फाटक पर जाती है। गांव में झुटपुटा छा गया है। हवा में सब्ज़ियों, ढोरों और उपलों के धुएं की गंध फैली हुई है। फाटकों के पास गलियों में जलते चीथड़े लिये कज़्ज़ाक औरतें इधर-उधर दौड़ती नजर आती हैं। अहाते से दोही जा चुकी गउओं और भैंसों की शांत जुगाली सुनायी देती है। अहातों-गलियों में औरतों और बच्चों की ही बातें करने की आवाज़ें आती हैं। काम के दिनों में मरद की नशे भरी आवाज़ कम ही सुनायी पड़ती है।

सामने के अहाते से ऊंचे कद की मर्दानी बूढ़ी औरत उलीत्का बीबी से आग मांगने आती है; उसके हाथ में चीथड़ा है।

"क्यों बीबी, निबट लीं?" वह पूछती है।

"लड़की चूल्हा जला रही है। आग चाहिये क्या?" उलीत्का बीबी कहती है। उसे इस बात पर गर्व है कि वह पड़ोसिन के लिए कुछ कर सकती है।

दोनों औरतें घर में जाती हैं, गंठीले हाथ, जो छोटी-छोटी चीज़ों को पकड़ने के आदी नहीं हैं, कांपते हुए दियासलाई की अमूल्य डिबिया का ढकना उतारते हैं। यहां काकेशिया में दियासलाई विरली चीज़ है। मर्दानी पड़ोसिन दहलीज़ पर बैठ जाती है–दो बातें करने के साफ़ इरादे से।

"क्यों, बीबी, तुम्हारा मनई, पाठशाला में ही है?" पड़ोसिन पूछती है।

"हां, बच्चों को पढ़ाने में ही लगा रहता है। लिखा था त्योहार पर आयेगा," कार्नेट की पत्नी जवाब देती है।

"होशियार आदमी है; सब भले की ही बात है।"

"सो तो है ही, भले की ही बात है।"

"मेरा लुकाश्का तो चौकी पर है, घर नहीं आने देते," पड़ोसिन कहती है, हालांकि उलीत्का बीबी यह सब कब से जानती है। वह अपने लुकाश्का की बातें करना चाहती है, जिसे उसने अभी कज़्ज़ाक रेजिमेंट में भेजा ही है और जिसका ब्याह वह कार्नेट की बेटी मर्यान्का से करना चाहती है।

"चौकी पर ही है?"

"हां, बीबी, चौकी पर ही है। त्योहार के दिन से नहीं आया। उस रोज़ फ़ोमुश्किन के हाथ कुछ कमीज़ें भेजी हैं। कहता था, अफ़सर उससे

ख़ुश हैं। बता रहा था कि अबरेकों को ढूंढ रहे हैं। लुकाश्का भी, कहता था, मज़े में है।"

"शुक्र है भगवान का," कार्नेट की पत्नी कहती है। "सचमुच झपट्टू है।"

लुकाश्का का नाम झपट्टू इसलिये पड़ गया है, कि उसने बहादुरी दिखाई थी, झपटकर डूबते लड़के को नदी में से निकाल लिया था। लुकाश्का की मां का जी खुश करने के लिए कार्नेट की पत्नी ने इसकी याद दिलायी है।

"मैं तो भगवान की शुक्रगुज़ार हूं, बीबी, लड़का अच्छा है, सभी तारीफ़ करते हैं," लुकाश्का की मां कहती है। "बस इसका ब्याह कर दूं तो फिर चैन से मर सकती हूं।"

"गांव में लड़कियां कम हैं क्या?" अपने गंठीले हाथों से बड़े जतन से डिबिया पर ढकना चढ़ाते हुए चालाक उलीत्का बीबी जवाब देती है।

"बहुत हैं, बीबी, बहुत हैं," लुकाश्का की मां सिर हिलाते हुए कहती है, "तुम्हारी मर्यान्का ऐसी तो सारे इलाके में नहीं है।"

उलीत्का बीबी लुकाश्का की मां के मन की बात जानती है, लुकाश्का उसे अच्छा कज़्ज़ाक भी लगता है, मगर वह इस बातचीत को टालती है। एक तो इसलिए कि वह कार्नेट की पत्नी है, अमीर है, जबकि लुकाश्का मामूली कज़्ज़ाक का बेटा है, अनाथ है। दूसरे इसलिए कि वह अभी अपनी बेटी से जुदा नहीं होना चाहती। सबसे बड़ी बात यह है कि लोक-मर्यादा का यह तकाज़ा है।

"हां, मर्याना भी बड़ी होगी, तो इसका भी ब्याह रचाना ही होगा," वह गंभीर और नरम स्वर में कहती है।

"रिश्ता मांगने आयेंगे, ज़रूर आयेंगे। बस बगीचों का काम समेट लें, फिर तुम्हारे आगे सीस नवायेंगे," लुकाश्का की मां कहती है। "इल्या वसील्येविच के आगे सीस नवायेंगे।"

"इल्या की खूब कही," कार्नेट की पत्नी सगर्व उत्तर देती है। "बात तो मुझसे करनी होगी। हर काम की अपनी बेला होती है।"

लुकाश्का की मां पड़ोसिन के चेहरे के सख़्ती भरे भाव से समझ जाती है कि आगे बात चलाना ठीक नहीं, वह दियासलाई से चीथड़ा जलाती है और उठते हुए कहती है: "अच्छा, बीबी, मुकरना नहीं। अपनी बात याद रखना। चलूं, चूल्हा जलाना है।"

हाथ में जलता चीथड़ा झुलाते हुए वह गली पार करती है। वहां मर्यान्का मिलती है, जो उसे देखकर सिर झुकाती है।

"कैसी सलोनी है, कमेरी लड़की है," सुंदरी को देखते हुए वह सोचती है। "और कितनी बड़ी होगी? अब तो इसे ब्याहना चाहिए, अच्छे घर में। लुकाश्का ही इसके जोड़ का है।"

उलीत्का बीबी की अपनी चिंताएं हैं, वह दहलीज़ पर बैठी रहती है, किसी ख़याल में डूबी रहती है, जब तक कि बेटी उसे पुकारती नहीं।

६

गांव के मर्द मुहिमों पर निकले रहते थे या चौकी पर रहते थे। वही लुकाश्का जिसकी बातें गांव में औरतें करती रही थीं, तीसरे पहर नीज़्ने-प्रोतोत्स्की चौकी की बुर्जी पर खड़ा था। यह चौकी तेरेक के तट पर ही थी। बुर्जी की बाड़ पर कोहनियां टिकाये वह आंखें सिकोड़कर कभी तेरेक के पार दूर तक नज़र दौड़ा रहा था और कभी नीचे अपने साथी कज़्ज़ाकों को देख रहा था। कभी-कभार वह उनसे कुछ बात कर लेता था। सूरज उस हिमाच्छादित शृंखला के पास पहुंच रहा था, जो लहरदार बादलों के ऊपर चमक रही थी। उसके कदमों में उमड़ते-घुमड़ते बादल काले पड़ते जा रहे थे। संध्याकालीन हवा अधिकाधिक पारदर्शी होती जा रही थी। वीहड़ जंगल से ताज़गी उठ रही थी लेकिन चौकी के पास अभी गर्मी थी। बतियाते कज़्ज़ाकों की आवाज़ें पहले से अधिक गूंज रही थीं, हवा में तिरती प्रतीत होती थीं। तेरेक की मटमैली जलराशि की गति निश्चल तटों के बीच अधिक तेज़ लग रही थी। नदी का पानी उतरने लगा था और कहीं-कहीं तटों पर या चाकी पर गीली रेत उभर आयी थी। चौकी के ऐन सामने नदी का दूसरा तट बिल्कुल सूना था; बस छोटे-छोटे सूने सरकंडे ही पहाड़ों तक चले गये थे। थोड़ा एक ओर को हटकर नीचे तट पर चेचेन गांव के कच्चे मकान, उनकी सपाट छतें और कुप्पीनुमा धुआंरे दीख पड़ते थे। लाल-नीले कपड़े पहने चेचेन औरतों की आकृतियां दूर से इस शांत गांव में चलती-फिरती दिख रही थीं। बुर्जी पर खड़े कज़्ज़ाक की तेज़ नज़रें शाम के धुएं के पीछे इन आकृतियों पर लगी हुई थीं।

कज़्ज़ाकों को अंदेशा था कि किसी भी घड़ी अबरेक* नदी पार करके हमला कर सकते हैं, खास तौर पर अब मई के महीने में, जब तेरेक के किनारे जंगल इतना घना होता है कि पैदल आदमी का भी उसमें से गुज़रना मुश्किल होता है और नदी इतनी उथली होती है कि उसे हलकर पार किया जा सकता है। एक कज़्ज़ाक दो दिन पहले रेजिमेंट कमांडर की गश्ती चिट्ठी भी लाया था जिसमें लिखा था कि टोहियों से मिली ख़बर के मुताबिक आठ लोगों का गिरोह तेरेक पार करने का इरादा रखता है, इसलिए यह हुक्म दिया गया था कि ख़ास सावधानी बरती जाये। लेकिन इस सबके बावजूद चौकी पर कोई सावधानी नहीं बरती जा रही थी। कज़्ज़ाकों ने न शस्त्रास्त्र धारण कर रखे थे, न उनके घोड़ों पर ज़ीनें कसी हुई थीं। वे ऐसे रह रहे थे जैसे कि घर पर हों, कोई मछली पकड़ रहा था, कोई पीने में मशगूल था, कोई शिकार पर निकला हुआ था। हां, ड्यूटी पर जो कज़्ज़ाक था उसके घोड़े पर ही ज़ीन कसी हुई थी। छंदा हुआ यह घोड़ा जंगल के पास कंटीली झाड़ियों में चर रहा था। संतरी ही अपना चेर्केस कोट पहने और बंदूक व तलवार लिये था। एक दुबला-पतला कज़्ज़ाक, जिसकी पीठ बहुत ही लंबी और बांहें-टांगें छोटी थीं, ब्रेशमेत के बटन खोले चबूतरे पर बैठा था। यह हवलदार था, उसके चेहरे पर अफ़सराना आलस और ऊब का भाव था। आंखें मूंदे वह अपना सिर कभी एक हाथ पर टिका रहा था, कभी दूसरे पर। खूब फैली हुई खिचड़ी दाढ़ी वाला अधेड़ कज़्ज़ाक कमीज़ पर चमड़े की काली पेटी बांधे नदी किनारे लेटा हुआ था और अलसाया-सा उफनती, मोड़ काटती धारा को देख रहा था। दूसरे कज़्ज़ाक भी गर्मी से क्लांत अधनंगे थे – कोई नदी में कपड़े खंगाल रहा था, कोई लगाम की डोरी बट रहा था, कोई नदी तट की गरम रेत पर लेटा कुछ गुनगुना रहा था। धूप से स्याह पड़े पतले चेहरे वाला एक कज़्ज़ाक झोंपड़े की एक दीवार के पास नशे में धुत्त चारों खाने चित्त पड़ा हुआ था; जिस दीवार के पास वह लेटा हुआ था, वहां दो घंटे पहले तो छाया थी, मगर अब झुलसाती तिरछी किरणें पड़ रही थीं।

बुर्जी पर खड़ा लुकाश्का बीसेक साल का ऊंचा तगड़ा जवान था। उसकी शक्ल-सूरत मां से बहुत मिलती-जुलती थी। उसके चेहरे से और सारे

---

*तेरेक के इस पार रूसी इलाके में चोरी या लूटपाट करने के लिए आनेवाले चेचेन को कज़्ज़ाक अबरेक कहते थे। – ले०

शरीर के गठन से जवानी की अनघड़ता के बावजूद अपार शारीरिक और नैतिक शक्ति का आभास होता था। हालांकि उसे भरती हुए ज्यादा समय नहीं हुआ था, फिर भी उसके चेहरे का हाव-भाव, उसकी मुद्रा से छलकता आत्मविश्वास यह साफ़ बताता था कि उसने कज़्ज़ाकों की और आम तौर पर हथियार साथ लेकर चलनेवाले लोगों की ख़ास जुझारू और कुछ-कुछ गर्वीली ठवन ग्रहण कर ली है, कि वह कज़्ज़ाक है और अपनी सच्ची क़द्र जानता है। उसका खुला चेर्केस कोट एक दो जगह से फटा हुआ था, टोपी उसने चेचेनों की तरह पीछे को सरका रखी थी। उसकी वेशभूषा शानदार नहीं थी, लेकिन वह उस पर उस खास कज़्ज़ाक ठसक के साथ बैठी हुई थी, जो चेचेन जिगीतों की नकल करने से आती है। सच्चा जिगीत अपने कपड़ों की परवाह नहीं करता, वे ढीले-ढाले और फटे-पुराने होते हैं, बस उसके हथियार ही कीमती होते हैं। लेकिन ये फटे-पुराने वस्त्र और ये हथियार एक ख़ास ढंग से बंधे होते हैं, इन्हें पहनने का, धारण करने का ख़ास तरीका है जो हर किसी को नहीं आता और जिसे हर कज़्ज़ाक या पर्वतवासी तुरंत पहचानता है। लुकाश्का का रूप-रंग बिल्कुल ऐसा ही जिगीतोंवाला था। तलवार के पीछे हाथ बांधे वह आंखें सिकोड़कर दूर के गांव को देखता जा रहा था। अलग-अलग देखने पर उसके नयन-नक्श इतने सुघड़ नहीं थे, लेकिन उसके रोबीले गठन और काली भौंहों-वाले चेहरे पर, जो बुद्धिमता की छाप लिये था, एकसाथ नज़र डालते ही कोई भी अनचाहे कह उठता: "वाह, क्या बांका जवान है!"

"औरतें तो देखो कितनी निकल पड़ी हैं!" अपने चमचमाते सफ़ेद दांतों को अलसाये भाव से उघाड़ते हुए उसने तेज़ आवाज़ में कहा। यह बात उसने किसी को संबोधित करके नहीं कही थी, लेकिन नीचे लेटे नज़ारका ने तुरंत ही सिर उठाया और बोला:

"पानी लेने चली होंगी।"

"बंदूक चलाके डरा दूं तो?" लुकाश्का ने हंसते हुए कहा। "क्या भगदड़ मचेगी!"

"वो तो सुनेंगे ही नहीं।"

"अजी हां! उससे भी दूर तक सुनेंगे। देखते रहना, इनका त्योहार आयेगा तो मैं गिरेइ-ख़ान के यहां जाऊंगा, बुज़ा* पीने," लुकाश्का ने

---

*बाजरे की बनी तातार बीयर। – ले०

कहा और चिपटते जा रहे मच्छरों से छुटकारा पाने के लिए गुस्से से हाथ हिलाने लगा।

झुरमुट में हुई सरसराहट की आवाज़ की ओर कज़्ज़ाकों का ध्यान गया। चितकबरा दोगला कुत्ता ज़मीन सूंघता और अपनी बूची दुम ज़ोरों से हिलाता चौकी की ओर दौड़ता आया। लुकाश्का ने अपने पड़ोसी शिकारी येरोश्का मामा का कुत्ता पहचाना, और उसके पीछे उसे शिकारी भी झुरमुट में बढ़ता नज़र आया।

येरोश्का मामा भीमकाय कज़्ज़ाक था, उसकी झक सफ़ेद दाढ़ी तख़्ते ऐसी चौकोर थी। उसकी छाती और उसके कंधे इतने चौड़े थे कि जंगल में जहां किसी के साथ उसकी तुलना नहीं की जा सकती थी वह ज़्यादा लंबा नहीं लगता था: उसके सारे शक्तिशाली अंग इतने सुघड़ थे। वह फटा हुआ कोट पहने था, पांव पर पट्टियां लपेटकर उसने ऊपर से हिरन की बिन-कमायी खाल के जूते पहन रखे थे और उन्हें सुतली से बांध रखा था। सिर पर उसके झबरी-सी सफ़ेद टोपी थी। एक कंधे पर वह फ़ेज़ेंटों का शिकार करते समय छिपने की ढाल और एक झोले में बाज़ के शिकार के लिये मुर्गी और छोटा शिकरा उठाये था और दूसरे पर एक रस्सी से बंधा बनबिलाव था, जिसका उसने शिकार किया था; गोलियों, बारूद और रोटी की गुत्थी, मच्छर भगाने के लिए घोड़े की पूंछ, खून के पुराने धब्बोंवाली फटी म्यान में काफ़ी बड़ी कटार और शिकार के दो फ़ेज़ेंट— यह सब उसने पीठ पर कमरबंद में खोंस रखा था।

चौकी पर एक नज़र डालकर वह रुक गया।

"ऐ, ल्याम!" उसने ऐसी खनकती आवाज़ में कुत्ते को पुकारा कि उसकी प्रतिध्वनि जंगल में दूर तक गूंजी, और फिर अपनी खूब बड़ी बंदूक कंधे पर सरकाकर उसने टोपी ऊपर उठायी।

"मज़े में रहे?" कज़्ज़ाकों को संबोधित करते हुए उसने अपनी उसी ज़ोरदार और हर्षमय आवाज़ में कहा। वह ज़रा भी ज़ोर लगाये बिना मगर इतनी ऊंचे बोला मानो दूसरे तट पर खड़े किसी आदमी से चिल्लाकर कुछ कह रहा हो।

"मज़े में, मामा, मज़े में," चारों ओर से कज़्ज़ाकों ने हर्षमय स्वर में जवाब दिया।

"क्या-क्या देखा? बोलो!" येरोश्का मामा चिल्लाया और कोट की बांह से अपने चौड़े लाल मुंह का पसीना पोंछने लगा।

"सुना, मामा, यहां चिनार पर कैसा बाज़ रहता है! शाम घिरते ही मंडराने लगता है," आंख मिचकाते, कंधा बिचकाते और टांग हिलाते हुए नज़ारका बोला।

"अजी हां!" बूढ़े को विश्वास नहीं हुआ।

"सच, मामा! घात लगाकर देख लो," नज़ारका ने हंसते हुए यकीन दिलाया।

कज़्ज़ाक हंस पड़े।

इस मसखरे ने कोई बाज़-वाज़ नहीं देखा था, लेकिन चौकी पर जवान कज़्ज़ाकों का यह रिवाज ही बन गया था कि जब कभी येरोश्का मामा इधर आ निकलता, वे उसे चिढ़ाते और चकमा देते।

"है न भोदूं! बकना ही आता है!" लुकाश्का बुर्जी से नज़ारका पर बरसा।

नज़ारका तुरंत चुप हो गया।

"घात तो लगानी ही चाहिए। ज़रूर लगाऊंगा," बूढ़े ने अपने जवाब से सबको खुश कर दिया। "अच्छा, सूअर देखे?"

"बड़ा आसान है न सूअर देख पाना!" आगे को झुककर दोनों हाथों से अपनी लंबी पीठ खुजलाते हुए हवलदार बोला। वह ऊब भगाने का मौका पाकर बड़ा खुश था। "यहां अबरेकों को पकड़ने को बैठे हैं, जंगली सूअर नहीं। तुमने कुछ नहीं देखा-सुना, मामा?" बिना वजह आंखें मींचते और अपने सफ़ेद दांत चमकाते हुए उसने कहा।

"अबरेक?" बूढ़ा बोला। "न, मैंने कुछ नहीं देखा-सुना। क्यों चिख़ीर* है? थोड़ी पिला दो न, भले आदमी। बहुत थक गया हूं। कुछ दिन सब्र करो, मैं तुम्हारे लिए ताज़ा मांस लाऊंगा। लाओ, पिला दो," उसने फिर से कहा।

"तुम क्या घात लगाओगे?" हवलदार ने यों पूछा मानो बूढ़े की बात उसे सुनायी न पड़ी हो।

"हां, आज रात घात लगाने की सोच रहा हूं," येरोश्का मामा ने जवाब दिया। "भगवान ने चाहा तो त्यौहार तक कुछ मार लूंगा, तब तुम्हें भी दूंगा। सच बात है!"

"मामा, ओ मामा!" लुकाश्का ऊपर से चिल्लाया। उसकी तेज़

---

*काकेशिया में घर पर बनायी जानेवाली हल्की अंगूरी। – अनु०

ग्रावाज़ ने सबका ध्यान ग्रपनी ग्रोर खींचा ग्रौर सभी कज़्ज़ाक लुकाश्का की ग्रोर देखने लगे। "ऊपरवाली धार पे हो ग्राग्रो, वहां सूग्ररों का खूब बढ़िया झुंड है। झूठ नहीं बोलता। सच ! ग्रभी उस रोज़ हमारे एक कज़्ज़ाक ने एक मारा था। सच कह रहा हूं," ग्रपनी पीठ पर बंदूक ठीक करते हुए उसने ऐसी ग्रावाज़ में कहा जिससे साफ़ था कि वह मज़ाक नहीं उड़ा रहा।

"ग्ररे, लुकाश्का झपट्टू यहां है !" ऊपर नज़र डालते हुए बूढ़ा बोला। "कहां मारा था ?"

"लो, तुमने मुझे देखा ही नहीं ! लगता है, ग्रभी छोटा हूं," लुकाश्का ने कहा। फिर सिर झटककर गंभीर स्वर में बोला : "नाले के पास। हम नाले के किनारे-किनारे जा रहे थे, ग्रचानक कुछ खड़खड़ हुई। मेरी बंदूक खोल में थी। इल्या ने तुरंत गोली दाग दी।... मैं तुम्हें दिखा दूंगा, मामा, दूर नहीं है। बस, थोड़ा सब्र रखो। मैंने तो, मामा, उसके सब रास्ते देख रखे हैं ! मोसेव चचा !" दृढ़ स्वर में ग्रौर मानो ग्रादेश देते हुए वह हवलदार की ग्रोर उन्मुख हुग्रा। "पहरा बदलना चाहिए ग्रब !" ग्रौर बंदूक संभालकर वह हवलदार के हुक्म का इंतज़ार किये बिना ही नीचे उतरने लगा।

"उतर ग्राग्रो !" लुकाश्का के चल चुकने पर ही हवलदार ने कहा ग्रौर इधर-उधर नज़र दौड़ायी। "गूरका, तुम्हारी बारी है क्या ? जाग्रो ! हां, तुम्हारा लुकाश्का बड़ा तेज़ हो गया है," हवलदार फिर से बूढ़े की ग्रोर मुड़ा। "तुम्हारी तरह ही घूमता रहता है, घर पर बैठता ही नहीं। परले रोज़ एक को मारा इसने।"

७

सूरज डूब गया था ग्रौर जंगल की ग्रोर से रात की परछाइयां तेज़ी से बढ़ती ग्रा रही थीं। चौकी के इर्द-गिर्द ग्रपना काम ख़त्म करके कज़्ज़ाक खाने के लिए झोंपड़े में जमा हो रहे थे। बस ग्रकेला बूढ़ा ही ग्रभी तक बाज़ की बाट जोहता हुग्रा चिनार तले बैठा था। बीच-बीच में वह शिकरे के पंजे से बंधी डोरी को झटका देता। बाज़ चिनार की चोटी पर बैठा था, लेकिन मुर्ग़ी पर नहीं झपट रहा था। घनी कंटीली झाड़ियों के बीच फ़ेज़ेंटों की पगडंडी पर लुकाश्का इतमीनान से फंदे लगा रहा था ग्रौर एक के बाद एक गीत गाता जा रहा था। उसका कद ऊंचा था ग्रौर हाथ बड़े-

बड़े, लेकिन फिर भी साफ़ नजर ग्राता था कि इन हाथों में छोटा-बड़ा हर काम फटाफट होता है।

"ऐ, लुकाश्का!" पास के झुरमुट से नजारका की तीखी-तेज ग्रावाज़ ग्रायी। "कज़्ज़ाक सब खाना खाने चले गये।"

बगल में ज़िंदा फ़ेज़ेंट दबाये नज़ारका झाड़ियां पार करके पगडंडी पर निकल ग्राया।

"ग्ररे वाह!" ग्रपना गीत ग्रधूरा छोड़कर लुकाश्का बोला। "यह फ़ेज़ेंट कहां मिला? मेरे फंदे में रहा होगा।..."

नज़ारका लुकाश्का की ही उम्र का था ग्रौर वह भी इसी साल बसंत में भरती हुग्रा था।

वह दुबला-पतला ग्रौर हड़ियल था, शक्ल-सूरत भी उसकी खास नहीं थी ग्रौर ग्रावाज़ ऐसी तीखी थी कि देर तक कानों में गूंजती रहती थी। लुकाश्का ग्रौर वह पड़ोसी व हमजोली थे। लुकाश्का घास पर उकड़ूं बैठा फंदा ठीक कर रहा था।

"पता नहीं किसका है। जाने तुम्हारा ही हो।"

"खड्डे के पीछे चिनार के पास था? मेरा ही है, कल लगाया था वहां फंदा।"

लुकाश्का उठकर फ़ेज़ेंट को देखने लगा। भयभीत पंछी ग्रपनी गर्दन तानता हुग्रा ग्रांखें घुमा रहा था। उसका गाढ़ा सुरमई सिर सहलाकर लुकाश्का ने उसे ग्रपने हाथों में ले लिया।

"ग्राज पुलाव बनायेंगे। जा, जाके काट ले ग्रौर साफ़ कर दे।"

"हमीं खायेंगे, या हवलदार को दे दें?"

"बहुत दे लिये उसे।"

"मुझे तो काटते डर लगता है," नज़ारका ने कहा।

"ला इधर।"

लुकाश्का ने कटार के पीछे से छोटा चाकू निकाला ग्रौर उसे तेज़ी से झटका। मुर्गा फड़फड़ाया, लेकिन वह पंख फैला भी न पाया था कि उसका खूनोखून सिर पीछे को लटक गया ग्रौर छटपटाने लगा।

"ऐसे करते हैं," मुर्गे को ज़मीन पर फेंकते हुए लुकाश्का ने कहा। "खूब तर पुलाव बनेगा।"

मुर्गे को देखते हुए नज़ारका सिहर उठा।

"सुन, लुकाश्का, यह शैतान ग्राज फिर हमें घात में बैठने भेजेगा,"

फ़ेज़ेंट को उठाते हुए उसने कहा। शैतान से उसका मतलब हवलदार से था। "फ़ोमुश्किन को उसने चिख़ीर लाने भेज दिया है, उसी की बारी थी। कित्ती रातों से जा रहे हैं! हमीं रह गये इस काम के लिए।"

लुकाश्का सीटी बजाता चौकी को चल दिया।

"रस्सी उठाता ला!" उसने चिल्लाकर कहा।

नज़ारका ने हुक्म बजाया।

"आज मैं उससे कह दूंगा, सच, आज कहकर रहूंगा," नज़ारका ने अपनी बात जारी रखी। "कह देंगे: हम बहुत थक गये, हम नहीं जाते, बस, बात ख़त्म। सच, तू कह दे। तेरी बात वह मान लेगा। नहीं तो यह क्या तरीका है!"

"तू भी किस बात को लेकर बैठ गया!" लुकाश्का बोला; लगता था वह किसी और ही सोच में था। "बात ही क्या है! गांव से अगर रात को भेजता तो बुरा भी लगता। वहां मौज होती है, यहां क्या है? जैसा चौकी पर बैठना, वैसा ही घात लगाकर बैठना। क्या तू भी..."

"गांव जायेगा?"

"त्यौहार पर जाऊंगा।"

"गूरका कह रहा था, तेरी दुनाइका फ़ोमुश्किन के साथ मौज ले रही थी," सहसा नज़ारका ने कहा।

"भाड़ में जाये!" लुकाश्का ने अपने सफ़ेद दांत चमकाते हुए जवाब दिया, मगर वह हंसा नहीं। "मैं क्या दूसरी नहीं ढूंढ़ सकता?"

"गूरका पता है क्या बता रहा था? कहता था, उसके घर गया था। मरद तो उसका था नहीं घर पर। फ़ोमुश्किन वहां बैठा खा-पी रहा था। गूरका थोड़ी देर बैठकर चल दिया। खिड़की के पास से गुज़र रहा था कि सुना अंदर वह कह रही थी: 'चला गया शैतान। लो खाओ न, खा क्यों नहीं रहे?' फिर बोली: 'तुम सोने के लिए अपने घर नहीं जाना'। गूरका बाहर से बोला: 'बहुत खूब'।"

"झूठ!"

"सच कह रहा हूं, भगवान कसम।"

लुकाश्का थोड़ी देर चुप रहा।

"ठीक है, उसने दूसरा ढूंढ़ लिया है तो जाये भाड़ में: लड़कियों की कमी है क्या? मैं तो उससे वैसे ही उकता गया था।"

"देख तो, कैसा शैतान है तू!" नज़ारका ने कहा। "तू कार्नेट की

बेटी मर्यान्का के पास जाकर देख न। वह क्या किसी के साथ घूमने नहीं निकलती ?"

लुकाश्का ने भौंहें सिकोड़ीं।

"क्या मर्यान्का! सब एक सी हैं!" वह बोला।

"तो जा न..."

"तू क्या सोचता है? अरे गांव में लड़कियां कम हैं क्या ?"

लुकाश्का फिर से सीटी बजाता आगे चल दिया। चलते-चलते वह टहनियों से पत्तियां तोड़ता जा रहा था। अचानक एक छोटा-सा चिकना पौधा देखकर वह ठिठका। अपनी कटार के पीछे से चाकू निकालकर उसने टहनी काट ली।

"बंदूक के लिए खूब बढ़िया गज़ बनेगा," संटी को हवा में सटकारकर उसने कहा।

कज़्ज़ाक झोंपड़े की खुली ड्योढ़ी में कच्चे फ़र्श पर चौकी के गिर्द बैठे थे, जब यह सवाल उठा कि घात पर बैठने के लिए जाने की किसकी बारी है।

"आज किसे जाना है?" एक कज़्ज़ाक ने कमरे में बैठे हवलदार से चिल्लाकर पूछा।

"हां, किसे जाना है?" हवलदार ने कहा। "बुर्लाक चचा हो आया है, फ़ोमुश्किन भी," हवलदार ने कहा तो, मगर उसकी आवाज़ में विश्वास नहीं था। "तुम लोग जाओ न? तुम और नज़ारका," उसने लुकाश्का से कहा, "वो येर्गुशोव भी जायेगा; अब तो उसका ख़ुमार टूट गया होगा।"

"तुम्हारा तो टूटता नहीं, उसका कहां से टूटेगा!" नज़ारका ने दबी आवाज़ में कहा।

कज़्ज़ाक हंस पड़े।

येर्गुशोव वही कज़्ज़ाक था जो नशे में धुत्त झोंपड़े के बाहर सो रहा था। वह अभी-अभी आंखें मलता ड्योढ़ी में घुसा था।

लुकाश्का इस बीच उठकर अपनी बंदूक ठीक-ठाक करने लगा था।

"अच्छा, जल्दी जाओ; खाना खा लो और जाओ," हवलदार ने कहा। कज़्ज़ाकों की हामी का इंतज़ार किये बिना ही उसने किवाड़ भिड़ा दिया, प्रत्यक्षतः उसे इस बात की ख़ास उम्मीद नहीं थी कि वे उसका हुक्म मानेंगे। "ऊपर से हुक्म न आया होता तो मैं न भेजता, पर इधर

जाने, कब कोई अफ़सर आ निकले। सुना है, आठ अबरेक नदी पार कर चुके हैं।"

"ठीक है, जाना चाहिए," येर्गुशोव कह रहा था। "सो तो कायदा है! जाये बिना काम ही कैसे चल सकता है, दिन ही ऐसे हैं। मैं भी यही कहता हूं, जाना चाहिए।"

इस बीच लुकाश्का दोनों हाथों से फ़ेज़ेंट का एक टुकड़ा पकड़कर खा रहा था और कभी हवलदार तो कभी नज़ारका की ओर देख रहा था। लगता था, यहां जो कुछ हो रहा था उस सब से उसे कुछ लेना-देना नहीं था और उन दोनों पर वह हंस रहा था। कज़्ज़ाक अभी घात पर निकले नहीं थे जब येरोश्का मामा, जो व्यर्थ ही रात पड़ने तक चिनार तले बैठा रहा था, अंधेरी ड्योढ़ी में घुसा।

"अच्छा तो, छोकरो, मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगा," ड्योढ़ी में उसकी भारी आवाज़ गूंजने लगी और उसमें दूसरी सभी आवाज़ें डूब गयीं। "तुम चेचेनों की घात लगाओगे, मैं सूअरों की।"

८

अंधेरा पूरी तरह घिर आया था जब येरोश्का मामा और चौकी के तीन कज़्ज़ाक अपने लबादे ओढ़े और कंधों पर बंदूकें लटकाये तेरेक के किनारे उस स्थान को चल दिये जो घात लगाने के लिए चुना गया था। नज़ारका जाने को राज़ी ही नहीं हो रहा था, लेकिन लुकाश्का ने उसे डांट दिया और वे तुरंत तैयार हो गये। चुपचाप कुछ कदम चलने के बाद वे नाली से एक ओर को मुड़ गये और सरकंडों के बीच मुश्किल से नज़र आती पगडंडी पर चलते हुए नदी के तट पर पहुंच गये। नदी में बहकर आया एक मोटा काला तना तट पर पड़ा हुआ था, उसके इर्द-गिर्द सरकंडे कुछ ही समय पहले रौंदे गये थे।

"यहां बैठेंगे क्या?" नज़ारका ने पूछा।

"क्यों नहीं!" लुकाश्का बोला। "यहीं बैठ जा, मैं अभी मामा को जगह दिखाकर आता हूं।"

"सबसे बढ़िया जगह है: हम सबको देख सकते हैं, हमें कोई नहीं," येर्गुशोव ने कहा। "यहां बैठना चाहिए–एकदम बढ़िया जगह है।"

नज़ारका और येर्गुशोव अपने लबादे बिछाकर तने के पीछे बैठ गये। लुकाश्का येरोश्का मामा के साथ आगे चल दिया।

"यहां पास ही है, मामा," बूढ़े के आगे-आगे बिना आहट के कदम भरते हुए लुकाश्का ने कहा, "मैं तुम्हें दिखा दूंगा, कहां से वे गुज़रे थे। अकेला मैं ही जानता हूं, मामा।"

"शाबाश! चल दिखा," बूढ़े ने भी फुसफुसाते हुए जवाब दिया।

कुछ कदम चलकर लुकाश्का रुक गया, डबरे पर झुककर उसने सीटी बजायी।

"देखा? यहां से पानी पीने गये हैं," ताज़े निशान दिखाते हुए उसने बहुत ही हौले-से कहा।

"भगवान तेरा भला करे," बूढ़े ने जवाब दिया। "सूअर नाली के पार गड्ढे में होगा। तू जा, मैं यहीं घात लगाता हूं।"

लुकाश्का ने अपना लबादा ऊपर को खींचा और अकेला वापस चल दिया। कभी बायीं ओर सरकंडों की दीवार पर और कभी दायीं ओर पास ही तट के नीचे कलकल करती तेरेक की ओर नज़रें दौड़ाता वह जा रहा था। "वह भी कहीं घात लगाये होगा या रेंग रहा होगा," उसने चेचेन के बारे में सोचा। अचानक ज़ोरों की सरसराहट और छपाक हुई तो उसने ठिठककर झट से बंदूक थाम ली। तट की ओर से घुरघुराता सूअर लपका, जल की चमकीली सतह की पृष्ठभूमि में उसकी काली आकृति पल भर को दीखी और फिर सरकंडों में विलीन हो गयी। लुकाश्का ने तेज़ी से बंदूक लेकर निशाना साधा, लेकिन गोली दाग नहीं पाया – सूअर झुरमुट में समा गया था। लुकाश्का ने झल्लाकर थूका और आगे चल दिया। घात की जगह के पास पहुंचकर वह फिर से थम गया। उसकी हल्की-सी सीटी के जवाब में सीटी बजी और तब वह अपने साथियों के पास चला गया।

नज़ारका गठरी बना सो रहा था। येर्गुशोव पालथी मारे बैठा था, उसने ज़रा सरककर लुकाश्का को बैठने की जगह दी।

"कितना अच्छा लग रहा है, यहां घात में बैठना। सचमुच अच्छी जगह है," उसने कहा। "छोड़ आया?"

"दिखा दी जगह," लुकाश्का ने अपना लबादा बिछाते हुए जवाब दिया। "अभी पानी के पास कित्ता बड़ा सूअर छेड़ा मैंने। वही रहा होगा! शोर सुना होगा?"

"हां, सुना था। मैं फ़ौरन समझ गया था कि जानवर है। यही सोचा कि लुकाश्का ने डरा दिया होगा," येर्गुशोव ने लबादा लपेटते हुए कहा। फिर बोला: "मैं अब सोता हूं, मुर्गा बांग देगा तो जगा दियो। सो ही कायदा है। मैं अभी लेटकर झपकी ले लेता हूं, फिर तू ले लेगा, मैं बैठूंगा। ऐसी बात है।"

"सो ले, सो ले, मुझे तो नींद भी नहीं आ रही," लुकाश्का ने जवाब दिया।

अंधेरी रात में हल्की-हल्की सुखद गरमाहट थी और चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। आकाश के एक ओर ही तारे चमक रहे थे; दूसरे, बड़े भाग पर पहाड़ों की ओर से एक विशाल काली घटा छायी हुई थी। पहाड़ों में घुलती-मिलती काली घटा हवा के बिना ही धीरे-धीरे आगे बढ़ती आ रही थी, उसके आड़े-टेढ़े सिरे तारों भरे आकाश की गहराई में उभरे-उभरे लगते थे। कज़्ज़ाक को अपने सामने ही तेरेक और उसके आगे का विस्तार दिखायी दे रहा था; उसके अगल-बगल और पीछे सरकंडों की दीवार थी। ये सरकंडे कभी-कभार, मानो बिना किसी वजह के डोलने लगते और एक दूसरे को छूते हुए सरसराने लगते। आकाश के उजले सिरे की ओर नीचे से देखने पर सरकंडों की डोलती कलगियां वृक्षों की रोयेंदार शाखाएं-सी लगती थीं। सामने की ओर पैरों के पास ही किनारा था, जहां नीचे पानी छपछप कर रहा था। उससे आगे चाकियों और तट के पास बहती जाती मटमैली जलराशि इकसार झलझला रही थी। उससे भी आगे पानी, तट और घटा – सभी कुछ अभेद्य अंधकार में विलीन हो रहा था। नदी की सतह पर काली परछाइयां दौड़ रही थीं; कज़्ज़ाक की अभ्यस्त नज़रें इनमें ऊपर से बहकर आ रहे लट्ठे देख रही थीं। विरले ही कभी बहुत दूर कहीं चमकी बिजली की झलक काले दर्पण जैसे नदी के जल में प्रतिबिंबित हो जाती और तब उस पार का ढलवां तीर नज़र आ जाता। सरकंडों की सरसर, कज़्ज़ाकों के खर्राटे, भुनगों की भिनभिन और जल की छपछप – रात्रि की इन शांत ध्वनियों के बीच कभी कहीं दूर से गोली चलने की आवाज़ आती, कभी टूटे किनारे की भुलभुल, कभी किसी बड़ी मछली की छपाक और कभी बीहड़ जंगल में जानवर के गुज़रने से होती चरमर। फिर एक उल्लू तेरेक पर उड़ता आया – हर दूसरी बार जब वह पंख फड़फड़ाता तो उसके पंख एक दूसरे से टकराते। ठीक कज़्ज़ाकों के सिर के ऊपर पहुंचकर वह जंगल की ओर मुड़ गया और फिर एक

बार छोड़कर नहीं, बल्कि हर बार पंख से पंख टकराते हुए वह चिनार के पुराने पेड़ तक गया और वहां अपना डेरा जमाते हुए देर तक खड़खड़ करता रहा। ऐसी हर अप्रत्याशित ध्वनि पर प्रहरी कज़्ज़ाक चौकन्ना हो जाता, आंखें सिकोड़ लेता और हौले से अपनी बंदूक टटोलता।

रात अब ढलने लगी थी। काली घटा पश्चिम को फैल गयी थी। उसके छिदे-छिदे किनारों के पीछे तारों भरा साफ़ आसमान निकल आया और सुनहरे चांद का उलटा हंसिया पहाड़ों पर ललछौंही चांदनी फैलाने लगा। ठंडक महसूस होने लगी। नज़ारका जाग गया, थोड़ी देर तक बातें करता रहा और फिर से सो गया। लुकाश्का ऊबने लगा, उसने उठकर कटार के पीछे से चाकू निकाला और छड़ी को छीलकर बंदूक की नली साफ़ करने का गज़ बनाने लगा। उसके दिमाग में ये विचार घूम रहे थे कि उस पार पहाड़ों में चेचेन लोग रहते हैं, उनके जवान इस पार आते हैं, वे कज़्ज़ाकों से नहीं डरते, कि वे कहीं और भी नदी पार कर सकते हैं। यह ख़याल आते ही वह अपनी आड़ में से सिर बाहर निकालता और दायें-बायें नदी पर नज़र दौड़ाता, लेकिन कुछ नज़र न आता। थोड़ी-थोड़ी देर बाद वह नदी पर और दूर के किनारे पर नज़र डालता, जो हल्की-हल्की चांदनी में पानी से अलग धुंधला-सा दीख पड़ता था। अब वह चेचेनों के बारे में नहीं सोच रहा था, बस यही देख रहा था कि कब साथियों को जगाने का समय हो और वह गांव को जाये। गांव में वह अपनी दून्या की कल्पना कर रहा था, अपनी जान की, जैसा कि कज़्ज़ाक अपनी माशूकों को कहते हैं, और उसे याद करके वह खिसिया रहा था। भोर का पहला लक्षण प्रकट हुआ: रुपहला कोहरा नदी पर तिरने लगा, उसके पास ही कहीं जवान बाज़ चीखते हुए पंख फड़फड़ाने लगे। आख़िर दूर गांव से मुर्गे की पहली बांग भी सुनायी दी और उसके बाद एक और लंबी बांग जिसके जवाब में दूसरे मुर्गे भी बोलने लगे।

"बस, अब उठा देना चाहिए," लुकाश्का ने सोचा। उसने गज़ पूरा कर लिया था और महसूस कर रहा था कि उसकी पलकें भारी हो रही हैं। साथियों की ओर मुड़कर वह अभी यह देख ही रहा था कि कौन से पांव किसके हैं, तभी उसे लगा कि तेरेक में उस ओर कोई छपाका हुआ है। उसने पलटकर नज़र दौड़ायी – पहाड़ों के ऊपर जहां चांद के उलटे हंसिये तले अंधेरा कट रहा था, उस ओर की तट रेखा पर, फिर तेरेक पर। नदी में बहते तने अब साफ़ दिख रहे थे, उसे लगा कि वह स्वयं

चल रहा है, जबकि तेरेक ग्रौर तने निश्चल हैं, लेकिन ऐसा पलांश को ही हुग्रा। फिर से वह एकटक देखने लगा। डालवाले एक बड़े-से काले तने की ग्रोर उसका ध्यान गया। नदी के बीचोंबीच बहता यह तना न डोल रहा था, न घूम रहा था। उसे यह भी लगा कि वह नदी के बहाव के साथ नहीं, बल्कि उसे काटता हुग्रा चाकी की ग्रोर बह रहा है। लुकाश्का गर्दन तानकर बड़े ध्यान से उसे देखने लगा। तना चाकी के पास पहुंचा, थम गया ग्रौर ग्रजीब से ढंग से हिला। लुकाश्का को तो ऐसा भी ग्राभास हुग्रा कि तने के नीचे से कोई हाथ निकला। "ग्राज ग्रकेले ही ग्रबरेक मार लिया तो?!" उसने सोचा ग्रौर बंदूक उठाकर जल्दबाज़ी किये बिना, लेकिन तेज़ी से टेक खोली, उस पर बंदूक रखी, फिर ज़रा भी खटका किये बिना रुक-रुककर घोड़ा चढ़ाया ग्रौर नज़रों से ग्रंधेरे को टटोलते हुए सांस थामकर निशाना लगाने लगा। "जगाऊंगा नहीं," वह सोच रहा था। लेकिन उसका दिल इतनी ज़ोर से धड़कने लगा कि वह रुक गया ग्रौर कान लगाकर सुनने लगा। तना सहसा पानी में गिरा ग्रौर फिर से पानी को चीरता हुग्रा इस तट को बहने लगा। "निकल न जाये!" उसने सोचा ग्रौर तभी धुंधली चांदनी में उसे तने के ग्रागे तातार का सिर दीखा। उसने सिर का ही निशाना साध लिया। वह बिल्कुल पास ही लगता था – नली के छोर पर। उसने बंदूक के खांचे से ग्रांखें हटाकर सीधा सामने देखा। "ग्रबरेक ही है!" उसने सहर्ष सोचा ग्रौर फिर झटके से घुटनों के बल उठकर दुबारा से निशाना ढूंढ़ा। जब निशाना बंदूक की लंबी नली की सीध में ग्रा गया तो उसने बचपन से सीखी हुई कज़्ज़ाकों की ग्रादत के मुताबिक कहा: "पावन पिता ग्रौर पुत्र के नाम" ग्रौर घोड़े की लिबलिबी दबा दी। एक बिजली कौंधी ग्रौर पल भर को सरकंडे व नदी का पाट चमक उठे। गोली चलने का तेज़ धमाका नदी पर गूंजा ग्रौर दूर कहीं गड़गड़ाहट में बदल गया। तना ग्रब नदी के पार नहीं, बल्कि बहाव के साथ बढ़ने लगा – डोलता ग्रौर घूमता हुग्रा।

"ग्ररे, पकड़, मैंने कहा!" ग्रपनी बंदूक टटोलता ग्रौर लट्ठे के पीछे से ऊपर उठता येर्गुशोव चिल्लाया।

"चुप, शैतान!" दांत भींचकर लुकाश्का फुफकारा। "ग्रबरेक ग्रा रहे हैं!"

"किसे मारा?" नज़ारका पूछ रहा था। "कौन था, लुकाश्का?"

लुकाश्का कोई जवाब नहीं दे रहा था। वह बंदूक में गोली भर रहा

था और बहते जा रहे तने को देख रहा था। थोड़ी दूर जाकर वह चाकी पर रुक गया और उसके पीछे से पानी पर डोलता हुआ बड़ा-सा कुछ दीखा।

"क्यों गोली चलायी? बोलता क्यों नहीं?" कज्ज़ाक पूछते जा रहे थे।

"कहा न, अबरेक हैं," लुकाश्का ने फिर से दोहराया।

"क्या हांकता है! यों ही बंदूक चल गयी क्या?"

"अबरेक को मारा है! समझे?!" उत्तेजना से उखड़े स्वर में लुकाश्का बोला और खड़ा हो गया। "कोई तैरता आ रहा था..." चाकी की ओर इशारा करते हुए उसने कहा। "मैंने उसे मार डाला। इधर देख।"

"गप्प मत हांक," आंखें रगड़ते हुए येर्गुशोव ने फिर से कहा।

"कौन हांक रहा है? ले, देख। इधर देख," लुकाश्का ने कहा और उसका कंधा पकड़कर उसे इतनी ज़ोर से अपनी ओर खींचा कि वह कराह उठा।

येर्गुशोव उधर देखने लगा जिधर लुकाश्का इशारा कर रहा था और वहां आदमी को देखकर उसने तुरंत अपना लहजा बदल लिया:

"अरे! मैं कहता हूं, और भी होंगे, सच कहता हूं," वह हौले से बोला और अपनी बंदूक देखने लगा। "यह टोहिया तैर रहा था; दूसरे या तो यहां पहुंच गये हैं, या उस पार कहीं पास ही हैं; सही कहता हूं मैं।"

लुकाश्का कमरबंद खोलकर अपना चेर्केस कोट उतारने लगा।

"कहां जाता है, बेवकूफ़?" येर्गुशोव चिल्लाया, "आड़ से बाहर निकलते ही तेरा सफ़ाया हो जायेगा; सही बात कहता हूं मैं। अगर तूने मार दिया है तो यह कहीं जाने से रहा। कुप्पी दे ज़रा, बारूद भर लूं। है तेरे पास? नज़ार! तू फटाफट चौकी पर जा, और देख किनारे-किनारे न जाइयो, नहीं मार डालेंगे। सही कहता हूं मैं।"

"चल दिया मैं अकेला! खुद जा न," नज़ारका ने गुस्से से कहा।

लुकाश्का अपना कोट उतारकर तट पर गया।

"मत जा, कहा न तुझसे," बंदूक में बारूद भरते हुए येर्गुशोव बोला। "देखता नहीं, वह हिल-डुल नहीं रहा। मैं साफ़ देख रहा हूं। सुबह होने ही वाली है, ठहर जा, चौकी से लोगों को आ जाने दे। जा, नज़ार; क्या डरता है! डर नहीं, मैंने कहा न।"

"लुकाश्का," नज़ारका कह रहा था, "बता न, कैसे मारा।"

लुकाश्का ने पानी में घुसने का इरादा छोड़ दिया।

"जाओ, तुम दोनों जल्दी से चौकी पर जाओ, मैं यहीं बैठता हूं। कज़्ज़ाकों से कहना गश्त भेजें। अबरेक अगर इस ओर हैं तो उन्हें पकड़ना चाहिए!"

"यही तो मैं कहता हूं, चले जायेंगे," येर्गुशोव ने उठते हुए कहा। "पकड़ना चाहिए, सही बात है।"

येर्गुशोव और नज़ारका उठे और अपनी छाती पर सलीब का निशान बनाकर चौकी की ओर चल दिये। वे किनारे-किनारे नहीं, बल्कि झाड़ियों के बीच से जंगल की पगडंडी की ओर बढ़े।

"लुकाश्का, देख, हिलना-डुलना नहीं," येर्गुशोव ने जाते-जाते कहा, "नहीं तो यहीं तुझे भून देंगे। देख, चौकस रहियो। सही बात कहता हूं।"

"पता है मुझे, पता है," लुकाश्का ने कहा और अपनी बंदूक जांचकर फिर से लट्ठे के पीछे बैठ गया।

लुकाश्का अकेला बैठा था, चाकी पर नज़र डाल रहा था और कान लगाकर सुन रहा था कि कज़्ज़ाक आ रहे हैं या नहीं। लेकिन चौकी काफ़ी दूर थी और वह अधीरता से व्याकुल हो रहा था। वह यही सोचता जा रहा था कि वे अबरेक बच निकलेंगे जो मारे गये अबरेक के साथ आ रहे थे। जैसे शाम को बच निकले सूअर पर वह झुंझलाता रहा था, वैसे ही इन अबरेकों पर झुंझला रहा था, जो अब बच निकलेंगे। वह कभी अपने गिर्द नज़र दौड़ाता तो कभी सामने के तट पर, इस उम्मीद में कि किसी भी क्षण कोई और आदमी दिखाई दे जायेगा; बंदूक की टेक फैलाकर वह गोली चलाने को तैयार बैठा था। यह बात उसके दिमाग में एक बार भी न आयी कि वह भी मारा जा सकता है।

९

पौ फट रही थी। उथले पानी में ज़रा-ज़रा डोलता चेचेन का शव अब साफ़ दिखायी दे रहा था। अचानक कज़्ज़ाक से थोड़ी दूर सरकंडों में खड़-खड़ हुई, कदमों की आहट सुनायी पड़ी और सरकंडों की फुनगियां हिलने लगीं। घोड़ा चढ़ाकर लुकाश्का बुदबुदाया: "पिता और पुत्र के नाम"। घोड़े का खटका होते ही कदम थम गये।

"ऐ कज़्ज़ाको! मामा को न मार देना," शांत, गंभीर स्वर सुनायी

दया ग्रौर सरकंडों को हटाकर येरोश्का मामा लुकाश्का के बिल्कुल पास ो निकल ग्राया।

"मैं तो तुम्हारी जान ले ही बैठा था, भगवान कसम!" लुकाश्का बोला।

"गोली क्यों चलायी थी?" बूढ़े ने पूछा।

उसके मेघगंभीर स्वर ने जंगल में ग्रौर नदी पर गूंजते हुए पलांभ में ही कज्ज़ाक के चारों ग्रोर छायी रात की रहस्यमयी निस्तब्धता भंग कर दी। मानो एकाएक ग्रधिक उजाला हो गया ग्रौर सब कुछ साफ़ दिखने लगा।

"तुमने कुछ नहीं देखा, मामा, मैंने यहां जानवर मार लिया," लुकाश्का बोला ग्रौर घोड़ा उतारकर ग्रस्वाभाविक निश्चिंतता के साथ उठ खड़ा हुग्रा।

बूढ़ा उस सफ़ेद पीठ को घूर रहा था, जो ग्रब साफ़ नज़र ग्राने लगी थी। उसके चारों ग्रोर नदी का पानी झलझला रहा था।

"पीठ पर तना बांधकर तैर रहा था। मैं ताड़ गया ग्रौर फिर... ग्ररे, देखो तो! नीली पतलून पहने है, लगता है बंदूक भी है... देखा?" लुकाश्का कह रहा था।

"न देखने की क्या बात है!" बूढ़े ने गुस्से से कहा। उसके चेहरे पर कठोरता भरा कोई गंभीर भाव छलका। "जिगीत को मार डाला," उसने खेद भरी ग्रावाज़ में कहा।

"मैं यहीं बैठा था, देखता क्या हूं, उस पार काला-काला कुछ हिल रहा है। मैंने उसे वहीं ताड़ लिया। यही लगा कि कोई ग्रादमी ग्राकर पानी में गिर पड़ा। यह क्या ग्रजूबा है, मैंने सोचा। खूब बड़ा तना बहता ग्रा रहा है, ऊपर से बहाव में नहीं, उलटे उसे काटता ग्रा रहा है। तभी देखता क्या हूं कि उसके नीचे से सिर निकल रहा है। क्या तमाशा है? मैं लगा देखने, पर सरकंडों में से मुझे कुछ नज़र नहीं ग्राता था, सो मैं ऊपर को उठा, उस शैतान ने शायद सुन लिया, चाकी पर निकल ग्राया ग्रौर इधर-उधर ताकने लगा। नहीं, शैतान की ग्रौलाद, तू नहीं निकल पायेगा, मैंने सोचा; निकलकर ताक रहा है। उफ़, मेरा तो दम घुटने लगा! मैंने बंदूक तैयार कर ली ग्रौर सांस थामे इंतज़ार करने लगा। थोड़ी देर तक वह इधर-उधर ताकता रहा ग्रौर फिर से तैरने लगा ग्रौर जैसे ही चांदनी में पहुंचा, सारी पीठ दिखने लगी। 'पावन पिता ग्रौर पुत्र के नाम'। ग्रौर धुएं के पार देखता क्या हूं, वह हाथ-पांव मार रहा हैं। वह कराहा भी या शायद मुझे

ऐसा लगा? शुक्र है भगवान का, मैंने सोचा, कर दिया इसका काम तमाम! फिर जब चाकी पर जा निकला तो सारा नज़ारा साफ़ हो गया। वह उठना चाहे, पर उठ न पाये। हाथ-पांव मारता रहा और फिर ठंडा हो गया। सब कुछ साफ़ नज़र आ रहा था। देखो तो, ज़रा भी हिल-डुल नहीं रहा, मर-मरा गया। कज़्ज़ाक चौकी पर भागे गये हैं, कहीं दूसरे न बच निकलें!"

"ज़रूर पकड़ लोगे उन्हें!" बूढ़े ने कहा। "अरे, वे तो कहां के कहां निकल गये।..." और उसने फिर से खेद के साथ सिर हिलाया। तभी टहनियां चटखने की आवाज़ आयी। पैदल और घुड़सवार कज़्ज़ाक ज़ोर-ज़ोर से बातें करते नदी के किनारे-किनारे आ रहे थे।

"नाव लाये हो क्या?" लुकाश्का चिल्लाया।

"शाबाश, लुकाश्का! खींच ला किनारे पर," एक कज़्ज़ाक ने चिल्लाकर कहा।

नाव का इंतज़ार किये बिना ही लुकाश्का कपड़े उतरने लगा। उसकी आंखें उसके शिकार पर ही लगी हुई थीं।

"ठहर जा, नज़ारका नाव ला रहा है," हवलदार चिल्लाया।

"अरे, बुद्धू! जाने वह ज़िंदा हो! बहाना कर रहा हो! कटार लेता जा," दूसरा कज़्ज़ाक चिल्लाया।

"अरे, छोड़!" पतलून उतारते हुए लुकाश्का चिल्लाया। फुर्ती से कपड़े उतारकर उसने सलीब का निशान बनाया और उछलकर छपाके के साथ पानी में घुस गया, अपना बदन भिगोया। फिर अपनी गोरी बांहें फेंकता, पीठ को पानी में से काफ़ी ऊपर उठाता और गहरी सांस लेता तेरेक के बहाव को काटता हुआ चाकी की ओर बढ़ने लगा। तट पर झुंड बनाकर खड़े कज़्ज़ाक ज़ोर-ज़ोर से बातें कर रहे थे। तीन घुड़सवार गश्त पर चल दिये। नदी के घुमाव के पीछे से नाव प्रकट हुई। लुकाश्का चाकी पर निकला, चेचेन पर झुककर उसने उसे दो-एक बार झकझोरा। "बिल्कुल मरा पड़ा है!" उधर से उसकी तेज़ आवाज़ आयी।

चेचेन के सिर में गोली लगी थी। वह नीली पतलून पहने था, कमीज़, चेर्केस कोट, बंदूक और कटार पीठ पर बंधे हुए थे। ऊपर से एक तना बंधा हुआ था, जिसे देखकर लुकाश्का शुरू में धोखा खा गया था।

चौकी पर शव को नाव में से निकालकर तट की घास पर रखा गया।

कज़्ज़ाक उसे घेरकर खड़े हो गये और उनमें से एक बोला : "क्या मछली फंसी है!"

"कितना पीला है!" दूसरा बोला।

"कहां ढूंढ़ने गये हैं हमारे लोग? वे तो सब उस पार होंगे। अगर यह टोहिया न होता तो ऐसे न तैरता आता। अकेला काहे को तैरता?" तीसरा बोला।

"बड़ा तेज़ रहा होगा, आगे जाने को बढ़ आया। असल जिगीत था!" लुकाश्का ने छींटा कसा। वह तट पर खड़ा अपने गीले कपड़े निचोड़ रहा था और ठिठुरता जा रहा था। "दाढ़ी रंगी-छंटी है।"

"कोट भी झोले में लपेटकर पीठ पर बांध लिया था। ऐसे तैरना भी आसान था," किसी ने कहा।

"देख, लुकाश्का," हवलदार बोला। वह मारे गये चेचेन की कटार और बंदूक हाथ में लिये था। "तू कटार अपने पास रख ले और कोट भी, बंदूक के लिए मेरे पास आना, मैं तुझे तीन कलदार दे दूंगा। देख, इसकी नली भी ठीक नहीं," नली में फूंक मारते हुए उसने कहा। "मैं तो बस यादगार के तौर पर रखना चाहता हूं।"

लुकाश्का ने कोई जवाब नहीं दिया। इस तरह के भिखमंगेपन पर उसे झुंझलाहट होती थी, लेकिन वह जानता था कि इससे बचा नहीं जा सकता।

"देखो तो शैतान की औलाद को!" खिसियाकर चेचेन का कोट ज़मीन पर फेंकते हुए वह बोला। "कोट ही काम का होता, चीथड़ा हो रहा है।"

"जंगल में लकड़ी काटने जाओगे तो काम आयेगा," किसी कज़्ज़ाक ने कहा।

"मोसेव चचा! मैं घर जाऊंगा," लुकाश्का बोला। वह अपनी झुंझलाहट भूल गया लगता था और अफ़सर को दिये तोहफ़े का फ़ायदा उठाना चाहता था।

"ठीक है, हो आ!"

"चलो, जवानो, इसे चौकी के पीछे ले जाओ," हवलदार ने कज़्ज़ाकों से कहा। वह अभी तक बंदूक को देखता जा रहा था। "और हां, इसके ऊपर छप्पर तान देना, ताकि धूप न लगे। कौन जाने पहाड़ों से इसे पैसे देकर छुड़ाने आयें।"

"अभी तो गर्मी नहीं पड़ रही," किसी ने कहा।

"गीदड़ ने चीर डाला तो? यह क्या अच्छी बात होगी?" एक कज़्ज़ाक ने कहा।

"पहरा लगा देंगे। लेने आये तो अच्छा नहीं होगा, अगर गीदड़ ने चीर दिया।"

"हां, लुकाश्का, तू चाहे कुछ भी कह, साथियों को एक बाल्टी चिख़ीर तो पिलानी ही होगी," हवलदार ने प्रफुल्ल स्वर में कहा।

"बिल्कुल! यह तो अपनी रीत है," कज़्ज़ाकों ने भी बात पकड़ी। "देखो तो, भगवान ने क्या किस्मत खोली है–अभी कल तो चौकी पर आया है, आज अबरेक भी मार लिया।"

"लो, भई, कटार और कोट खरीदो। लाओ पैसे निकालो, पतलून भी दे दूंगा। ले लो माल," लुकाश्का कह रहा था। "मुझे तो आने की नहीं–कमबख़्त हड़ियल था।"

एक कज़्ज़ाक ने एक कलदार, यानी चांदी के एक रूबल में कोट खरीद लिया, दूसरे ने दो बालटी चिख़ीर के बदले कटार ले ली।

"पियो, यारो, एक बाल्टी मैं दूंगा," लुकाश्का ने कहा। "खुद गांव से लाऊंगा।"

"पतलून काटके लड़कियों के लिए रूमाल बना दे," नज़ारका ने कहा।

कज़्ज़ाकों ने ठहाका मारा।

"बहुत हो गया हंसना!" हवलदार ने कहा। "लाश तो ले जाओ। क्या इसे यहां झोंपड़े के पास रख छोड़ा है..."

"खड़े क्या हो? इधर घसीट लाओ, न!" लुकाश्का ने उन कज़्ज़ाकों को हुक्म दिया जो हिचकिचाते हुए लाश को उठा रहे थे। कज़्ज़ाकों ने उसका हुक्म माना, मानो वही उनका अफ़सर हो। लाश को कुछ कदम घसीटकर कज़्ज़ाकों ने टांगें छोड़ दीं और वे बेजान ज़मीन पर गिर पड़ीं। कज़्ज़ाक ज़रा हटकर खड़े हो गये और थोड़ी देर चुपचाप खड़े रहे। नज़ारका ने शव के पास जाकर एक ओर को झुका सिर यों मोड़ दिया ताकि कनपटी के ऊपर हुआ छेद और चेहरा साफ़ दिखाई दे।

"देखो तो, कैसी निशानी लगी है! सीधे भेजे में!" वह बोला, "कहीं खोयेगा नहीं, इसके मालिक ज़रूर इसे पहचान जायेंगे।"

किसी ने कोई जवाब नहीं दिया। गहरी खामोशी छा गयी।

सूरज निकल आया था और ओस भरी हरियाली पर उसकी छितरी किरणें चमक रही थीं। थोड़ी दूर पर कलकल करती नदी बह रही थी;

जाग उठे जंगल में सुबह का स्वागत करते फ़ेज़ेंट चारों ग्रोर चहक रहे थे। शव को घेरे कज़्ज़ाक खामोश खड़े थे, हिल-डुल तक नहीं रहे थे, बस खड़े-खड़े उसे देख रहे थे। भूरे वदन पर गीली नीली पतलून के ग्रलावा ग्रौर कुछ नहीं था, ग्रंदर को धंसे पेट पर पतलून पेटी से कसी हुई थी। चेचेन की देह सुघड़ ग्रौर सुंदर थी। उसकी मांसल वांहें देह के ग्रगल-बगल सीधी तनी हुई थीं। नया मुंडा नीला-सा सिर, जिसके घाव पर खून जम गया था, पीछे को लटका हुग्रा था। धूप से संवलाया चिकना माथा मुंडे सिर से एकदम भिन्न लगा रहा था। पथरायी खुली ग्रांखें ग्रौर उनकी ठिठकी पुतलियां ऊपर कहीं लगी हुई थीं, मानो हर चीज़ के पार देख रही थीं। छंटी हुई लाल मूंछों के नीचे पतले होंठों ग्रौर उनके खिंचे हुए सिरों पर दिल्लगी की मुस्कान जमी रह गयी लगती थी। लाल वालोंवाले छोटे हाथों की उंगलियां ग्रंदर को मुड़ी हुई थीं ग्रौर नाखून मेंहदी से रंगे हुए थे।

लुकाश्का ने ग्रभी तक कपड़े नहीं पहने थे, उसका वदन गीला था। उसकी गर्दन सदा से ग्रधिक लाल थी ग्रौर ग्रांखें सदा से ग्रधिक चमक रही थीं। उसके चौड़े गाल फड़क रहे थे ग्रौर हृष्ट-पुष्ट गोरे शरीर से हल्की-हल्की, सुबह की ताज़ी हवा में मुश्किल से दीख पड़ती भाप उठ रही थी।

"यह भी ग्रादमी था," मृतक को निहारते हुए वह बोला।

"हां, ग्रगर तू इसके हत्थे पड़ जाता तो छोड़ता नहीं," एक कज़्ज़ाक ने जवाब में कहा।

खामोशी टूट गयी। कज़्ज़ाक हिलने-डुलने लगे, बातें करने लगे। दो जने छप्पर के लिए झाड़ियां काटने चले गये। बाकी लोग चौकी को चल दिये। लुकाश्का ग्रौर नज़ारका दौड़कर चौकी पर गये – गांव जाने की तैयारी करने।

ग्राधे घंटे बाद तेरेक ग्रौर गांव के बीच फैले घने जंगल में लुकाश्का ग्रौर नज़ारका लगातार बातें करते ग्रौर दौड़ते-दौड़ते ही घर जा रहे थे।

"देख, तू उसे बताइयो मत कि मैंने भेजा है; बस जाकर देख ग्राइ-यो, मरद घर पर है कि नहीं," लुकाश्का तीखी ग्रावाज़ में कह रहा था।

"मैं याम्का के पास जाऊंगा। ग्राज तो मौज करेंगे, है न?" ग्राज्ञा-कारी नज़ारका पूछ रहा था।

"ग्राज नहीं मौज करेंगे तो कब करेंगे," लुकाश्का का जवाब था।

गांव पहुंचकर कज़्ज़ाकों ने ख़ूब पी ग्रौर सो गये। शाम तक वे सोते रहे।

इस घटना के तीसरे दिन काकेशियाई पैदल रेजिमेंट की दो कम्पनियां कज्ज़ाकों के गांव नोवोम्लीन्स्कया में पहुंचीं। घोड़े खोल दिये गये थे और कम्पनियों की गाड़ियां चौक में खड़ी थीं। इधर-उधर के अहातों में जहां कहीं मालिकों की नज़रों से बाहर कुंदे पड़े मिले बावर्ची उन्हें उठा लाये थे और अब खड्डे में आग जलाकर खाना पका रहे थे। सूबेदार सिपाहियों की हाज़िरी ले रहे थे। सेवा कोर के लोग घोड़े बांधने के लिए खूंटे गाड़ रहे थे। क्वार्टर मास्टर घर के आदमियों की तरह गलियों में आ-जा रहे थे और अफ़सरों व सिपाहियों को उनके क्वार्टर दिखा रहे थे।

कहीं गोला-बारूद की हरी पेटियों की लाइन लगी हुई थी, कहीं कम्पनी की गाड़ियां और घोड़े खड़े थे, कहीं देगों में खाना पक रहा था। एक कप्तान, एक लेफ़्टिनेंट और सूबेदार ओनीसिम मिख़ाइलोविच भी यहीं पर थे। यह सब उस कज़्ज़ाक गांव में था, जहां कहा जाता था कि कम्पनी को डेरा डालने का हुक्म मिला है, सो कम्पनियों के लिए यह अपना घर ही था।

यहां डेरा क्यों डाला गया है? ये कज़्ज़ाक कौन हैं? क्या उन्हें यह पसंद है कि सिपाही उनके यहां डेरा डालकर रहेंगे? वे पुरातनपंथी हैं या नहीं? इस सबसे उन्हें कुछ लेना-देना नहीं था। थके-मांदे, धूल से सने सिपाही हाज़िरी से छुट्टी पाकर शोर मचाते चौकों-गलियों में बिखर रहे थे जैसे कि छत्ते पर उतर रहा मधुमक्खियों का झुंड। कज़्ज़ाकों की नापसंदगी की ज़रा भी परवाह न करते हुए दो-दो, तीन-तीन सिपाही हंसते-बतियाते और बंदूकें खनकाते घरों में घुस रहे थे। यहां वे अपने हथियार टांगते, झोले खोलते और कज़्ज़ाक औरतों से मज़ाक करते। सिपाहियों का एक बड़ा दल फ़ौजियों की मनपसंद जगह पर, खिचड़ी की देगों के पास जमा हो गया। दांतों में पाइप दबाये वे कभी अलाव से उठते और तपे आसमान में सफ़ेद बादल-सा बनते जा रहे धुएं को देख रहे थे और कभी अलाव की लपटों को, जो साफ़ हवा में पिघले कांच-सी थरथरा रही थीं। हंसी-ठट्ठा करते ये सिपाही कज़्ज़ाक औरतों-मर्दों का मज़ाक उड़ा रहे थे, क्योंकि वे बिल्कुल रूसियों की तरह नहीं रहते। सभी अहातों में सिपाही दिख रहे थे और उनके ठहाके सुनायी दे रहे थे। कज़्ज़ाक औरतों के गुस्से से चीखने-चिल्लाने की आवाज़ें आ रही थीं; वे अपने घरों की रखवाली

कर रही थीं, सिपाहियों को पानी और बर्तन नहीं दे रही थीं। लड़के-लड़कियां अपनी माताओं से और एक दूसरे से सटे भयमिश्रित आश्चर्य के साथ पहली बार देखे इन फ़ौजियों की हर गति पर नज़र रख रहे थे, या उनके पीछे-पीछे थोड़ी दूरी पर दौड़ रहे थे। बूढ़े कज़्ज़ाक घरों से निकलकर बाहर चबूतरों पर आ बैठे थे, भौंहें ताने, चुपचाप सिपाहियों की हलचल देख रहे थे। उन्हें जैसे इसकी कोई परवाह नहीं थी और न ही वह यह समझते थे कि इस सबका क्या नतीजा हो सकता है।

ओलेनिन तीन महीने पहले काकेशियाई रेजिमेंट में कैडेट के तौर पर भरती हुआ था। यहां उसे गांव के सबसे अच्छे घर, कार्नेट इल्या वसील्येविच के, यानी उलीत्का बीबी के घर में ठहराया गया था।

"द्मीत्री अन्द्रेयेविच, क्या बला है यह?" हांफते वन्यूशा ने ओलेनिन से कहा, जो ग्रोज़्नया में खरीदे कबरदा घोड़े पर सवार अहाते में घुस ही रहा था। वह चेर्केस कोट पहने था और पांच घंटे के मार्च के ख़त्म हो जाने पर खुश नज़र आ रहा था।

"क्यों जी, क्या हुआ?" घोड़े को पुचकारते हुए और हर्षमय नज़रों से वन्यूशा को देखते हुए उसने पूछा। वन्यूशा हैरान-परेशान था – पसीने से लथपथ और बाल उलझे हुए। वह असबाब की गाड़ियों के साथ आया था और अब सामान खोल रहा था।

ओलेनिन अब बिल्कुल दूसरा ही इंसान लगता था। उसके साफ़ मुंडे रहनेवाले गालों पर अब दाढ़ी उगी हुई थी, मूंछें भी उसने बढ़ा ली थीं। रातों को दिन बनाते रहने से चेहरे पर जो पीलापन आ गया था, उसके स्थान पर अब गालों पर, माथे पर, कानों के पीछे धूप से संवलायी त्वचा लाल थी। साफ़-सुथरे काले, यूरोपीय टेल-कोट के स्थान पर अब वह दामन पर गहरी चुन्नटोंवाला सफ़ेद मैला चेर्केस कोट पहने था और कंधे पर बंदूक लटकाये था। कलफ़ लगे साफ़ कालर की जगह उसकी गर्दन पर रेशमी बेशमेत की लाल पट्टी कसी हुई थी। वह चेर्केसों का पहनावा पहने था, लेकिन ढंग से नहीं; कोई भी उसे देखकर कह देता कि वह जिगीत नहीं, रूसी है। सब कुछ जिगीत जैसा होकर भी वैसा नहीं था। बहरहाल उसके अंग-अंग से हृष्ट-पुष्टता का आभास होता था, प्रसन्नता और आत्म-संतोष टपका पड़ता था।

"आपको तो मज़ाक लग रहा है," वन्यूशा बोला। "आप ज़रा इन लोगों से बात करके देखिये न। कुछ करने ही नहीं देते, बस यही सारी

बात है इनकी। एक शब्द तक तो इनके मुंह से नहीं निकलता," वन्यूशा ने गुस्से में आकर लोहे की बाल्टी दहलीज़ पर फेंक दी। "पता नहीं, ये तो जैसे रूसी ही नहीं हैं।"

"अरे, तो गांव के मुखिया से मिलना था।"

"मुझे क्या पता कहां रहता है वह," वन्यूशा ने मुंह फुलाकर कहा।

"कौन तुम्हें तंग कर रहा है?" ओलेनिन ने इधर-उधर नज़रें घुमाते हुए कहा।

"शैतान जाने! थू! घर का असल मालिक ही नहीं है! कहते हैं कहीं क्रीगा* पर गया है। बुढ़िया ऐसी चुड़ैल है कि भगवान ही बचाये!" वन्यूशा ने सिर थामकर जवाब दिया। "मेरी तो समझ में नहीं आता हम यहां रहेंगे कैसे। भगवान कसम ये लोग तो तातारों से भी गये-गुज़रे हैं। नाम को ही अपने ईसाई भाई हैं। इनसे तो वे सुसरे तातार ही भले। 'क्रीगा पर गये हैं!' क्या बला है यह मुझे क्या मालूम?" अपनी बात पूरी करके वन्यूशा ने मुंह मोड़ लिया।

"क्यों, अपने यहां जैसा नहीं है?" ओलेनिन ने घोड़े पर चढ़े-चढ़े ही चुटकी ली।

"लाइये, घोड़ा तो दीजिये," वन्यूशा बोला। लगता था यहां के नये तौर-तरीकों पर वह परेशान है लेकिन इसे अपनी किस्मत समझकर उसने मान लिया है।

"क्यों, तातार ही भले हैं? ऐं, वन्यूशा?" घोड़े से उतरकर ज़ीन थपथपाते हुए ओलेनिन ने फिर से पूछा।

"हां, आपको तो हंसी आ रही है! आपके लिए तो बड़े मज़े की बात है!" वन्यूशा बड़बड़ाया।

"अच्छा, छोड़ो, नाराज़ मत होओ, वन्यूशा," ओलेनिन ने अभी भी मुस्कराते हुए जवाब दिया। "अभी मैं जाकर बात करता हूं। देख लेना, सब ठीक कर दूंगा। बड़े मज़े से रहेंगे हम तो! तुम बस परेशान मत होओ।"

वन्यूशा ने कोई जवाब नहीं दिया, बस अपनी आंखें सिकोड़ीं और अहाते में जाते मालिक पर हिकारत भरी नज़र डाली। वन्यूशा ओलेनिन को अपना मालिक ही मानता था और ओलेनिन वन्यूशा को अपना नौकर ही;

---

*नदी तट पर मछली पकड़ने के लिए बनाया गया बाड़ा। – ले०

यदि कोई उन्हें बताता कि वे मित्र हैं, तो दोनों को ही बड़ा आश्चर्य होता। लेकिन वे दोनों न जानते हुए भी मित्र थे। वन्यूशा ग्यारह साल का था जब उसे घर में नौकर रखा गया था, ओलेनिन भी तब इसी उम्र का था। ओलेनिन जब पंद्रह वर्ष का हुआ तो वन्यूशा को पढ़ाने लगा – उसे थोड़ी-बहुत फ़ांसीसी पढ़नी भी उसने सिखा दी, जिस पर वन्यूशा को बड़ा ही गर्व था। अब, जब वन्यूशा का मिज़ाज अच्छा होता तो वह फ़ांसीसी फ़िकरे बोलता और ऐसा करते हुए भोंदुओं जैसी हंसी हंसता।

ओलेनिन लपककर ओसारे की सीढ़ियां चढ़ गया और ठोकर मारकर उसने ड्योढ़ी का दरवाज़ा खोला। गुलाबी रंग की बस एक कमीज़ पहने, जो कि सभी कज़्ज़ाक औरतों का घर का पहनावा है, मर्यान्का डर के मारे उछलकर दरवाज़े से परे हट गयी, दीवार से सटकर उसने अपने चेहरे का निचला हिस्सा खुली बांह से ढंक लिया। दरवाज़ा और खोलने पर ओलेनिन को झुटपुटे में कज़्ज़ाक युवती की ऊंची, सुघड़ आकृति दिखाई पड़ी। यौवन के उत्सुकताभरे तीव्र कौतूहल से उसने छींट की पतली कमीज़ तले चढ़ती जवानी के सुडौल उभार और वे सुंदर काली आंखें देखीं जो बालसुलभ भय और अदम्य कौतूहल से उस पर टिकी हुई थीं। "यही है वह!" ओलेनिन ने सोचा। "ऐसी और भी बहुत होंगी," पीछे-पीछे उसके दिमाग में यह बात आयी और उसने अंदर का दरवाज़ा खोल लिया। उलीत्का बीबी भी सिर्फ़ कमीज़ पहने नीचे झुकी झाड़ू दे रही थी। उसकी पीठ दरवाज़े की ओर थी।

"नमस्ते, मां जी! मैं क्वार्टर के सिलसिले में आया था..." उसने कहना शुरू किया।

कज़्ज़ाक औरत ने कमर सीधी किये बिना ही अपना कठोर किंतु अभी भी सुंदर चेहरा उसकी ओर मोड़ा।

"क्या करने आये हो? हमारा मज़ाक उड़ाना चाहते हो, हैं? ऐसा मज़ाक उड़ाऊंगी! हैज़ा पड़े तुम पर!" त्योरियां चढ़ाकर तिरछी नज़रों से उसे देखते हुए वह चिल्लाने लगी।

ओलेनिन यह सोचता रहा था कि कज़्ज़ाक लोग, लड़ाई में उनके ये साथी, थकी-मांदी, बहादुर काकेशियाई फ़ौज का, जिसका वह भी एक भाग था, सहर्ष स्वागत करेंगे। लेकिन अब ऐसा स्वागत देखकर वह हक्का-बक्का रह गया। फिर भी, सकपकाये बिना उसने यह समझाना चाहा कि वह किराया देगा, लेकिन बुढ़िया ने उसे बीच में ही टोक दिया।

"क्या करने आये हो? क्या तकलीफ़ उठी है तुम्हें? थूथना छिलाये चले आये हैं! ठहरो ज़रा, अभी मालिक आता है, तुम्हें ठिकाने लगायेगा। नहीं चाहिए मुझे तुम्हारे हराम के पैसे। हमने तो कभी पैसे देखे ही नहीं न! घर भर में तमाकू की बू फैलायेंगे, और पैसे देके जान छुड़ायेंगे! कभी देखे नहीं न ऐसे पिस्सू हमने! गोली लगे तुम्हारे कलेजे में!" ओलेनिन को मुंह खोलने तक का मौका न देते हुए बुढ़िया चीखती जा रही थी।

"लगता है, वन्यूशा ठीक कहता था," ओलेनिन ने सोचा, "इनसे तो तातार ही भले!" और उलीत्का बीबी की गालियां सुनते हुए ड्योढ़ी से बाहर आ गया। जब वह निकल रहा था तो अचानक ड्योढ़ी में से मर्यान्का उसके बग़ल से गुज़री। वह अभी भी वही गुलाबी कमीज़ पहने थी, हां, सिर पर उसने सफ़ेद रूमाल बांध लिया था, जिसमें उसका चेहरा आंखों तक ढका हुआ था। नंगे पांवों से पटापट करती वह तेज़ी से ओसारे की सीढ़ियां उतर गयी। फिर पल भर को थमी, मुड़कर हंसती आंखों से नौजवान को देखा और घर के कोने के पीछे ओझल हो गयी।

सुंदरी की दृढ़ चाल, सफ़ेद रूमाल तले चमकती आंखों की अक्खड़ नज़र और सुघड़, सुडौल आकृति ने इस बार ओलेनिन को और भी अधिक चकित किया। "वही है यह," उसने सोचा। क्वार्टर की पहले से भी कम चिंता करते हुए और मुड़-मुड़कर मर्यान्का को देखते हुए वह वन्यूशा के पास पहुंचा।

"देखो तो, लड़की भी कैसी अक्खड़ है। निरी जंगली घोड़ी है," वन्यूशा बोला। वह अभी भी सामान में उलझा हुआ था, लेकिन अब कुछ खुश नज़र आ रहा था। "ला फ़ाम!*" ऊंची विजयी आवाज़ में इतना और कहकर उसने ठहाका मारा।

११

तीसरे पहर घर का मालिक मछली के शिकार से लौट आया और यह जानकर कि उसे किराया मिलेगा उसने अपनी घरवाली को ठंडा किया और वन्यूशा जो चाहता था उसे दे दिया।

---

* नारी! (फ़्रांसीसी)

सो, ठहरने का सारा इंतज़ाम हो गया। घर के मालिक जाड़ों के लिए बने अलग मकान में रहने चले गये। कैडेट को उन्होंने गर्मियों में रहने का मकान तीन रूबल महीने के किराये पर दे दिया। ओलेनिन कुछ खाकर सो गया। दिन ढले उठकर वह नहाया, कपड़े बदले, खाना खाया और सिगरेट जलाकर गली में निकलनेवाली खिड़की के पास बैठ गया। गर्मी घट गयी थी। ढलानदार छतवाले मकान की तिरछी परछाईं धूल भरी गली पर पड़ रही थी और सामने के मकान के निचले हिस्से पर भी चढ़ी हुई थी। उस मकान की सरकंडों की छत डूबते सूरज की किरणों में चमक रही थी। हवा में ताज़गी आ रही थी। गांव में शांति थी। सभी सिपाहियों के ठहरने का इंतज़ाम हो गया था और वे शांत हो गये थे। चरागाहों से गायें-भैंसें अभी लौटी नहीं थीं और लोग भी अपने काम से वापस नहीं आये थे।

ओलेनिन को जो मकान मिला था वह गांव के एक छोर पर था। तेरेक के पार दूर कहीं चेचेन पहाड़ों या कुमीक मैदान में, उन जगहों पर जहां से ओलेनिन आया था, कभी-कभार गोली चलने की दबी-दबी सी आवाज़ आ जाती थी। तीन महीनों की पड़ावों की ज़िंदगी के बाद यहां ओलेनिन को बड़ा अच्छा लग रहा था। अभी-अभी धोये चेहरे पर वह ताज़गी महसूस कर रहा था और हृष्ट-पुष्ट देह को साफ़-सुथरा। मुहिम के बाद यह अनुभूति एकदम नयी-सी थी। आराम पा चुके शरीर के अंग-अंग को चैन मिल रहा था और उनमें नयी शक्ति का संचार हो रहा था। उसका मन भी शांत और ताज़ा था। मुहिम और उसके साथ जुड़े खतरे उसे याद आ रहे थे। उसे यह भी याद आ रहा था कि खतरों से वह घबराया नहीं था, उनका सामना करने में वह दूसरों से पीछे नहीं रहा था और उसे साहसी काकेशियाई सैनिकों की बिरादरी में ले लिया गया था। मास्को की यादें तो पता नहीं कितनी दूर थीं। पुराना जीवन मिट गया था और नया आरंभ हुआ था, एकदम नया, जिसमें अभी तक कोई गलती नहीं हुई थी। यहां एक नये व्यक्ति के नाते नये लोगों में उसके बारे में नयी, अच्छी राय बन सकती थी। जवानी में अकारण ही होनेवाली जीवन की खुशी वह महसूस कर रहा था। कभी घर के पास छाया में लट्टू घुमाते लड़कों को देखते हुए और कभी अपने छोटे-से नये क्वार्टर पर नज़र डालते हुए वह यह सोच रहा था कि कितनी अच्छी तरह वह अपने लिए नया यह कज़्ज़ाक ग्रामीण जीवन जीने लगेगा। बीच-बीच में वह पर्वतों और आकाश की ओर भी आंखें उठा रहा था और उसकी सभी यादों, सभी सपनों में

भव्य प्रकृति की अनुभूति घुल-मिल रही थी। यहां उसका जीवन वैसे तो नहीं शुरू हुआ था जैसे कि उसने मास्को से चलते समय कल्पना की थी, लेकिन यह शुरुआत उसकी आशा से अधिक अच्छी थी। जो कुछ भी वह सोचता, जो कुछ भी वह अनुभव करता – हर बात में उसे पर्वतों, पर्वतों और पर्वतों की ही अनुभूति होती।

"कुतिया चूमी! मटका चाटा! येरोश्का मामा ने! येरोश्का मामा ने!" अचानक खिड़की तले लट्टू घुमा रहे लड़के छोटी गली की ओर मुंह करके चिल्लाने लगे। "कुतिया चूमी! कटार बेच खायी!" झुंड बनाते और पीछे हटते लड़के चिल्ला रहे थे।

यह शोर येरोश्का मामा को देखकर मचा था, जो कंधे पर बंदूक और कमरबंद पर कुछेक फ़ेज़ेंट लटकाये शिकार से लौट रहा था।

"हां-हां, बच्चो, मुझसे पाप हुआ! पाप हुआ!" अपनी बांहें ज़ोरों से झुलाते और गली के दोनों ओर खिड़कियों में झांकते हुए वह बोला। "कुतिया को बेच खाया, पाप हुआ मुझसे!" उसने फिर से कहा। प्रत्यक्षतः उसे गुस्सा आ रहा था, लेकिन बच्चों की बातों की परवाह न करने का वह दिखावा कर रहा था।

ओलेनिन बूढ़े शिकारी के साथ बच्चों का ऐसा बर्ताव देखकर हैरान हुआ, इससे भी अधिक आश्चर्य उसे उस आदमी के भावमय चेहरे और डील-डौल को देखकर हुआ, जिसे सब येरोश्का मामा कहते थे।

"बाबा! ओ, कज़्ज़ाक बाबा!" उसने आवाज़ लगायी। "इधर आना तो।"

बूढ़ा खिड़की में झांककर थम गया।

"नमस्ते, भले आदमी," छोटे-छोटे कटे बालोंवाले सिर से अपनी टोपी उठाते हुए उसने कहा।

"नमस्ते, भले आदमी," ओलेनिन ने जवाब दिया। "ये लड़के क्या चिल्ला रहे हैं?"

येरोश्का मामा खिड़की के पास आ गया।

"कुछ नहीं, चिढ़ा रहे हैं मुझ बूढ़े को। कोई बात नहीं। मुझे उलटे अच्छा लगता है। खुश हो लें मामा का मज़ाक उड़ाकर," उसने उस दृढ़, नपे-तुले स्वर में कहा, जिसमें वयोवृद्ध बोलते हैं। "तुम क्या फ़ौजियों के परधान हो?"

"नहीं, मैं तो कैडेट हूं। ये फ़ेज़ेंट कहां मारे?" ओलेनिन ने पूछा।

"जंगल में तीन मुर्गियां मारीं," बूढ़े ने जवाब दिया और अपनी चौड़ी पीठ खिड़की की ओर घुमा दी, जहां उसने तीन फ़ेज़ेंट मुर्गियों के सिर अपने कमरबंद में खोंसकर उन्हें लटका रखा था। उनके खून से उसका कोट सन रहा था।

"तुमने कभी देखी नहीं क्या?" उसने पूछा। "चाहो तो ले लो दो। यह लो!" और उसने दो फ़ेज़ेंट खिड़की के अंदर बढ़ा दिये। "तुम भी शिकारी हो क्या?"

"हां। मैंने मुहिम में चार फ़ेज़ेंट मारे थे।"

"चार? बहुत मारे!" बूढ़े ने व्यंग्य से कहा। "पीने के भी शौकीन हो? चिख़ीर पीते हो?"

"क्यों नहीं? पीता भी हूं शौक से।"

"भई वाह, तुम तो चोखे जवान हो। हम-तुम कुनाक* होंगे," येरोश्का मामा ने कहा।

"अंदर आओ न," ओलेनिन बोला। "चिख़ीर पियेंगे।"

"चलो, आ जाता हूं," बूढ़े ने कहा। "ये फ़ेज़ेंट तो संभालो।"

बूढ़े के चेहरे से स्पष्ट था कि कैडेट उसे अच्छा लगा है और वह तुरंत ही भांप गया है कि कैडेट से मुफ़्त में पी जा सकती है, सो उसे एक जोड़ा फ़ेज़ेंट भी दिये जा सकते हैं।

कुछ क्षण पश्चात दरवाज़े पर येरोश्का मामा की आकृति प्रकट हुई। अब कहीं ओलेनिन ने देखा कि कितना भीमकाय है यह आदमी, कैसा डील-डौल है उसका, हालांकि झक सफ़ेद दाढ़ीवाला उसका लाल-भूरा चेहरा उम्र और मेहनत से पड़ी गहरी झुर्रियों से भरा हुआ था। उसकी टांगों, बांहों और कंधों की मांसपेशियां ऐसी भरी हुई थीं, जैसी कि केवल जवानी में ही होती हैं। उसके सिर पर छोटे-छोटे बालों के बीच गहरे घावों के निशान दिखाई दे रहे थे। नसदार मोटी गर्दन पर बैलों की गर्दन जैसी मोटी परतें थीं। गंठीले हाथों पर खरोंचें पड़ी हुई थीं। उसने सहज ही, हौले से दहलीज़ लांघी, बंदूक उतारकर एक कोने में रखी, तेज़ नज़र डालकर घर का माल-असबाब आंका, और कच्चे चमड़े के अपने जूते पहने दबे पांव कमरे के बीचोंबीच आ खड़ा हुआ। उसके आते ही कमरे में तेज़ गंध

---

*कुनाक – जिगरी दोस्त, जिसके लिए सब कुछ न्योछावर किया जा सकता है। – अनु०

भर गयी, किंतु वह अप्रिय नहीं थी – यह चिख़ीर, वोद्का, बारूद और जमे ख़ून की मिली-जुली गंध थी।

येरोश्का मामा ने कमरे के कोने में लगी देवप्रतिमाओं के सामने सिर झुकाया, दाढ़ी पर हाथ फेरा और तब ओलेनिन के पास आकर अपना मोटा काला हाथ उसकी ओर बढ़ाया।

"कोशकिल्दी!" वह बोला। "यह तातारों की नमस्ते है, मतलब है तुम्हारे घर में अमन-चैन हो।"

"कोशकिल्दी! मुझे पता है," उसकी ओर हाथ बढ़ाते हुए ओलेनिन ने जवाब दिया।

"ख़ाक जानते हो, कुछ भी तो नहीं जानते तुम, बुद्धू!" येरोश्का मामा ने उलाहने से सिर हिलाते हुए कहा। "तुम्हें कोई कोशकिल्दी कहे, तो जवाब देना चाहिए: अल्लाह राज़ी बो सुन, मतलब अल्लाह तुम्हें राज़ी-खुशी रखे। समझे, भले आदमी, कोशकिल्दी नहीं। मैं तुम्हें सब कुछ सिखा दूंगा। हमारे यहां एक इल्या मोसेइच था, तुम्हारा, रूसी आदमी। हम दोनों कुनाक थे। बड़ा चोखा आदमी था। पियक्कड़, चोर, शिकारी, क्या कमाल का शिकारी था! मैंने उसे सब कुछ सिखाया था।"

"तुम मुझे क्या सिखाओगे, बाबा?" ओलेनिन ने पूछा। इस बूढ़े में उसकी दिलचस्पी बढ़ती जा रही थी।

"तुम्हें शिकार पर ले जाऊंगा, मछली पकड़ना सिखाऊंगा, चेचेन दिखाऊंगा, कहोगे तो छोकरी तुम्हारे लिए ला दूंगा। ऐसा आदमी हूं मैं। मखौलिया हूं मैं, मखौलिया!" और बूढ़ा हंस दिया। "मैं बैठूंगा, भले आदमी, थक गया हूं। कर्गा?" प्रश्नसूचक स्वर में उसने कहा।

"कर्गा का क्या मतलब है?" ओलेनिन ने पूछा।

"इसका मतलब है: अच्छा, जार्जियावालों की बोली में। मैं भी ऐसे बोलता हूं; मेरा तकिया कलाम है। कर्गा, कर्गा, बस, ऐसे ही कहता रहता हूं। अच्छा तो, भले आदमी, चिख़ीर तो मंगाओ। अरदली तो है न तुम्हारे पास? है? इवान!" बूढ़े ने आवाज़ लगायी। "तुम्हारे यहां तो सभी सिपाही इवान होते हैं। तुम्हारा अरदली भी इवान ही है क्या?"

"ठीक कहा तुमने उसका नाम इवान ही है। वन्यूशा*! जाओ, ज़रा मालकिन से चिख़ीर लेकर आओ।"

---

* वन्यूशा इवान नाम का ही स्नेहसूचक रूप है। – अनु०

"इवान हुआ, वन्यूशा हुआ – एक ही बात है। पर तुम्हारे सभी सिपाही इवान ही क्यों होते हैं? इवान!" बूढ़े ने फिर से आवाज़ दी। "भैया, कहना उस पीपे में से दें जो अभी खोला है। इनके यहां गांव में सबसे बढ़िया चिख़ीर है। और देख, दो बोतलों के तीस कोपेक से ज़्यादा नहीं देना, नहीं, वह चुड़ैल बुढ़िया तो लूट के खुश ही होगी।... हमारे लोग भी बड़े मूरख हैं," वन्यूशा के बाहर चले जाने पर येरोश्का मामा ने मानो भेद की बात बताने के स्वर में आगे कहा। "ये तो तुम लोगों को इंसान ही नहीं समझते। तुम तो इनके लिए तातारों से भी गये-गुज़रे हो। कहते हैं, रूसी हैं, अधर्मी हैं। मैं तो यह कहता हूं कि तुम चाहे सिपाही हो, हो तो आदमी ही, आत्मा तो तुम्हारे अंदर भी है। ठीक कहा न? इल्या मोसेइच भी सिपाही था, लेकिन आदमी क्या पूरा सोना था! ठीक है न, भले आदमी? इसीलिए तो ये हमारे लोग मुझे पसंद नहीं करते। मेरी बला से! मैं तो मनमौजी हूं, मुझे सब अच्छे लगते हैं, मुझ येरोश्का को! यह बात है, भले आदमी!"

और बूढ़े ने प्यार से नौजवान का कंधा थपथपाया।

१२

वन्यूशा ने इस बीच अपना गृहस्थी का बंदोबस्त पूरा कर लिया था, कम्पनी के हज्जाम से वह दाढ़ी भी मुंडवा आया था, और पतलून के पायंचे उसने घुटनों तक ऊंचे बूटों से बाहर निकाल रखे थे, जिससे यह पता चलता था कि कम्पनी ने आरामदेह जगह पर डेरा डाल रखा है। उसका मिज़ाज अब खूब अच्छा था। वह बूढ़े को सद्भाव से तो नहीं पर बड़े ध्यान से देख रहा था, जैसे कि वह कोई अनदेखा जंगली जानवर हो। फ़र्श पर बूढ़े की फैलायी गंदगी देखकर उसने सिर हिलाया और फिर एक बेंच तले रखी दो खाली बोतलें उठाकर मकान मालकिन के पास चला गया।

"नमस्ते, मेहरबानो," वह बोला। उसने तय कर लिया था कि अधिक से अधिक विनम्रता दिखायेगा। "हमारे मालिक ने चिख़ीर खरीदने को कहा है; मेहरबानी करके थोड़ी दे दो, भले लोगो।"

बुढ़िया ने कुछ जवाब नहीं दिया। लड़की छोटे-से तातार आइने के

सामने खड़ी सिर पर रूमाल बांध रही थी। उसने चुपचाप सिर घुमाकर वन्यूशा पर नजर डाली।

"मैं पैसे दूंगा, मेहरबानो," वन्यूशा ने जेब में सिक्के खनकाते हुए कहा। "ग्राप किरपा करो, तो हम भी ग्रच्छाई बरतेंगे," वह ग्रागे बोला।

"कितनी चाहिए?" बुढ़िया ने रूखे स्वर में पूछा।

"दो बोतल।"

"जा, रानी, उंडेल दे इन्हें," उलीत्का बीबी ने बेटी से कहा। "खुले पीपे में से देना, लाडो।"

लड़की ने चाबियां ग्रौर सुराही ली ग्रौर वन्यूशा के साथ बाहर ग्रा गयी।

"बाबा, यह तो बताग्रो, यह लड़की कौन है?" ग्रोलेनिन ने मर्यान्का को ग्रोर इशारा करते हुए पूछा, जो खिड़की के सामने से गुज़र रही थी।

बूढ़े ने ग्रांख मारकर नौजवान को टहोका दिया।

"ठहरो ज़रा," उसने कहा ग्रौर खिड़की में से सिर बाहर निकाला। "खें! खें!" वह खखारने ग्रौर घरघराने लगा। "मर्यान्का, रानी! मर्या-न्का, प्यारी! मुझसे प्यार कर ले, जान! मैं तो मखौलिया हूं," ग्रोलेनिन की ग्रोर मुंह करके वह फुसफुसाया।

लड़की ने सिर तक नहीं घुमाया। ज़ोर से ग्रौर एकसार गति से बांहें झुलाते हुए वह कज़्ज़ाक ग्रौरतों की खास बांकी, मस्तानी चाल से खिड़की के पास से चलती गयी। परछाईं में छिपी ग्रपनी काली ग्रांखें ही बस उसने बूढ़े की ग्रोर घुमायीं।

"मुझसे प्यार कर ले, सुखी रहेगी!" येरोश्का ने चिल्लाकर कहा ग्रौर फिर ग्रांख मारकर ग्रोलेनिन पर प्रश्नसूचक दृष्टि डाली। "मैं चोखा ग्रादमी हूं, मखौलिया हूं," उसने कहा। "है न पूरी रानी? हैं?"

"बड़ी प्यारी है," ग्रोलेनिन ने कहा। "इसे यहां बुलाग्रो तो।"

"नहीं, नहीं!" बूढ़ा बोला। "इसका रिश्ता लुकाश्का से हो रहा है। लुकाश्का चोखा कज़्ज़ाक है, ग्रसल जिगीत है, ग्रभी उस रोज़ उसने एक ग्रवरेक मारा है। मैं तुम्हें इससे ग्रच्छी ढूंढ़ दूंगा। ऐसी ला दूंगा कि रेशम-चांदी से लदी फिरेगी। मैंने कह दिया तो बस करके रहूंगा। हूर ला दूंगा।"

"बूढ़े होकर ऐसी बातें करते हो!" ओलेनिन ने कहा। "यह तो पाप है!"

"पाप? कैसा पाप?" बूढ़े ने दृढ़तापूर्वक जवाब दिया। "अच्छी लड़की को निहारना पाप है? उसके साथ मौज करना पाप है? या उसे प्यार करना पाप है? तुम्हारे यहां क्या ऐसा है? नहीं, मेरे बाप, यह पाप नहीं, यह तो मुक्ति है। भगवान ने तुम्हें बनाया, भगवान ने ही लड़की को बनाया। सब कुछ उसी ने बनाया है, भैया मेरे। सो अच्छी लड़की को निहारना पाप नहीं है। वह तो बनी ही इसलिए है कि उसे प्यार करो, उसे देखकर खुश होओ। मैं तो बस यही समझता हूं, भले आदमी।"

अहाता पार करके मर्यान्का एक ठंडी, अंधेरी कोठरी में घुसी, जो लकड़ी के गोल पीपों से भरी हुई थी। एक पीपे के पास जाकर मर्यान्का ने आदतन प्रार्थना के शब्द कहे और उसमें पंप डाला। वन्यूशा दरवाज़े पर खड़ा था और उसे देखकर मुस्करा रहा था। उसे यह बात बड़ी हास्यास्पद लग रही थी कि मर्यान्का सिर्फ़ एक कमीज़ पहने है, जो पीछे से तंग है और आगे से ज़रा ऊपर को उठी हुई। इससे भी अधिक हास्यास्पद उसे यह लग रहा था कि वह गले में चांदी के सिक्कों की हमेल पहने है। वह सोच रहा था कि यह सब रूसियों जैसा नहीं है और उनके यहां ऐसी लड़की को देखकर सब बहुत हंसेंगे। "मालिक से कहूंगा, स्वाद बदलने को ला फ़िल कोम से त्रे ब्ये*," उसने सोचा।

"अरे, शैतान, क्या रोशनी रोके खड़े हो!" अचानक लड़की चिल्लायी। "लाओ, सुराही इधर दो।"

सुराही में ठंडी लाल अंगूरी भरकर मर्यान्का ने वन्यूशा को दे दी।

"पैसे मां को दो," वन्यूशा का पैसों के साथ आगे बढ़ा हाथ परे झटककर उसने कहा।

वन्यूशा हंस दिया।

"आप इतनी नाराज़ क्यों हैं, जी? हम क्या इतने बुरे हैं?" उसने सौहार्दमय स्वर में कहा और जब तक मर्यान्का पीपा बंद करती रही वह पांव बदलता वहीं खड़ा रहा।

वह हंस पड़ी।

"आप क्या बहुत भले हैं?"

---

* यह लड़की बड़ी अच्छी है। (भ्रष्ट फ़ांसीसी)

"हमारे मालिक और हम तो बहुत ही भले हैं," वन्यूशा ने पूरे विश्वास से कहा। "हम तो इतने भले हैं कि जहां-जहां हम ठहरे सभी जगह घर के मालिक हमारे शुक्रगुज़ार रहे। ऊंचे घराने के हैं हमारे मालिक।"

लड़की उसकी बातें सुनती खड़ी थी।

"तुम्हारा मालिक क्या शादीशुदा है?" उसने पूछा।

"नहीं! हमारे मालिक अभी जवान हैं, अभी उनका ब्याह नहीं हुआ। ऊंचे घराने के लोग कभी छोटी उमर में शादी-ब्याह नहीं करते," वन्यूशा ने समझाते हुए कहा।

"हुं! खा-खाके भैंसा हो रहा है और शादी करने को जवान है! वह क्या तुम सब का परधान है?" मर्यान्का ने पूछा।

"हमारे मालिक कैडेट हैं, मतलब अभी अफ़सर नहीं हुए। मगर हैसियत उनकी जनरल से भी बढ़कर है—बड़े ऊंचे आदमी हैं। हमारे कर्नल तो क्या, ज़ार तक उन्हें जानते हैं," वन्यूशा ने घमंड से बताया। "हम दूसरे फ़ौजियों जैसे भूखे-नंगे नहीं हैं। हमारे तो अब्बाजान सीनेटर हैं; हज़ार से ऊपर किसान थे उनके। हमें भी हज़ार-हज़ार रूबल भेजते हैं। इसीलिए सब हमें पसंद करते हैं। दूसरा तो कोई होने को कप्तान होता है, पर जेब खाली। क्या फ़ायदा ऐसे कप्तान का?"

"जाओ, कोठरी बंद करूं," मर्यान्का ने उसे टोक दिया।

वन्यूशा ने अंगूरी लाकर ओलेनिन को दी और कहा कि ला फ़िल से त्रे जुली*, और तुरंत ही भोंदुओं-सी हंसी हंसता बाहर चला गया।

१३

इस बीच गांव के चौक पर सांझ का बिगुल बज गया। लोग अपने काम से लौट आये। गांव के फाटक के पास सुनहरी धूल के बादल उड़ाती गायों-भैंसों का झुंड रंभा रहा था। लड़कियां-औरतें गलियों-अहातों में भाग-दौड़ करने लगीं, अपने-अपने ढोर-डंगर को ले जाने लगीं। दूर की हिमाच्छादित चोटियों के पीछे सूरज छिप गया। धरती और आकाश पर एक नीली-सी छाया फैल गयी। अंधेरे में छिप रहे बागों के ऊपर पहले तारे मुंह

---

* लड़की बड़ी सुंदर है।

दिखाने लगे और गांव मे आवाजें धीमी पड़ने लगीं। ढोरों को देख-भालकर, कज्जाक औरतें गलियों के नुक्कड़ों पर जमा हो रही थीं और सूरजमुखी के बीज खाती हुई चबूतरों पर बैठ रही थीं। दो गउएं और एक भैंस दुहकर मर्यान्का भी ऐसी ही एक मंडली में आ मिली।

इस मंडली में कुछ औरतों और लड़कियों के साथ एक बूढ़ा कज्जाक भी था।

चर्चा मारे गये अबरेक की हो रही थी। कज्जाक सुना रहा था, औरतें पूछ रही थीं।

"मैं कहूं, इनाम तो बड़ा मिलेगा?" एक औरत ने पूछा।

"और नहीं तो क्या? सुना है, उसे क्रास देंगे।"

"मोसेव तो उसे परेशान कर ही रहा था। बंदूक छीन ली थी, वह तो किज़्ल्यार में बड़े अफ़सरों को पता चल गया।"

"यह मोसेव है ही कमीना!"

"सुना, लुकाश्का आया है," एक लड़की ने कहा।

"नज़ारका के साथ याम्का के यहां मौज कर रहे हैं।" (याम्का अनब्याही बदनाम कज्जाक औरत थी, जिसने अपने घर में भठियारखाना खोल रखा था।) "कहते हैं, आधी बाल्टी पी गये हैं।"

"कितना खुशकिस्मत है यह झपट्टू!" किसी ने कहा। "वाकई झपट्टू है! हां, जवान चोखा है! कैसा फुर्तीला है! मन का भी सच्चा है। बाप भी इसका ऐसा ही था, किर्याक चचा! बिल्कुल बाप पर गया है। वह मारे गये थे तो सारा गांव दहाड़ें मार-मारकर रोया था... लो, वो आ रहे हैं," बोलनेवाली ने आगे कहा और गली में आ रहे कज़्ज़ाकों की ओर इशारा किया। "येर्गुशोव भी इनके साथ हो लिया। कैसा पियक्कड़ है!"

लुकाश्का, नज़ारका और येर्गुशोव आधी बाल्टी वोद्का पीकर लड़कियों के पास आ रहे थे। तीनों के चेहरे, सदा से अधिक लाल हो रहे थे, ख़ास तौर पर येर्गुशोव का चेहरा। वह लड़खड़ा रहा था और ज़ोर-ज़ोर से हंसते हुए बार-बार नज़ारका को टहोका दे रहा था।

"अरी, छोकरियो, गाती क्यों नहीं?" वह लड़कियों पर चिल्लाया। "हम मौज मना रहे हैं, तुम गाओ, मैंने कहा न।"

"मज़े में रहे? मज़े में रहे?" इन शब्दों के साथ औरतों-लड़कियों ने कज़्ज़ाकों का स्वागत किया।

"गायें क्यों? कोई त्योहार है क्या?" एक औरत बोली। "तुमने चढ़ा ली है, तुम्हीं गाओ।"

येर्गुशोव ने ठहाका मारा और नज़ारका को टहोका दिया:

"तू शुरू कर! मैं भी शामिल हो जाऊंगा, मैं इस काम में तेज़ हूं, मैंने कहा न।"

"सो गयीं क्या, हमारी हूरें?" नज़ारका बोला। "हम तो चौकी से जश्न मनाने आये हैं। लुकाश्का का जश्न मना रहे हैं।"

लुकाश्का ने मंडली के पास आकर अपनी टोपी हौले से सिर के थोड़ी ऊपर उठायी। उसका चेहरा और गर्दन लाल थी। वह धीमे, शांत स्वर में बोल रहा था, लेकिन उसकी सौम्यता, उसकी मंथर गतियां नज़ारका की सारी वाचालता और हलचल से कहीं अधिक जीवन और शक्ति से ओत-प्रोत थीं। वह मस्ती में आये बछेड़े जैसा लग रहा था, जो अपनी पूंछ ऊपर उठाकर, फुफकार भरकर सहसा मूर्तिवत खड़ा हो जाता है। लुकाश्का लड़कियों के सामने शांत खड़ा था, बस आंखों ही आंखों में हंस रहा था; कभी अपने मस्त साथियों और कभी लड़कियों की ओर वह देख रहा था, मगर बोल कम ही रहा था।

जब मर्यान्का नुक्कड़ पर आयी तो लुकाश्का ने हाथ की दृढ़, मंद गति से टोपी थोड़ी ऊपर उठायी, ज़रा परे हटा और फिर उसके सामने खड़ा हो गया—एक पांव ज़रा एक ओर को हटाकर, दोनों अंगूठे पेटी में दबाकर और कटार से खेलते हुए। उसके अभिवादन के उत्तर में मर्यान्का ने सिर हल्का-सा झुकाया और चबूतरे पर बैठकर बीच खाने लगी। लुकाश्का एकटक मर्यान्का को देखता जा रहा था और सूरजमुखी के बीज खाते हुए छिलके थूकता जा रहा था। मर्यान्का के आने पर सब चुप हो गये थे।

"तो, कितनी देर रहोगे?" चुप्पी तोड़ते हुए एक औरत ने पूछा।

"सुबह तक," लुकाश्का ने संयत स्वर में कहा।

"अच्छा, भगवान करे तुम्हारी किस्मत और चमके," बूढ़ा कज़्ज़ाक बोला। "मुझे बड़ी खुशी हुई है, मैं अभी कह रहा था।"

"मैं भी तो कहता हूं," मस्त येर्गुशोव ने हंसते हुए बीच में अपनी बात जोड़ी। "मेहमान कितने हैं!" उधर से गुज़रते सिपाही की ओर इशारा करते हुए उसने कहा। "सिपाहियों की वोद्का बढ़िया होती है, बड़ी अच्छी लगती है!"

"तीन शैतानों को हमारे यहां भेज दिया है," एक कज्ज़ाक औरत ने कहा। "दादा तो गांव के परधान के पास भी गये थे, पर कहते हैं, कुछ नहीं हो सकता।"

"आहा! जान पर आ पड़ी?" येर्गुशोव ने कहा।

"तमाकू की बू फैला दी न?" दूसरी औरत ने पूछा। "अरे, तमाकू फूंकना है गो बाहर अहाते में फूंको जितना जी चाहे—अंदर नहीं जाने दूंगी। परधान आये, तो भी न जाने दूं। कुछ चुरा लिया तो? इस शैतान परधान ने अपने यहां तो किसी को नहीं ठहराया।"

"अच्छा नहीं लगता न?" येर्गुशोव फिर से बोला।

"कहते हैं लड़कियों के लिए हुक्म आया है—उन्हें सिपाहियों का बिस्तर लगाना होगा और उन्हें शहद के साथ चिख़ीर पिलानी होगी," नज़ारका ने लुकाश्का की भांति पांव एक ओर को हटाकर रखते हुए कहा और उसी की भांति अपनी टोपी पीछे को सरका दी।

येर्गुशोव ने ठहाका मारा और पास बैठी लड़की को पकड़कर बांहों में भर लिया।

"सच कहता हूं।"

"चल हट, चिमटू," लड़की चीखी। "तेरी घरवाली से कह दूंगी।"

"कह दे!" वह चिल्लाया। "नज़ारका सच कहता है; हुकुमनामा आया था, वह तो पढ़ा-लिखा है। सच बात है।" और वह अगली लड़की को बांहों में भरने लगा।

"अरे, क्या पीछे पड़ गया, छुट्टे!" गुलाबी, गोल चेहरेवाली उस्तेन्का हंसते हुए चीखी और उसने उसे परे धकेलने के लिए हाथ ऊपर उठाये।

कज़्ज़ाक पीछे हटा और गिरते-गिरते बचा।

"देखो तो, कहते हैं लड़कियों में ताकत नहीं होती: इसने तो मार ही डाला था।"

"चल हट चिमटू, कौन शैतान तुझे खींच लाया चौकी से," उस्तेन्का ने कहा और मुंह फेरकर फिर से हंसने लगी। "तू तो सो ही रहा था जव अबरेक आया? वह तुझे मार डालता न, अच्छा ही होता।"

"तब तो तू दहाड़ें मारती!" नज़ारका ने हंसते हुए कहा।

"अजी हां, दहाड़ें ही मारूंगी!"

"देखो तो, इसे कोई दुख ही नहीं। मारती दहाड़ें? क्यों, नज़ारका?" येर्गुशोव ने कहा।

लुकाश्का सारा समय टकटकी लगाये मर्यान्का को देखता रहा था। उसकी इस नजर से लड़की लजा रही थी।

"क्यों मर्यान्का, तुम्हारे यहां बड़े अफ़सर को ठहराया है?" उसके पास सरकते हुए लुकाश्का ने पूछा।

मर्यान्का ने सदा की ही भांति एकदम जवाब नहीं दिया, धीरे से नजरें उठाकर कज्जाकों को देखा। लुकाश्का आंखों ही आंखों में हंस रहा था, मानो इस समय उन दोनों के बीच इस बातचीत से अलग ही कुछ घट रहा हो।

"हां, इनके लिए तो अच्छा है, इनके दो मकान हैं," मर्यान्का के बदले एक औरत ने जवाब दिया। "फ़ोमुश्किन के घर भी एक अफ़सर को ठहराया है। कहते हैं, उसने अपने सामान से सारा कमरा ही घेर लिया है, अपने घरवालों के लिए उठने-बैठने की जगह ही नहीं रही। यह भी कभी देखा-सुना है कि झुंड के झुंड सिपाही गांव में खदेड़ लाये! बताओ तो, कोई करे तो क्या करे?!" उसने कहा। "कौन सा मुआ काम करेंगे ये यहां!"

"सुना है तेरेक पर पुल बांधेंगे," एक लड़की ने कहा।

"मैंने सुना है कि गड्ढा खोदेंगे," उस्तेन्का के पास आते हुए नज़ारका बोला। "वहां लड़कियों को बिठाया जायेगा क्योंकि वे बांके जवानों को प्यार नहीं करतीं।" और फिर से उसने अपनी मसखरी दिखायी, जिस पर सब खिलखिलाकर हंसे। येर्गुशोव तुरंत ही मर्यान्का को छोड़कर उससे आगे बैठी औरत को गले लगाने लगा।

"मर्यान्का को क्यों छोड़ दिया? बारी-बारी से सबको चूम न," नज़ारका ने कहा।

"नहीं, मेरी बुढ़िया ज़्यादा मीठी है," हाथ-पांव मारती बुढ़िया को चूमते हुए वह चिल्लाया।

"अरे, मेरा दम घोंट देगा!" वह हंसते हुए चिल्ला रही थी।

गली के दूसरे छोर से आयी कदमों की नपी-तुली धब-धब से ठहाके बंद हो गये। वर्दी के लम्बे कोट पहने और कंधे पर बंदूकें लटकाये तीन सिपाही बारूद गाड़ी पर पहरा बदलने जा रहे थे। बूढ़े रिसालदार नायब ने कज़्ज़ाकों पर गुस्से भरी नजर डाली और सिपाहियों को इस तरह ले चला कि रास्ते

में खड़े लुकाश्का और नज़ारका को एक ओर को हटना पड़े। नज़ारका तो हट गया, लेकिन लुकाश्का ने आंखें सिकोड़कर बस अपना सिर और चौड़ी पीठ घुमायी – अपनी जगह से वह हिला तक नहीं।

"लोग खड़े हैं, बचकर निकलो," सिपाहियों पर हिकारत भरी तिरछी नजर डालकर उसने कहा।

सिपाही धूल भरे रास्ते पर कदम भरते चुपचाप पास से निकल गये।

मर्यान्का हंस दी और उसकी देखा-देखी सभी लड़कियां हंसने लगीं।

"क्या सज-धजकर निकले हैं!" नज़ारका ने कहा। "पादरियों के भी बाप हैं," और उसने सिपाहियों की नकल उतारते हुए कुछ क़दम भरे।

एक बार फिर सब ठहाका मारकर हंस पड़े।

लुकाश्का धीमे-धीमे मर्यान्का के पास आया।

"अफ़सर को कहां ठहराया है?" उसने पूछा।

मर्यान्का पल भर को सोचती रही।

"उसे नया मकान दे दिया है," उसने कहा।

"बूढ़ा है या जवान?" लड़की के पास बैठते हुए लुकाश्का ने पूछा।

"मैं क्या पूछने गयी हूं?" लड़की ने जवाब दिया। "उसके लिए चिख़ीर लेने गयी थी तो देखा था खिड़की में से – येरोश्का मामा के साथ बैठा था। लाल बालोंवाला लगता है। गाड़ी भर तो सामान लाये हैं।"

उसने नज़रें झुका लीं।

"कितना खुश हूं मैं कि चौकी से छुट्टी मिल गयी!" चबूतरे पर लड़की के पास सरकते हुए और उसकी आंखों में झांकते हुए लुकाश्का ने कहा।

"कब तक रहोगे?" मर्यान्का ने हल्की-सी मुस्कान के साथ पूछा।

"सुबह तक। कुछ बीज तो दो," हाथ बढ़ाते हुए लुकाश्का बोला।

मर्यान्का खुलकर मुस्करायी और अपनी जेब खोलकर बोली: "सारे नहीं लेना।"

"सच, दिन-रात तुम्हारी ही याद आती रही, भगवान कसम," शांत-संयत स्वर में फुसफुसाते हुए लुकाश्का ने कहा और फिर उससे और भी सटकर, आंखों ही आंखों में हंसते हुए उसके कान में कुछ कहने लगा।

"कह दिया न, नहीं आऊंगी," सहसा मर्यान्का ने ज़ोर से कहा और उससे परे झुक गयी।

"सच... मैं तुम्हें क्या कहना चाहता था," लुकाश्का बुदबुदाया, "भगवान कसम! मर्यान्का, आ जाना न।"

मर्यान्का ने इंकार में सिर हिलाया, लेकिन मुस्कराती रही।

"मर्यान्का दीदी! दीदी! मां ने कहा, खाना खाने आओ," औरतों की ओर दौड़ते आ रहे मर्यान्का के छोटे भाई ने चिल्लाकर कहा।

"अभी आती हूं," मर्यान्का ने जवाब दिया। "तू जा, भैया, मैं अभी आती हूं।"

लुकाश्का ने खड़े होकर सिर पर टोपी ज़रा ऊपर उठायी।

"मुझे भी घर चलना चाहिए, यही अच्छा होगा," उसने लापरवाही का दिखावा करते हुए, लेकिन साथ ही अपनी मुस्कान मुश्किल से छिपाते हुए कहा और नुक्कड़ के पीछे ओझल हो गया।

इस बीच रात घिर आयी थी। अंधेरे आकाश पर तारे छिटक आये थे। गलियां अंधेरी और सूनी थीं। नज़ारका लड़कियों के साथ चबूतरे पर रह गया था, उनका हंसी-ठट्ठा सुनायी दे रहा था। उधर लुकाश्का दबे पांव लड़कियों से थोड़ी दूर चला गया और फिर बिल्ली की तरह झुककर सहसा ज़रा भी आहट किये बिना दौड़ चला—कमर पर झूलती कटार को हाथ से थामे हुए। वह अपने घर को नहीं, बल्कि कार्नेट के घर की ओर जा रहा था। दौड़ते-दौड़ते उसने दो गलियां पार कीं, फिर छोटी गली में मुड़ गया और अपना कोट समेटकर बाड़ की परछाईं में ज़मीन पर बैठ गया। "देखो तो, कार्नेट की बेटी को," वह मर्यान्का के बारे में सोच रहा था। "हंसी-मज़ाक भी नहीं करती शैतान! कोई बात नहीं, वक़्त आने दो।"

किसी स्त्री के पास आते पदचापों से उसका ध्यान बंटा। वह कान लगाकर सुनने लगा और फिर मन ही मन हंसा। मर्यान्का सिर झुकाये, तेज़ और एकसार कदम भरती सीधी उसकी ओर चली आ रही थी, चलते-चलते वह एक छड़ी से बाड़ के खूंटों पर ठक-ठक करती जा रही थी। लुकाश्का उठा। मर्यान्का ठिठक गयी।

"उफ़, कैसे कमबख़्त शैतान हो! डरा ही दिया। घर नहीं गये न?" वह बोली और ज़ोर से हंस दी।

लुकाश्का ने एक हाथ से उसका आलिंगन किया और दूसरे से उसका मुखड़ा थामा।

"सुनो तो मैं क्या कहना चाहता था... भगवान कसम!" उसकी आवाज़ कांप और उखड़ रही थी।

"रात को क्या बातें याद आयी हैं," मर्यान्का ने जवाब दिया। "मां इंतज़ार कर रही है, तुम तो अपनी जान के पास जाओ।"

और उसकी पकड़ से छूटकर वह कुछ कदम दूर भाग गयी। अपने अहाते की बाड़ तक पहुंचकर वह थमी और कज़्ज़ाक की ओर मुड़ी, जो उसे थोड़ा रुकने की मिन्नतें करता हुआ उसके साथ-साथ दौड़ रहा था।

"अच्छा, बताओ क्या कहना चाहते हो, रात के पंछी?" और वह फिर से हंस दी।

"तुम मेरी हंसी मत उड़ाओ, मर्यान्का! भगवान कसम! क्या हुआ जो मेरी जान है? भाड़ में जाये वह! तुम बस एक शब्द कह दो, इतना प्यार करूंगा–जो कहोगी, वही कर डालूंगा। यह देखो!" उसने जेब में पैसे खनकाये। "अब हम अच्छी तरह रहेंगे। सब लोग मौज उड़ाते हैं, मैं ही कुछ नहीं कर सकता क्या? तुम तो मुझे कोई खुशी ही नहीं पाने देतीं, मर्यान्का, मेरी रानी!"

लड़की ने कोई जवाब नहीं दिया, वह उसके सामने खड़ी थी और उंगलियां तेज़ी से चलाते हुए छड़ी को छोटे-छोटे टुकड़ों में तोड़ रही थी।

अचानक लुकाश्का ने मुट्ठियां और दांत भींच लिये।

"क्या इंतज़ार ही इंतज़ार करते रहें हम? मैं तुम्हें प्यार नहीं करता क्या, रानी! जो चाहो मेरा कर लो," सहसा उसने भौंहें तानकर कहा और मर्यान्का की दोनों बांहें पकड़ लीं।

मर्यान्का के न चेहरे का और न ही कंठ का शांत भाव बदला।

"पागल मत बनो, लुकाश्का, तुम मेरी बात सुनो," मर्यान्का ने बांहें छुड़ाये बिना, लेकिन साथ ही कज़्ज़ाक को परे हटाते हुए जवाब दिया। "ठीक है, मैं लड़की हूं, पर तुम मेरी बात मानो। मेरा तो कोई बस है नहीं, लेकिन अगर तुम मुझसे प्यार करते हो तो मैं तुम्हें बताती हूं। हाथ तो छोड़ो न, ऐसे ही बता दूंगी। ब्याह मैं तुमसे कर लूंगी, लेकिन बेवकूफ़ी की उम्मीद मुझसे मत रखो," मर्यान्का ने मुंह फेरे बिना कहा।

"ब्याह करोगी? शादी-ब्याह तो हमारे हाथ में नहीं। तुम तो मुझसे प्यार कर लो, मर्यान्का," लुकाश्का बोला। उसकी सारी चिड़चिड़ाहट और गुस्सा अचानक जाते रहे और एक बार फिर उसके चेहरे पर सौम्यता,

विनम्रता और कोमलता के भाव छा गये। वह मुस्करा रहा था और मर्यान्का की आंखों में आंखें डालकर देख रहा था।

मर्यान्का उसकी छाती से लग गयी और उसके होंठों पर उसने कसकर चुंबन लिया।

"मेरे प्यारे!" उसे बार-बार छाती से लगाते हुए वह फुसफुसायी। फिर सहसा छिटककर अलग हो गई और दौड़ चली। पीछे मुड़कर देखे बिना ही वह अपने अहाते के फाटक में घुस गयी।

कज़्ज़ाक के बहुत मिन्नतें करने पर भी कि वह पल भर को और रुक जाये, उसकी बात सुन ले, मर्यान्का नहीं रुकी।

"जाओ! देख लेंगे!" वह बोली। "देखो तो, लगता है किरायेदार मुआ अहाते में घूम रहा है।"

"कार्नेट की बेटी," लुकाश्का मन ही मन सोच रहा था। "ब्याह करेगी! ब्याह तो होगा ही, पर तू मुझे प्यार तो कर।"

नज़ारका उसे याम्का के यहां मिला। थोड़ी देर तक उसके साथ मौज उड़ाने के बाद वह दून्याश्का के घर चला गया। उसकी बेवफ़ाई के बावजूद लुकाश्का ने रात वहीं काटी।

१४

मर्यान्का जब फाटक में घुसी तो ओलेनिन सचमुच ही अहाते में टहल रहा था और उसने लड़की को यह कहते सुना था: "किरायेदार मुआ घूम रहा है"। यह सारी शाम ओलेनिन ने येरोश्का मामा के साथ अपने नये क्वार्टर के ओसारे पर बितायी थी। वन्यूशा से उसने मेज़ बाहर निकलवा ली थी और समोवार, चिख़ीर तथा मोमबत्ती भी। चाय के घूंट भरते और सिगार के कश लेते हुए वह बूढ़े की कहानियां सुनता रहा था, जो उसके पैरों के पास दहलीज़ पर बैठा हुआ था। हवा शांत थी, तो भी मोमबत्ती की लौ लहरा रही थी, रह-रहकर वह फड़फड़ा उठती थी और उसकी रोशनी कभी ओसारे के खंभे को, कभी मेज़ और बर्तनों को तो कभी बूढ़े के सफ़ेद सिर को चमका देती थी। पतंगे मंडरा रहे थे। जब वे मेज़ पर या गिलासों में फड़फड़ाते तो उनके पंखों से धूल-सी झड़ती। कभी वे लौ पर उड़ आते और कभी प्रकाश-वृत्त के बाहर काली हवा में ओझल हो जाते। ओलेनिन येरोश्का के साथ चिख़ीर की पांच बोतलें खाली कर चुका था। येरोश्का

हर बार गिलसियां भरता, एक ग्रोलेनिन को देता, उसकी सेहत का जाम उठाता ग्रौर बोलता जाता, बोलता जाता। वह कज़्ज़ाकों की पुराने ज़माने की ज़िंदगी के बारे में बता रहा था ग्रौर ग्रपने बाप "महाबली" के बारे में, जो ग्रकेला ही चार मन का जंगली सूग्रर मारकर पीठ पर लाद लाता था ग्रौर पीने बैठता तो दो बालटी चिख़ीर पी जाता। उसने ग्रपने ज़माने की ग्रौर ग्रपने दोस्त गीरचिक की बातें सुनायीं, जिसके साथ प्लेग के दिनों में वे तेरेक के पार से नमदे के चोगे चोरी-छिपे लाते थे। उसने यह भी बताया कि कैसे एक बार शिकार पर उसने एक ही सुबह में दो हिरन मारे थे। ग्रपनी "जान" के बारे में उसने बताया, जो रातों में उससे मिलने चौकी पर ग्राती थी। इस सब का वह इतना जीता-जागता ग्रौर इतना सुंदर वर्णन कर रहा था कि ग्रोलेनिन को समय बीतने का कोई ग्रहसास ही नहीं हो रहा था।

"यह बात है, भाई मेरे," वह कह रहा था, "तुम मेरे सुनहरे दिनों में यहां नहीं ग्राये, नहीं तो मैं तुम्हें सब कुछ दिखाता। ग्राज कहते हैं 'येरोश्का ने मटका चाटा', पर तब येरोश्का का सारे इलाक़े में डंका बजता था। किसके पास सबसे ग्रव्वल घोड़ा था? किसके पास गुरदा* की तलवार थी? किसके साथ खाया-पिया जाये, मौज उड़ायी जाये? ग्रहमद ख़ान को मारने पहाड़ों में किसे भेजा जाये? हर बात में येरोश्का ग्रागे। लड़कियां किसे प्यार करती हैं? इसका भी जवाब येरोश्का। क्योंकि मैं सच्चा जिगीत था। पीने में उस्ताद, ग्रसल चोट्टा, पहाड़ों से घोड़ों के झुंड के झुंड उड़ा ले जाता था। गाने मुझसे सुन लो, जो काम चाहो, करा लो। ग्रब तो कज़्ज़ाक भी ऐसे नहीं रहे। देखके मतली ग्राती है। इतने से होते हैं (येरोश्का ने ज़मीन से गज भर ऊपर हाथ उठाया), भोंडे बूट पहन लेते हैं ग्रौर उन्हें देख-देखकर ही खुश होते रहते हैं। या फिर पीकर कुप्पा हो जायेंगे, नशा भी तो इंसानों सा नहीं करते, बस ऐसे ही। ग्रौर मैं कौन था? मैं था येरोश्का चोट्टा; कज़्ज़ाकों के गांवों में तो क्या, पहाड़ों में भी लोग मुझे जानते थे। नवाब तक मुझसे मिलने ग्राते थे। मैं हर किसी का कुनाक था: तातार है तो तातार का, ग्रार्मीनियाई है तो ग्रार्मीनियाई का, सिपाही है तो सिपाही का, ग्रफ़सर है तो ग्रफ़सर का। मेरे लिए

---

*काकेशिया में सबसे क़ीमती तलवारें ग्रौर कटारें उन्हें बनानेवाले कारीगर के नाम से जानी जाती हैं। – ले०

सब बराबर था, बस आदमी पीनेवाला हो। मुझे कहते हैं: तुझे अपने पाप धोने चाहिए – सिपाही के साथ मत पी, तातार के साथ मत खा।"

"कौन कहता है?" ओलेनिन ने पूछा।

"हमारे पादरी, और कौन! तातारों के मुल्ला या काज़ी को सुनो। वह भी कहता है: 'तुम क़ाफ़िर हो, सूअर क्यों खाते हो?' मतलब हर कोई अपना नियम पालता है। पर मेरी सुनो तो सब एक ही बात है। सब कुछ भगवान ने इंसान की ख़ुशी के लिए बनाया है। किसी में पाप नहीं है। अरे, जानवर को ही देखो। वह तो तातारों के सरकंडों में भी रहता है, हमारे सरकंडों में भी। जहां चला गया, वहीं उसका घर है। जो भगवान ने दिया वही खाता है। हमारे लोग कहते हैं इसके लिए नरक में कड़ाहे चाटने पड़ेंगे। मैं सोचता हूं यह सब पाखंड है," थोड़ी देर चुप रहकर उसने अंत में कहा।

"क्या पाखंड है?" ओलेनिन ने पूछा।

"वही जो पादरी कहते हैं। चेर्वलेनया में, भाई मेरे, हमारा एक कप्तान था, मेरा कुनाक था। चोखा आदमी था, मेरे ही जैसा। चेचेनों के हाथों मारा गया। वह कहा करता था कि पादरियों ने ये सब बातें अपने मन से घड़ी हैं। कहता था, मर जाओगे तो क़ब्र पर घास उग आयेगी और बस।" बूढ़ा हंसा। "बड़ा ही निडर था!"

"तुम कितने साल के हो?" ओलेनिन ने पूछा।

"भगवान जाने! सत्तर से ऊपर का होऊंगा। तुम्हारे यहां जब महारानी का राज था* तो मैं छोटा नहीं था। सो तुम हिसाब लगा लो कितने बैठते हैं। सत्तर तो होंगे ही?"

"होंगे। पर अभी भी खूब तगड़े हो।"

"हां, भगवान का शुक्र है। अभी भी भला-चंगा हूं, बिल्कुल भला-चंगा हूं; बस एक औरत ने ही बिगाड़ दिया, चुड़ैल कहीं की..."

"कैसे?"

"बस बिगाड़ ही दिया..."

"अच्छा, जब मरोगे, तो क़ब्र पर बस घास उग आयेगी?" ओलेनिन ने फिर से पूछा।

---

* आशय येकातेरीना द्वितीया से है। जन्म १७२९, शासन काल – १७६२-१७९६। – अनु०

लगता था, येरोश्का ग्रपना विचार साफ़-साफ़ व्यक्त नहीं करना चाहता। थोड़ी देर तक वह चुप रहा।

"तुम क्या सोचते हो? लो, पियो!" मुस्कराते ग्रौर गिलसिया ग्रागे बढ़ाते हुए वह चिल्लाया।

१५

"हां, तो मैं क्या कह रहा था?" याद करते हुए वह ग्रागे बोला। "तो ऐसा ग्रादमी हूं मैं! मैं शिकारी हूं। मेरी टक्कर का दूसरा शिकारी पूरे इलाक़े में नहीं है। जो कहो वही जानवर, वही चिड़िया मैं ढूंढ दूं, दिखा दूं। कहां है, क्या है – सब मुझे पता है। मेरे पास कुत्ते भी हैं, दो बंदूकें भी हैं, जाल हैं, बाज़ है – भगवान की दुग्रा से सब कुछ है। ग्रगर तुम सच्चे शिकारी हो, डींग नहीं हांकते हो तो मैं तुम्हें सब कुछ दिखा दूंगा। पता है, कैसा ग्रादमी हूं मैं? जानवर की खुरी देखते ही मैं पहचान जाता हूं कि कौन जानवर है, कैसा है, कहां वह लेटा, कहां पानी पीने या कीचड़ में लोटने जायेगा। मचान बांधकर रात-रात भर बैठा रहता हूं, घात लगाये। घर पर क्या बैठना! पाप ही करोगे, पीकर धुत्त हो जाग्रोगे। ऊपर से ग्रौरतें ग्रा जायेंगी, उलटी-सीधी बातें करेंगी; लड़के चीखें-चिल्लायेंगे, ऐसे तो ग्रादमी पागल ही हो जाये। संध्या बेला में घर से निकलो – बात ही दूसरी है। कोई ग्रच्छी जगह ढूंढ़ लो ग्रौर सरकंडे दबाकर बैठ जाग्रो – बाट जोहो। जंगल में क्या हो रहा है – सब कुछ तुम्हें मालूम है। तुम ग्रासमान देखते हो, तारे चल रहे हैं, तुम्हें बताते हैं कितने पहर रात बीत गयी। चारों ग्रोर नज़र दौड़ाते हो – जंगल सरसरा रहा है; तुम्हारे कान खड़े हैं – कब झाड़ियों में खड़खड़ हो, सूग्रर कीचड़ में लोटने ग्राये। जवान बाज़ चीखते हैं ग्रौर तुम सुनने लगते हो – जवाब में गांव के मुर्गे बोलेंगे या बत्तखें। बत्तखें कैं-कैं करती हैं तो मतलब ग्रभी ग्राधी रात नहीं हुई। ऐसी सब बातें मुझे मालूम हैं। या फिर कहीं गोली चलने की ग्रावाज़ ग्राती है ग्रौर मन में विचार ग्राने लगते हैं। तुम सोचते हो: किसने गोली चलायी? तुम्हारे जैसा ही कोई कज़्ज़ाक शिकार पर बैठा है क्या? मार लिया उसने जानवर? या बस घायल ही किया है ग्रौर ग्रब वह बेचारा जा रहा है सरकंडों में खून बहाता, बेमतलब खून बह रहा है। छी, बहुत बुरा लगता है मुझे यह, बहुत ही बुरा! क्यों जानवर को खराब किया?

बुद्धू कहीं का! बुद्धू है, निरा बुद्धू! या फिर मन में विचार आता है: 'अबरेक ने किसी बुद्धू कज्जाक को तो नहीं मार डाला?' बस ऐसे विचार मन में घूमते रहते हैं। ऐसे ही एक बार नदी किनारे बैठा था; देखता क्या हूं – ऊपर से पालना बहता आ रहा है, बिल्कुल सही-सलामत पालना, बस एक कोना टूटा हुआ है। उफ़्फ़, कैसे-कैसे विचार मन में आये। किसका है यह पालना? सोचा, हो न हो, तुम्हारे ये शैतान सिपाही पहाड़ के गांव में चले गये होंगे, चेचेन औरतों को झपटा होगा, और किसी शैतान की औलाद ने बच्चे को मार डाला होगा, पांवों से पकड़कर सिर दीवार पर दे मारा होगा। क्यों, नहीं करते क्या ऐसे? ओफ़्फ़, लोगों की छाती में दिल ही नहीं है! ऐसे-ऐसे विचार मन में आये, दिल भर आया। सोचा: हमारे सिपाहियों ने पालना फेंक दिया, औरत को उठा ले गये, घर जला दिया, और अब उसके मरद ने, जिगीत ने बंदूक थाम ली है, नदी पार करके इधर आया है हमारे घर लूटने। कितने ही विचार आते रहते हैं वहां बैठे-बैठे। और जब यह सुनाई देता है कि झाड़-झंखाड़ में सूअरों का कोई झोल टहनियां तोड़ता बढ़ रहा है तो तुरंत ही छाती में जैसे हथौड़ा चलने लगता है: आ जाओ, मेरे प्यारो, इधर आ जाओ! गंध पा लेंगे, तुम सोचते हो, और सांस थामे बैठे रहते हो, लेकिन दिल है कि छाती से निकला पड़ता है: धुक-धुक! धुक-धुक! इस साल बसंत में एक झोल काफ़ी पास आ गया था, नज़र आने लगा था। 'पिता और पुत्र का नाम' लिया और गोली चलाने ही लगा था, पर तभी शूकरी ने घुरघुराकर अपने बच्चों से कहा: 'बच्चो, यहां खतरा है, आदमी बैठा है' – और सब झाड़ियों में तितर-बितर हो गये। जी करता था, सुसरी को कच्चा चबा जाऊं।"

"सूअरी ने भला कैसे बच्चों से कहा कि आदमी बैठा है?" ओलेनिन ने पूछा।

"तुम क्या सोचते हो? तुम्हारे ख़याल में जानवर बेवकूफ़ है? नहीं, वह आदमी से ज़्यादा समझदार है, तुम उसे भले ही सूअर कहते रहो। वह सब कुछ जानता है। अब यही देखो: कोई आदमी तुम्हारे पीछे किसी रास्ते से निकलता है और उसे पता भी नहीं चलता कि तुम यहां से गुज़रे हो, लेकिन सूअर तुम्हारे पैरों का निशान पाते ही सूंघता है और परे भाग जाता है। मतलब उसमें समझ है। तुम्हें तो अपनी गंध का पता नहीं चलता, लेकिन वह सूंघ लेता है। और फिर यह बात भी तो है कि

तुम तो उसे मारना चाहते हो, मगर वह ज़िंदा जंगल में घूमना चाहता है। तुम्हारा नियम यह है, उसका नियम वह है। वह सूअर है, पर तुमसे बुरा नहीं, तुम्हारे जैसा ही भगवान का जीव है। ओह! बुद्धू है आदमी, बुद्धू, निरा बुद्धू!" बूढ़े ने कुछ बार दोहराया और फिर सिर झुकाकर किसी सोच में डूब गया।

ओलेनिन भी विचारों में खो गया, ओसारे से उतर आया और पीठ पीछे हाथ बांधकर चुपचाप अहाते में चक्कर काटने लगा।

एकाएक येरोश्का ने झटके से सिर उठाया और टकटकी लगाकर पतंगों को देखने लगा, जो मोमबत्ती की कांपती लौ पर मंडरा रहे थे और उसमें जल रहे थे।

"अरे बुद्धू, बुद्धू!" वह कहने लगा। "कहां जाता है? बुद्धू! बुद्धू!" वह उठा और अपनी मोटी उंगलियों से पतंगों को परे उड़ाने लगा।

"जल जायेगा, बुद्धू, इधर उड़, कितनी जगह है," वह कोमल स्वर में कह रहा और अपनी मोटी उंगलियों से पतंगे के पर हौले से पकड़ने और परे ले जाकर छोड़ने की कोशिश कर रहा था। "तू तो अपने आप को मार रहा है, मुझे तुझ पर तरस आता है।"

बड़ी देर तक वह बतियाता रहा और बोतल में से थोड़ी-थोड़ी पीता रहा। ओलेनिन अहाते में चक्कर काट रहा था। अचानक फाटक के बाहर फुसफुसाहट सुनकर उसे कुछ आश्चर्य हुआ। अनचाहे ही उसने सांस थाम ली और बाहर से किसी स्त्री के हंसने की आवाज़, पुरुष का स्वर और फिर चुंबन की ध्वनि सुनी। जान-बूझकर घास पर पांवों से सरसर करते हुए वह अहाते के दूसरे छोर पर चला गया। लेकिन कुछ समय बाद टट्टर खड़खड़ाया, गाढ़े रंग का चेर्केस कोट और भेड़ की खाल का सफ़ेद टोप पहने एक कज़्ज़ाक (यह लुकाश्का था) बाड़ के बगल से गुज़रा, और सिर पर सफ़ेद रूमाल बांधे ऊंची नारी ओलेनिन के पास से। मर्यान्का की दृढ़ चाल ने उससे मानो कहा: "न मुझे तुमसे और न ही तुम्हें मुझसे कोई वास्ता है"। घर के ओसारे तक ओलेनिन की आंखें उस पर गड़ी रहीं और फिर उसने खिड़की में से देखा कि कैसे वह रूमाल उतारकर बेंच पर बैठी। सहसा अकेलेपन की उदासी ने, किन्हीं अस्पष्ट कामनाओं और आशाओं ने उसे आ घेरा। न जाने किस से और किस बात के लिए उसे ईर्ष्या हो रही थी।

घरों में ग्राखिरी बत्तियां भी बुझ गयीं। गांव में ग्राखिरी ध्वनियां शांत हो गयीं। टट्टर की बाड़ें, ग्रहातों में सफ़ेद-से नज़र ग्राते मवेशी, घरों की छतें ग्रौर सुघड़ पाप्लर वृक्ष – लगता था सभी कुछ परिश्रम भरे दिन के बाद चैन से गहरी नींद में सो रहा है। दूर के सीलन भरे विस्तार से ही मेंढकों की ग्रनवरत टर्र-टर्र नौजवान के सतर्क कानों तक पहुंच रही थी। पूरब में तारे विरल हो रहे थे ग्रौर बढ़ते उजाले में घुलते प्रतीत होते थे। सिर के ऊपर वे पहले से ग्रधिक घने थे ग्रौर गहराई तक चले गये थे। बूढ़ा सिर हाथ पर टिकाये ऊंघ रहा था। सामने के ग्रहाते में मुर्गा बोल उठा, लेकिन ग्रोलेनिन ग्रभी भी कुछ सोचता हुग्रा ग्रहाते में चक्कर लगा रहा था। कहीं से गाने की ग्रावाज़ ग्रायी। घेरे के पास जाकर वह कान लगाकर सुनने लगा। कुछ स्वरों में गाये जा रहे गीत के हर्षमय सुर उसके कानों में पड़े। सभी स्वरों में एक युवा स्वर विशेषतः सशक्त था।

"पता है, यह कौन गा रहा है?" बूढ़े ने जगकर कहा। "यह लुकाश्का जिगीत है। उसने चेचेन को मारा है, सो खुश हो रहा है। इसमें खुश होने की क्या बात है? बुद्धू है बुद्धू!"

"तुमने कभी किसी को जान से मारा है?" ग्रोलेनिन ने पूछा।

बूढ़ा सहसा दोनों कोहनियां मेज़ पर टिकाकर उठा, ग्रपना चेहरा ग्रोलेनिन के चेहरे के पास ले ग्राया।

"शैतान!" वह चिल्लाया। "क्या पूछते हो? ऐसी बात मुंह से नहीं निकालते। पाप सिर पर चढ़ाते देर नहीं लगती, बिल्कुल देर नहीं लगती! ग्रच्छा, भले ग्रादमी, खा भी लिया, पी भी लिया। ग्रब मैं चला," उसने उठते हुए कहा। "कल ग्राऊं? शिकार पर चलोगे?"

"हां, ग्राना।"

"देख लो, जल्दी उठना पड़ेगा। सोते रहे तो जुर्माना भरना होगा।"

"तुमसे पहले ही उठ लूंगा।"

बूढ़ा चला गया। गीत रुक गया। पदचाप ग्रौर हर्षमय स्वर सुनायी दिये। थोड़ी देर बाद फिर से गीत गाया जाने लगा, लेकिन पहले से ग्रधिक दूरी पर। पहले की ग्रावाज़ों में ग्रब येरोश्का मामा की ग्रावाज़ भी मिल गयी।

"क्या लोग हैं! क्या जीवन है!" ग्रोलेनिन ने सोचा ग्रौर निःश्वास छोड़कर ग्रकेला ही घर के ग्रंदर लौट ग्राया।

येरोश्का मामा एक मामूली कज़्ज़ाक था और अकेला ही रह रहा था। लगभग बीस साल पहले उसकी पत्नी ने अपना पुरातनपंथ त्यागकर रूसी चर्च में बपतिस्मा ले लिया था और उसे छोड़कर एक रूसी सूबेदार से शादी कर ली थी। उसके कोई संतान नहीं थी। यह उसकी डींग नहीं थी कि जवानी में वह गांव का बेजोड़ बांका था। कज़्ज़ाकों के सारे इलाके में सभी उसे उसके पुराने बांकेपन के लिए जानते थे। कितने ही चेचेनों और रूसियों की जानें उसने ली थीं। वह पहाड़ों में लूट-पाट करने जाता था और रूसियों के यहां भी उसने डाके मारे थे, दो बार जेल भी गया था। उसके जीवन का बड़ा भाग जंगल में शिकार करते बीतता था। वहां वह कई-कई दिन रूखी रोटी खाकर रहता था और पानी के अलावा कुछ नहीं पीता था। लेकिन जब वह गांव में होता तो सुबह से शाम तक खाता-पीता, मौज उड़ाता रहता। ओलेनिन के यहां से लौटकर वह दो-एक घंटे सोया और पौ फटने से पहले ही जाग गया। बिस्तर पर लेटा हुआ वह उस आदमी के बारे में सोच रहा था जिससे कल उसका परिचय हुआ था। ओलेनिन की सादगी (सादगी इस अर्थ में कि उसने पिलाने में कंजूसी नहीं की) उसे ख़ासकर पसंद आयी थी। स्वयं ओलेनिन भी उसे अच्छा लगा था। वह हैरान हो रहा था कि क्यों ये रूसी सभी सीधे-सादे और अमीर हैं और क्या वजह है कि ये कुछ भी जानते नहीं, मगर पढ़े-लिखे हैं। वह मन ही मन इन प्रश्नों पर विचार कर रहा था और साथ ही यह भी सोच रहा था कि ओलेनिन से अपने लिए क्या मांगे।

येरोश्का मामा का घर खासा खुला था और पुराना भी नहीं था, परंतु यह साफ़ पता चलता था कि घर में औरत नहीं है। कज़्ज़ाक तो सफ़ाई का बहुत ख़याल रखते हैं, लेकिन यहां घर भर में गंदगी फैली हुई थी और सब कुछ एकदम बेतरतीब था। ख़ून से सना कोट मेज़ पर फेंका हुआ था; बाज़ को खिलाने के लिए नुचा और चीरा कौआ वहां पड़ा हुआ था और उसके पास ही आधी नान भी। कच्चे चमड़े के जूते, बंदूक, कटार, झोला, गीली कमीज़ और फटे-पुराने कपड़े बेंचों पर फैले हुए थे। एक कोने में सड़ांध मारते पानी से भरे टब में जूतों का दूसरा जोड़ा भिगोने के लिए रखा हुआ था। यहीं पर एक बंदूक और शिकार की ढाल भी पड़ी हुई थी। फ़र्श पर एक जाल फेंका हुआ था, पास ही शिकार में मारे कुछ

फ़ेज़ेंट पड़े हुए थे और एक मुर्गी, जिसकी टांग मेज़ के पाये से बंधी हुई थी, मेज़ के गिर्द चक्कर काट रही थी, गंदे फ़र्श पर चोंच मार रही थी। ठंडे पड़े अलावघर में एक बर्तन में कोई दूधिया-सा द्रव भरा हुआ था। अलावघर पर एक शिकरा चीख रहा था और डोरी तोड़ने की कोशिश कर रहा था जबकि पर झड़ा बाज़ अलावघर के सिरे पर शांत बैठा हुआ था, मुर्गी पर तिरछी नज़र डाल रहा था, कभी-कभार वह अपना सिर दायें से बायें झुकाता था।

येरोश्का मामा अलावघर और दीवार के बीच में बनी छोटी-सी खाट पर चित्त पड़ा हुआ था। अपनी सशक्त टांगें उठाकर पांव अलावघर पर रखे हुए था और अपनी मोटी उंगलियों से हाथ पर खुरंड खुरच रहा था। दस्ताने के बिना ही बाज़ को हाथ पर रखने के कारण उस पर बहुत-सी खरोंचें पड़ी हुई थीं। सारे कमरे में और विशेषतः बूढ़े के इर्द-गिर्द हवा में सदा बूढ़े के साथ रहनेवाली वह मिली-जुली गंध व्याप्त थी, जो तेज़ तो थी किंतु अप्रिय नहीं। .

"उयदे मा, मामा?" (मामा, घर पर हो?) – खिड़की में से तेज़ आवाज़ उसे सुनायी दी और वह फ़ौरन पहचान गया कि यह पड़ोसी लुकाश्का की आवाज़ है।

"उयदे, उयदे! घर पर हूं!" बूढ़ा चिल्लाया। "आ जा, आ जा पड़ोसी मार्का, लुकाश्का मार्का! बोल, कैसे आया? चौकी पर जा रहा है?"

मालिक के चिल्लाने पर बाज़ ने पंख फड़फड़ाये और डोरी खींची।

लुकाश्का बूढ़े का चहेता था, कज़्ज़ाकों की सारी जवान पीढ़ी के लिए बूढ़े के मन में जो हिकारत थी उसमें बस लुकाश्का ही शामिल नहीं था। इसके अलावा लुकाश्का और उसकी मां पड़ोसियों के नाते अक्सर बूढ़े को अंगूरी, दही आदि धर की बनी चीज़ें दे जाया करते थे, जो येरोश्का के पास नहीं होती थीं। येरोश्का मामा सारी उम्र किसी न किसी भावावेग में बहता रहा था और अपने आवेगों की सदा व्यावहारिक व्याख्या करता था। "क्यों नहीं? खाते-पीते लोग हैं," वह अपने आप से कहता। "मैं उन्हें ताज़ा गोश्त या चिड़िया ला देता हूं, वे भी मामा को नहीं भूलते: कभी नान दे गये, कभी कुछ और..."

"नमस्ते, मार्का! बड़ा अच्छा किया जो आ गया," बूढ़ा सहर्ष चिल्लाया और तेज़ी से अपने पांव फ़र्श पर रखकर उठ खड़ा हुआ, चर-

मराते फ़र्श पर दो कदम रखकर उसने अपने तलवों पर नजर डाली और अचानक उसे अपने पैरों पर हंसी आयी, उसने नंगी एड़ी से फ़र्श पर ताल दी, एक बार फिर ताल दी और नृत्य-मुद्रा बना ली। "क्यों कैसा रहा?" अपनी छोटी-छोटी आंखें चमकाते हुए उसने पूछा। लुकाश्का मुस्करा दिया। "क्या चौकी पर जा रहा है?" बूढ़े ने पूछा।

"चिख़ीर लाया हूं, तुम्हारे लिए, मामा। चौकी पर वायदा किया था न।"

"ख़्रीस्त तेरा भला करे," बूढ़े ने कहा। फ़र्श पर पड़ी पतलून और बेशमेत उठाकर उसने पहने, कमर पर पेटी कसी, मिट्टी के बर्तन में रखा पानी हाथों पर डाला, पुरानी पतलून से हाथ पोंछे, कंघी का एक टुकड़ा दाढ़ी पर फेरा और लुकाश्का के सामने खड़ा हो गया: "लो, तैयार हो गया!" वह बोला।

लुकाश्का ने एक प्याला लेकर पोंछा, उसमें शराब उंडेली और बेंच पर बैठकर प्याला मामा को थमाया।

"जीते रहो! पिता और पुत्र के नाम!" बूढ़े ने बड़ी गंभीरता से प्याला थामते हुए कहा। "जो तू चाहे वही तुझे मिले, बांका वीर बने, तुझे क्रास का इनाम मिले!"

लुकाश्का ने भी प्रार्थना के शब्द कहकर दो घूंट भरे और फिर अंगूरी मेज़ पर रख दी। बूढ़ा जाकर सूखी मछली ले आया, उसे दहलीज़ पर रखकर उसने उसे डंडे से कूटा ताकि वह नरम हो जाये और फिर अपने खुरदुरे हाथों से उसे अपनी एकमात्र नीली तश्तरी पर रखकर मेज़ पर परोसी।

"मेरे पास सब कुछ है, चबैना भी है, शुक्र है भगवान का," उसने सगर्व कहा। "हां, तो मोसेव क्या कहता है?" बूढ़े ने पूछा।

लुकाश्का ने, प्रत्यक्षतः बूढ़े की राय जानने के इरादे से उसे यह बताया कि किस प्रकार हवलदार ने उसकी बंदूक हथिया ली।

"बंदूक की परवाह मत कर," बूढ़ा बोला, "बंदूक नहीं देगा, तो इनाम भी नहीं मिलेगा।"

"क्या कहते हो, मामा! लोग तो कहते हैं कि जब तक घुड़सवार कज़्ज़ाक नहीं बने तब कोई ख़ास इनाम-विनाम नहीं मिलता। बंदूक तो बढ़िया है, क्रीमियाई, पूरे अस्सी कलदार की होगी।"

"अरे, छोड़, जाने दे! ऐसे ही मैं भी एक बार एक अफ़सर से बहस

कर बैठा था। कहता था, घोड़ा दे दे, तुझे कार्नेट बना दूंगा। मैंने नहीं दिया, सो कुछ नहीं बना-वना।"

"क्या कहते हो, मामा! घोड़ा खरीदना चाहिए, और लोग कहते हैं कि नदी पार पचास से कम में नहीं मिलने का। मां ने अभी अंगूरी नहीं बेची है।"

"अरे! हमने कभी इन बातों की परवाह नहीं की," बूढ़े ने कहा। "येरोश्का मामा तेरी उम्र का था तो नोगाइयों के यहां से घोड़ों के झुंड भगा ले जाता था और तेरेक के पार पहुंचाता था, कभी-कभी तो एक बोतल के या चोगे के बदले बढ़िया घोड़ा दे देते थे हम।"

"क्यों, इतने सस्ते में?" लुकाश्का बोला।

"बुद्धू है तू मार्का, निरा बुद्धू!" बूढ़े ने हिकारत से कहा। "अरे, कंजूसी ही दिखानी है तो चोरी किसलिए करनी? मैं कहूं, तुमने तो देखा ही न होगा कि घोड़े कैसे भगा ले जाते हैं। चुप क्यों है?"

"क्या बोलूं, मामा?" लुकाश्का ने कहा। "लगता है, हम तुम जैसे नहीं हैं।"

"अरे बूद्धू, बुद्धू है तू, मार्का। तुम जैसे नहीं हैं!" बूढ़े ने जवान कज़्ज़ाक की नक़ल उतारते हुए कहा। "तुम्हारी उम्र में मैं ऐसा कज़्ज़ाक नहीं था।"

"क्या मतलब?" लुकाश्का ने पूछा।

बूढ़े ने हिकारत से सिर हिलाया।

"येरोश्का मामा सीधा-सादा था, किसी चीज़ का अफ़सोस नहीं करता था। इसीलिए सारे चेचेनों का मैं कुनाक था। मेरे पास कोई कुनाक आता तो उसे जी भरकर वोद्का पिलाता, तबीयत ख़ुश कर देता, अपने बिस्तर पर सुलाता; ख़ुद उससे मिलने जाता तो उसके लिए पेशकश ले जाता। यह है बंदों का क़ायदा, ऐसे थोड़े ही, जैसे कि आज के छोकरे करते हैं: इनके लिए तो बस एक ही मनबहलाव है—बीज खा-खाके छिलके थूकते रहते हैं," बूढ़े ने बीज खाते और छिलके थूकते आज के कज़्ज़ाकों की नक़ल उतारते हुए हिकारत से कहा।

"हां, यह तो मैं जानता हूं," लुकाश्का बोला। "यह सच है!"

"अरे, बांका वीर बनना है तो जिगीत बनो, किसान नहीं। घोड़ा तो वह भी ख़रीद लेता है—पैसे दिये, घोड़ा ख़रीद लिया।"

थोड़ी देर तक दोनों चुप रहे।

"हां, मामा, गांव में या चौकी पर करने को कुछ है ही नहीं और कहीं मस्ती मारने भी नहीं जा सकते। लोग ही सब डरपोक हैं। नज़ार को ही लो। अभी उस रोज़ पहाड़ी गांव में गये थे; गिरेइ-ख़ान कहता था, चलो नोगाई चलें, कुछ घोड़े लाने; कोई तैयार ही नहीं हुआ, अकेला मैं कैसे जाऊं?"

"मामा किसलिए है? तू सोचता है मुझमें दम नहीं रहा? नहीं, अभी मुझमें दम है। लाओ घोड़ा दो, अभी नोगाई चलता हूं।"

"कोरी बातों में क्या रखा है?" लुकाश्का ने कहा। "तुम यह बताओ कि गिरेइ-ख़ान से क्या कहूं। वह कहता है बस तेरेक तक घोड़े ले आ, आगे तो पूरा झुंड का झुंड छिपा लूंगा। लेकिन है तो वह भी सिरमुंडा, क्या भरोसा उसका।"

"गिरेइ-ख़ान का भरोसा कर सकता है, उसके ख़ानदान में सभी अच्छे हैं; उसका बाप असल कुनाक था। बस तू मामा की बात सुन, मैं तुझे कोई बुरी नसीहत नहीं दूंगा: उससे कह क़सम खा ले, तब बात पक्की रहेगी; और जब उसके साथ जाये तो पिस्तौल हमेशा तैयार रखियो। घोड़े बांटने लगो तो एकदम चौकस रहियो। ऐसे में एक बार एक चेचेन ने मुझे मार ही डाला था: मैंने उससे एक छोड़े के दस कलदार मांगे थे। विश्वास इन पर भले ही करो, पर बंदूक के बिना सोओ नहीं।"

लुकाश्का बड़े ध्यान से बूढ़े की बातें सुन रहा था।

"अच्छा, मामा, सुना है तुम्हारे पास तोड़ू बूटी है?" थोड़ी देर चुप रहकर वह बोला।

"बूटी तो नहीं, पर मैं तुझे सिखाये देता हूं। यही सही, तू नेक आदमी है, मुझ बूढ़े को नहीं भूलता। बोल, सिखाऊं?"

"सिखा दो, मामा।"

"कछुए को जानता है न? यह कछुआ शैतान ही है, शैतान।"

"बिल्कुल पता है!"

"तू उसका घोंसला ढूंढ ले और उसके चारों ओर टट्टर का घेरा बना दे ताकि वह अंदर न जा सके। वह आयेगा, चक्कर काटेगा और वापस चला जायेगा; तोड़ू बूटी ढूंढ लायेगा और घेरा तोड़ डालेगा। बस अगली सुबह तू वहां पहुंच जा और देख: जहां घेरा टूटा हुआ है, वहीं तोड़ू बूटी पड़ी होगी। बस उठाकर ले जा जहां चाहे। कोई ताला-वाला तुझे नहीं रोक सकता।"

"तुमने आजमाया है क्या, मामा?"

"आजमाया तो नहीं, पर भले लोगों से सुनी है यह बात। मेरा तो बस एक ही मंतर था, घोड़े पर सवार होने से पहले 'पिता मंद्रीच' मंतर पढ़ लेता था। कोई नहीं मार पाया।"

"कैसा 'पिता मंद्रीच' मंतर, मामा?"

"तुझे नहीं पता? ओह, क्या लोग हैं! मामा से पूछ। अच्छा, सुन, बोल मेरे साथ-साथ:

जय, जय, जय सियोनवासी
राज तुम करते,
हम घोड़ों पर चढ़ते।
सपन्याह विलाप करते,
जकर्याह प्रवचन करते,
पिता हमारे मंद्रीच,
मानुष से प्रेम करते।

"मानुष से प्रेम करते," बूढ़े ने दोहराया। "जानता है? बोल!"

लुकाश्का हंस पड़ा।

"क्यों, मामा, क्या इसी की ओट में तुम्हें कोई नहीं मार पाया? यह बात है?"

"बड़े अक़्लमंद हो गये हो तुम लोग। तू याद कर ले और बोल। इससे कोई बुरा नहीं होने का। बस मंतर पढ़ लिया और सब ठीक हो गया," और बूढ़ा ख़ुद भी हंसने लगा। "पर, लुकाश्का, नोगाई तो तू न ही जा!"

"क्यों?"

"अब वह ज़माना नहीं रहा, लोग भी वह नहीं रहे। तुम कज़्ज़ाक तो निरे गोबर हो। रूसी भी कितने आये पड़े हैं! पकड़के बंद कर देंगे। सच, तू यह ख़याल छोड़ दे। तुम लोग इस लायक कहां! अरे, हम गीरचिक के साथ..."

बूढ़ा अपने अनगिनत क़िस्से फिर से सुनाने जा रहा था, लेकिन लुकाश्का ने खिड़की से बाहर झांका।

"बिल्कुल उजाला हो गया, मामा," उसने बूढ़े की बात काटी। "चलना चाहिए। अच्छा, आना कभी।"

"ख़्रीस्त तेरा भला करे। मैं फ़ौजी के पास जाता हूं: शिकार पर ले चलने का वायदा किया था; ग्रादमी तो भला लगता है।"

१७

येरोश्का के यहां से लुकाश्का ग्रपने घर गया। ग्रोस भरा कुहासा ज़मीन से उठ रहा था ग्रौर गांव पर छाता जा रहा था। ढोर-डंगर नज़र तो नहीं ग्रा रहे थे, लेकिन उनके हिलने-डुलने की ग्रावाज़ें चारों ग्रोर से ग्रा रही थीं। मुर्गे ग्रधिक जल्दी-जल्दी ग्रौर ज़ोर से बांगें देने लगे थे। उजाला हो रहा था ग्रौर लोग उठने लगे थे। बिल्कुल पास पहुंचकर ही लुकाश्का ने ग्रपने ग्रहाते की कुहासे से गीली बाड़, घर का ग्रोसारा ग्रौर खुली कोठरी देखी। कोहरे में छिपे ग्रहाते में से लकड़ी पर कुल्हाड़ी चलने की ग्रावाज़ ग्रा रही थी। लुकाश्का घर के ग्रंदर चला गया। उसकी मां उठ चुकी थी ग्रौर ग्रलावघर के सामने खड़ी उसमें लकड़ियां डाल रही थी। छोटी बहन ग्रभी बिस्तर में सोयी हुई थी।

"क्यों, लुकाश्का, जी भरके मौज कर ली?" मां ने हौले से पूछा। "रात कहां रहा?"

"गांव में था," बेटे ने ग्रनिच्छा से जवाब दिया ग्रौर खोल में से बंदूक निकालकर उसे ध्यान से देखने लगा।

मां ने सिर हिलाया।

लुकाश्का ने बंदूक में थोड़ा-सा बारूद डालकर ग्रपनी गुत्थी निकाली ग्रौर उसमें से कुछ खाली कारतूस लेकर उनमें बारूद भरने लगा। हर कारतूस को वह बड़े ध्यान से कपड़े में लिपटी गोली से बंद कर रहा था। यह परखकर कि कारतूस ठीक से बंद हुए हैं कि नहीं उसने गुत्थी एक ग्रोर रख दी।

"मां, मैंने कहा था झोलों की मरम्मत कर देना, कर दी?" उसने पूछा।

"हां-हां, गूंगी शाम को बैठी कर रही थी। क्या चौकी पर जाने की बेला हो गयी? मेरे पास तो तू बैठा ही नहीं।"

"बस ग्रभी तैयार हो जाऊं ग्रौर फिर चलना चाहिए," लुकाश्का ने बारूद की गुत्थी बांधते हुए जवाब दिया। "गूंगी कहां है? बाहर गयी है क्या?"

"लकड़ियां चीरती होगी। तुझे याद कर रही थी। कहती थी, मुझसे मिले बिना ही चला जायेगा। ऐसे हाथ चेहरे पर रखती, चुटकी बजाती और दिल पर हाथ रखती – मिलने को जी करता है। जाऊं, बुलाऊं क्या? अबरेक की तो सारी बात समझ गयी।"

"बुला लाओ," लुकाश्का बोला। "मैंने वो चर्बी रख रखी थी। लेती आना। तलवार पर लगानी है।"

बुढ़िया बाहर गयी और कुछ मिनट में चरमराती सीढ़ियां चढ़कर लुकाश्का की गूंगी बहन अंदर आयी। वह भाई से छह साल बड़ी थी। सभी गूंगे-बहरों के चेहरे पर भोंडे ढंग से बदलनेवाले भावों के साथ-साथ जड़ता का जो भाव सदा अंकित रहता है, वैसा ही यदि उसके चेहरे पर न होता तो बहन की शक्ल भाई से बहुत मिलती-जुलती लगती। वह गाढ़े की पैबंद लगी कमीज़ पहने थी, पांव नंगे और मिट्टी से सने थे; सिर पर पुराना नीला रूमाल था। गर्दन, हाथों और चेहरे पर नसें उभरी हुई थीं, जैसे कि मर्दों की उभरी होती हैं। उसके कपड़ों से और हर बात से यह पता चलता था कि वह लगातार भारी मर्दाना काम करती है। वह लकड़ियों का गट्ठर लायी थी, जो उसने अलावघर के पास फेंका। फिर वह भाई के पास आयी – मुस्कान से उसके सारे चेहरे पर झुर्रियां पड़ी हुई थीं। भाई का कंधा छूकर वह हाथों, चेहरे और सारे शरीर से उसे जल्दी-जल्दी इशारे करने लगी।

"अच्छा, अच्छा! शाबाश, स्तेप्का!" भाई सिर हिलाते हुए जवाब दे रहा था। "सारी चीज़ें बांध दीं, मरम्मत कर दी, शाबाश! ले, तेरा इनाम!" और अपनी जेब में से दो बिस्कुट निकालकर उसने बहन को दे दिये।

गूंगी का चेहरा लाल हो गया, वह तरह-तरह की आवाज़ें निकालते हुए अपनी ख़ुशी ज़ाहिर करने लगी। बिस्कुट झपटकर वह और भी जल्दी-जल्दी इशारे करने लगी, अक्सर एक ओर को दिखाते हुए और मोटा अंगूठा भौंहों व चेहरे पर फेरते हुए। लुकाश्का उसकी बात समझ रहा था और मुस्कराते हुए सिर हिला रहा था। वह कह रही थी कि भाई लड़कियों को मिठाई दिया करे, कि लड़कियों को वह अच्छा लगता है और एक लड़की मर्यान्का, जो उनमें सबसे अच्छी है, वह भी उससे प्यार करती है। मर्यॉन्का को उसने इस तरह दिखाया: पुचकारते और सिर हिलाते हुए जल्दी-जल्दी उसके अहाते की ओर, अपनी भौंहों और चेहरे की ओर इशारा किया।

"प्यार करती है" बताने के लिए उसने हाथ छाती पर दबाया, फिर चूमा ग्रौर फिर जैसे किसी का ग्रालिंगन किया। मां घर में लौट ग्रायी ग्रौर यह देखकर कि गूंगी बेटी क्या कह रही है, उसने मुस्कराकर सिर हिलाया। गूंगी ने उसे बिस्कुट दिखाये ग्रौर फिर से ख़ुशी ज़ाहिर करनेवाला शोर किया।

"मैंने उस रोज़ उलीत्का से कहा था कि ब्याह तय करने के लिए घटक भेजूंगी," मां ने कहा, "बात तो उसने मेरी ठीक से सुनी।"

लुकाश्का ने मां पर मौन नज़र डाली।

"क्या बात करती हो, मां? ग्रंगूरी बेचने ले जानी है। घोड़ा ख़रीद-ना है।"

"ले जाऊंगी, जब बेला ग्रायेगी; पीपे तैयार करने हैं," मां ने कहा, प्रत्यक्षतः वह यह नहीं चाहती थी कि बेटा गृहस्थी के मामले में दख़ल दे। "ड्योढ़ी में से बड़ा झोला उठा लियो। पड़ोसियों से मांगा है, तेरे लिए साथ ले जाने को कुछ चीज़ें रख दी हैं। या कहे तो ज़ीन के झोलों में रख दूं?"

"ठीक है," लुकाश्का ने जवाब दिया। "नदी पार से गिरेइ-ख़ान ग्राया तो उसे चौकी पर भेज देना। मुझे तो ग्रब जल्दी ग्राने नहीं देंगे। मुझे उससे काम है।"

वह जाने की तैयारी करने लगा।

"भेज दूंगी, बेटा, ज़रूर भेज दूंगी। तो तुम लोग याम्का के यहां ही मौज करते रहे?" बुढ़िया बोली। "तभी तो, रात को ढोरों को देखने को उठी तो गाने की ग्रावाज़ सुनी, लगा तेरी ही है।"

लुकाश्का ने कोई जवाब नहीं दिया, ड्योढ़ी में ग्रा गया, झोले कंधे पर लादे, कोट का दामन ऊपर खोंसा, बंदूक उठायी ग्रौर दहलीज़ पर रुक गया।

"ग्रच्छा, मां, मैं चला," उसने कहा। "नज़ारका के हाथ पीपी भेज देना, मैंने साथियों से वायदा कर रखा है; वह लेने ग्रायेगा," फाटक बंद करते हुए उसने मां से कहा।

"ख़्रीस्त तेरी रक्षा करे, लुकाश्का! भगवान तेरा साथ दे! भेज दूंगी, नये पीपे में से भेज दूंगी," बाड़ के पास जाते हुए मां ने जवाब दिया। "ग्रौर हां, सुन," बाड़ पर झुककर वह बोली।

कज़्ज़ाक थम गया।

"तूने यहां मौज-मस्ती कर ली, शुक्र है भगवान का! नौजवान भला मौज कैसे न करे? भगवान ने क़िस्मत खोली है। अच्छी बात है। पर, बेटा, देख, वहां ऐसे नहीं... अफ़सरों को ख़ुश रखना। बस इसी का ख़याल रखना! यहां मैं अंगूरी बेच लूंगी, पैसे जमा कर लूंगी घोड़ा ख़रीदने को, रिश्ता भी पक्का कर लूंगी।"

"अच्छा, अच्छा," त्योरियां चढ़ाते हुए बेटे ने कहा।

भाई का ध्यान अपनी ओर खींचने के लिए गूंगी चीखी। उसने सिर दिखाया और हाथ, जिसका मतलब था: सिरमुंडा, चेचेन। फिर भौंहें तानकर उसने ऐसे दिखाया कि बंदूक से निशाना साध रही है, फिर चीखी और सिर हिलाते हुए जल्दी-जल्दी गुनगुनाने लगी। वह कह रही थी कि लुकाश्का एक और चेचेन मारे।

लुकाश्का यह समझ गया, मुस्कराया और हल्के, तेज़ कदम भरता, पीठ पर चोगे तले बंदूक थामे घने कोहरे में खो गया।

थोड़ी देर तक चुपचाप फाटक के पास खड़ी रहकर बुढ़िया घर के अंदर लौट आयी और तुरंत ही काम में जुट गयी।

१८

लुकाश्का चौकी को चल दिया। उधर उसी समय येरोश्का मामा ने सीटी बजाकर अपने कुत्तों को उठाया और बाड़ फांदकर पिछवाड़ों से होता हुआ ओलेनिन के पास पहुंचा (शिकार पर जाते समय येरोश्का मामा औरतों का मुंह देखने से बचता था)। ओलेनिन अभी सो रहा था। वन्यूशा भी जाग तो गया था, पर अभी उठा नहीं था, इधर-उधर झांकते हुए सोच रहा था कि उठने की बेला हुई या नहीं। तभी येरोश्का मामा कंधे पर बंदूक लटकाये और शिकार के सारे साज़-सामान से लैस होकर अंदर घुसा। अपनी भारी आवाज़ में वह चिल्लाया:

"लाठी उठाओ! बचो! चेचेन आ गये! इवान! समोवार जला! और तुम उठो! फटाफट!" बूढ़ा चिल्ला रहा था। "ऐसे होता है हमारे यहां, नौजवान! अरे, यहां तो लड़कियां भी उठ चुकी हैं! झांको ज़रा खिड़की में से, देखो, पानी लेने जा रही हैं, और तुम हो कि सोये पड़े हो।"

ओलेनिन जागा और उछलकर खड़ा हो गया। बूढ़े को देखकर, उसकी आवाज़ सुनकर उसने अपने को एकदम ताज़ा और प्रसन्नचित्त अनुभव किया।

"जल्दी करो, वन्यूशा, जल्दी!" वह चिल्लाया।

"ऐसे जाते हो तुम शिकार करने! लोग नाश्ता करने लगे हैं और तुम अभी तक सो रहे हो! ल्याम! इधर आ!" वह कुत्ते पर चिल्लाया। "बंदूक तैयार है कि नहीं?" वह ऐसे चिल्ला रहा था जैसे कि घर में ख़ासी भीड़ लगी हो।

"हां, ग़लती हो गयी। अब क्या किया जाये! वन्यूशा, बारूद लाओ! और डाट भी!" ओलेनिन ने कहा।

"जुर्माना भरो!" बूढ़ा चिल्लाया।

"द्यू ते वुलेवू?*" वन्यूशा ने मुस्कराते हुए पूछा।

"तू अपना आदमी नहीं! क्या गिटपिट करता है, शैतान!" बूढ़ा अपने घिसे हुए दांत चमकाकर चिल्लाया।

"पहली बारी तो माफ़ होती है," अपने ऊंचे बूट पहनते हुए ओलेनिन ने मज़ाक किया।

"पहली बारी माफ़," बूढ़े ने जवाब दिया, "पर दूसरी बार सोते रहे तो पूरा मटका चिख़ीर का देना होगा। ज़रा गर्मी हो गयी तो कोई हिरन-विरन नहीं मिलने का।"

"मिल भी गया तो क्या है, वह तो हमसे ज़्यादा समझदार है," ओलेनिन ने पिछली शाम की बूढ़े की ही बात दोहराते हुए कहा। "हम तो उसे धोखा दे नहीं सकते।"

"हंस लो, हंस लो! मार लोगे, तब बोलना। अच्छा, जल्दी करो! लो, देखो, मकान मालिक भी तुमसे मिलने आ रहा है," खिड़की में झांकते हुए येरोश्का ने कहा। "देखो तो, कैसा सजा-धजा है। नया कोट पहन लिया ताकि तुम देख लो कि वह अफ़सर है। क्या लोग हैं!"

सचमुच ही वन्यूशा ने आकर बताया कि मकान मालिक हुज़ूर से मिलना चाहते हैं।

---

*चाय पीजियेगा?

"लर्जान *," अपने मालिक को कार्नेट के आने के मकसद के बारे में चेताते हुए वन्यूशा ने कहा। उसके पीछे-पीछे स्वयं कार्नेट झोंके खाता हुआ कमरे में घुसा। वह नया चेर्केस कोट पहने था, जिसके कंधों पर अफ़सर की पट्टियां थीं, और उसके पैरों में अच्छी तरह पालिश किये हुए बूट थे, जोकि कज्ज़ाकों के लिए बहुत ही विरली बात थी।

कार्नेट इल्या वसील्येविच पढ़ा-लिखा कज़्ज़ाक था। वह ख़ास रूस तक हो आया था, स्कूल में पढ़ाता था और सबसे बड़ी बात यह थी कि वह सभ्य-शरीफ़ आदमी था। वह सभ्य-शरीफ़ आदमी लगना भी चाहता था, लेकिन उसे देखकर बरबस यह आभास होता था कि उसके सुसंस्कृत होने के इस भोंडे दिखावे, उसके बनावटी आचरण, उसके आत्मविश्वास और उसके बोलने के बेतुके ढंग की तह में वह था बिल्कुल वही येरोश्का मामा। उसका धूप से संवलाया चेहरा, उसके हाथ और उसकी लाल नाक भी बिल्कुल यही कहते थे। ओलेनिन ने उससे बैठने को कहा।

"सलाम, इल्या वसील्येविच साहब," येरोश्का ने इतना ज़्यादा झुककर सलाम किया कि ओलेनिन को उसमें व्यंग्य का पुट दिखायी दिया।

"सलाम, मामा! तुम पहले से ही यहां हाज़िर हो," कार्नेट ने सिर हिलाकर जवाब दिया।

कार्नेट कोई चालीस साल का सूखा-सा, दुबला-पतला, ख़ूबसूरत आदमी था, जिसके नुकीली सफ़ेद दाढ़ी थी। उसकी उम्र को देखते हुए उसके चेहरे पर अभी तक बहुत ताज़गी थी। ओलेनिन से मिलने आते हुए उसे प्रत्यक्षतः सबसे अधिक डर इस बात का था कि उसे कोई मामूली कज़्ज़ाक न समझ लिया जाये, सो वह शुरू से ही ओलेनिन को अपना महत्व जता देना चाहता था।

"यह हमारे मिस्री नमरूद हैं," आत्म-संतुष्ट मुस्कराहट के साथ बूढ़े की तरफ़ इशारा करते हुए उसने ओलेनिन से कहा। "ख़ुदा की नज़रों में ज़बरदस्त शिकारी है। यह हमारा हरफ़नमौला है। लगता है, आपको इनसे मिलने की ख़ुशी हासिल हो चुकी है?"

येरोश्का मामा अपने कच्चे चमड़े के गीले जूतों को देखते हुए कार्नेट की योग्यता और विद्वता पर चकित-सा सिर हिला रहा था और अपने

---

* पैसे।

आप से बुदबुदा रहा था : "मिस्री नमरूद ! कैसी-कैसी बातें सूझती हैं इसे भी !"

"हां, शिकार पर जाने की सोच रहे हैं," ओलेनिन ने जवाब दिया।

"जी हां, जनाब, बिल्कुल," कार्नेट बोला, "लेकिन मुझे जनाब से एक छोटे-से कारोबारी मामले को लेकर कुछ बातें करनी हैं।"

"मैं क्या कर सकता हूं आपके लिए?"

"देखिये, है यह कि इस बात को मद्देनज़र रखते हुए कि आप शरीफ़ आदमी हैं," कार्नेट ने कहना शुरू किया, "और चूंकि मैं भी, एक तरह से, अपने आपको अफ़सर के ओहदे का आदमी समझ सकता हूं, इसलिए हम लोग हमेशा दर्जा-ब-दर्जा आपस में मामले की गुफ़्तगू कर सकते हैं, जिस तरह कि शरीफ़ लोग करते हैं।" उसने रुककर मुस्कराते हुए ओलेनिन और बूढ़े की तरफ़ देखा। "लेकिन अगर आपकी ख़्वाहिश जानने की हो, यानी मेरी इजाज़त से, तो चूंकि मेरी बीवी अपने तबके की अहमक़ औरत है, इसलिए कल की तारीख़ में आपने जो अल्फ़ाज़ फ़रमाये थे उन्हें वह समझ नहीं सकी। इसलिए है यों कि मेरी यह जगह अस्तबलों के बग़ैर रेजिमेंट के एडजुटेंट को छह कलदार पर किराये पर उठायी जा सकती है; वैसे मैं हमेशा मुफ़्त ही इससे दस्तबरदार हो सकता हूं। लेकिन, चूंकि आपकी ख़्वाहिश है, इसलिए मैं ख़ुद एक अफ़सर के ओहदे का आदमी होने के नाते, ज़ाती तौर पर, इस इलाक़े के बाशिंदे की हैसियत से, हर मामले में आपके साथ करारनामा कर सकता हूं, यहां के दस्तूर के मुताबिक नहीं, बल्कि हर एतबार से उसकी शर्तों पर पाबंदी से अमल भी कर सकता हूं।..."

"क्या फर्राटे से बोलता है!" बूढ़ा बुदबुदाया।

कार्नेट देर तक इसी अंदाज़ में बोलता रहा। आख़िरकार उसकी इन सब बातों से ओलेनिन काफ़ी मुश्किल से ही यह समझ पाया कि कार्नेट किराये के तौर पर महीने में चांदी के छह रूबल लेना चाहता है। वह ख़ुशी-ख़ुशी इसके लिए राज़ी हो गया और उसने अपने मेहमान से एक गिलास चाय पीने को कहा। कार्नेट ने मना कर दिया।

"यहां की बेवकूफ़ी की रस्मों के मुताबिक़ हम आम दुनियावी गिलास से पीना एक तरह का गुनाह समझते हैं," उसने कहा। "हालांकि, ज़ाहिर है, अपनी तालीम की वजह से मैं तो समझ सकता हूं, लेकिन अपनी इंसानी कमज़ोरी की वजह से मेरी बीवी..."

"अच्छा, तो चाय पियेंगे?"

"अगर आपकी इजाज़त हो तो मैं अपना ख़ास गिलास ले आऊं," कार्नेट ने जवाब दिया और बाहर ओसारे पर निकल आया। "गिलास देना!" वह चिल्लाया।

कुछ ही मिनट बाद दरवाज़ा खुला और गुलाबी आस्तीन से ढके एक संवलाये हुए नौजवान हाथ ने गिलास बाहर दिया। कार्नेट ने वहां जाकर गिलास ले लिया और फुसफुसाते हुए अपनी बेटी से कुछ बात की। ओलेनिन ने कार्नेट के लिए ख़ुद उसके ख़ास गिलास में और येरोश्का के लिए आम "दुनियावी" गिलास में चाय उंडेली।

कार्नेट ने गरम-गरम चाय सुड़सुड़ करते हुए पी और गिलास खाली करते हुए कहा: "लेकिन मेरी कोई ख़्वाहिश आपको रोके रखने की नहीं है। है यों कि मुझे भी मछली के शिकार का ज़बरदस्त शौक है, और मैं भी यहां, यों समझ लीजिये, महज़ तफ़रीह के लिए अपने काम से ग़ैरहाज़िरी की मोहलत लेकर आया हूं। मैं भी अपनी तक़दीर आज़माकर देखना चाहता हूं कि शायद तेरेक के तोहफ़ों में से कुछ मेरे हिस्से में भी आ जायें। मैं उम्मीद करता हूं कि आप भी हमारे ग़रीबख़ाने पर तशरीफ़ लाने की मेहरबानी करेंगे और हमारे गांव के दस्तूर के मुताबिक़ हमारी अंगूरी से अपने होंठ तर करेंगे।"

यह कहकर कार्नेट झुका और ओलेनिन से हाथ मिलाकर बाहर चला गया। जब ओलेनिन तैयार हो रहा था, उसने कार्नेट को हाकिमाना और समझदारी के लहजे में अपने घरवालों को हुक्म देते सुना और फिर कुछ ही मिनट बाद उसे पतलून के पांयचे घुटनों तक चढ़ाये, फटा-सा कोट पहने और मछली पकड़ने का जाल कंधे पर रखे खिड़की के पास से गुज़रते देखा।

"मक्कार कहीं का," चाय के आख़िरी घूंट भरते हुए येरोश्का मामा ने कहा। "तो क्या तुम इसे छह कलदार दिया करोगे? कभी सुना है ऐसा भला! अरे, गांव का सबसे बढ़िया मकान तुम्हें दो कलदार में मिल जायेगा। शैतान कहीं का! चलो, मैं अपना मकान दिये देता हूं तीन कलदार में।"

"नहीं, मैं अब यहीं रहूंगा," ओलेनिन ने कहा।

"छह कलदार! लगता है, पैसे मुफ़्त में आते हैं। ओह-ओह!" बूढ़े ने जवाब दिया। "इवान, चिख़ीर ला!"

कुछ खाकर और रास्ते के लिए कुछ पीकर ओलेनिन और बूढ़ा सात बज चुकने पर घर से निकले।

फाटक में उन्हें बैलगाड़ी मिली। आंखों तक सफ़ेद रूमाल बांधे, कमीज़ के ऊपर बेशमेत पहने, पांवों में घुटनों तक ऊंचे जूते पहने और लंबी छड़ी हाथ में पकड़े मर्यान्का बैलों के सींगों में बंधी रस्सी से उन्हें खींच रही थी।

"अरी सुंदरिया," बूढ़े ने कहा और ऐसा दिखावा किया कि उसे पकड़ना चाहता है।

मर्यान्का ने छड़ी उठायी और अपने मखमली नयनों से दोनों पर हंसती नज़र डाली।

ओलेनिन का चित्त और भी प्रसन्न हो गया।

"अच्छा, चलो, चलो!" कंधे पर बंदूक उठाते हुए उसने कहा। वह महसूस कर रहा था कि लड़की की नज़रें उस पर लगी हुई हैं।

पीछे से बैलों को हांकती मर्यान्का की आवाज़ आयी और फिर चल पड़ी बैलगाड़ी की चरचर।

वे गांव के पिछवाड़ों से, चरागाहों से होकर चल दिये। बूढ़ा बोलता जा रहा था। वह कार्नेट को नहीं भुला पा रहा था, उसे बुरा-भला कहता जा रहा था।

"इतनी क्या नाराज़गी है तुम्हें उससे?" ओलेनिन ने पूछा।

"कंजूस है! फूटी आंखों नहीं सुहाता मुझे," बूढ़े ने जवाब दिया। "मर जायेगा, तो सब कुछ यहीं धरा रह जायेगा। किसके लिए जोड़ रहा है? दो मकान बना लिये। भाई से मुकदमा लड़के दूसरा बाग भी हथिया लिया। चिट्ठी-पतरी में भी तो कैसा उस्ताद है! दूसरे गांवों से लोग कागज़ लिखवाने इसके पास आते हैं। जैसे लिख देता है, वैसी ही बात हो जाती है। एकदम सही बात लिखता है। पर जोड़ता किसके लिए है? एक तो छोकरा है और एक यह लड़की; इसे ब्याह देगा तो रहेगा ही कौन।"

"दहेज के लिए ही जोड़ रहा होगा," ओलेनिन ने कहा।

"कैसा दहेज? अरे, लड़की अच्छी है, इसे तो दहेज के बिना ही ले जानेवाले बैठे हैं। मगर यह शैतान तो ऐसा ही कि ब्याहना भी पैसेवाले घर में चाहता है। बड़ा कलीम* पाना चाहता है। मेरा पड़ोसी है, लुकाश्का

---

*वर पक्ष द्वारा वधू पक्ष को दिया जानेवाला धन। – अनु०

कैज़्ज़ाक, बांका जवान है, चेचेन को मारा है उसने, कब से रिश्ता मांग रहा है; पर राज़ी ही नहीं होता। कभी कोई बहाना, तो कभी कोई। कहता है, लड़की अभी छोटी है। मुझे पता है क्या सोचता है। चाहता है इसके आगे सीस नवाते रहें। पर आख़िर रिश्ता लुकाश्का के साथ ही होगा, क्योंकि वह गांव का अव्वल कज़्ज़ाक है, जिगीत है, अबरेक को उसने मारा है, क्रास मिलेगा उसे।"

"पर यह क्या? कल जब मैं अहाते में घूम रहा था तो देखा हमारे मकान मालिक की बेटी किसी कज़्ज़ाक के साथ चूमा-चाटी कर रही थी।"

"गप्प!" बूढ़ा ठिठककर चिल्लाया।

"सच, भगवान कसम!" ओलेनिन ने कहा।

"शैतान की जात है औरत," कुछ सोचते हुए येरोश्का ने कहा। "कज़्ज़ाक कौन था?"

"मैंने देखा नहीं।"

"टोपी कैसी थी? सफ़ेद?"

"हां।"

"और क़ोट लाल? तुम्हारे जैसे डील-डौल का था?"

"नहीं, मुझसे बड़ा।"

"वही है!" येरोश्का ने ठहाका मारा। "वही है, मेरा मार्का। लुकाश्का। मैं उसे मार्का कहता हूं, प्यार में। वही है! शाबाश, बेटे! मैं भी ऐसा था, पहलवान। इनको देखना क्या? मेरी जान तो अपनी मां, भाभी के साथ सो रही होती, तो भी मैं पहुंच जाता। एक थी, ऊंचे मकान में रहती थी। मां उसकी, चुड़ैल, मुझे देखते ही खौल पड़ती थी। मैं अपने कुनाक गीरचिक के साथ वहां आता, उसके कंधों पर चढ़ जाता, खिड़की खोलकर अंदर टटोलता। वह वहीं सोती थी। एक बार ऐसे ही उसे जगाया। वह लगी हाय-हाय करने! मुझे पहचाना नहीं। कौन है? मैं बोलूं तो कैसे। मां उसकी हिलने-डुलने लगी थी। बस मैंने टोपी उतारकर उसके मुंह पर रख दी और वह तुरंत पहचान गयी, टोपी पर तलवार से बने निशान को छूकर पहचान गयी। बाहर निकल आयी। बस देखो, और तो कुछ भी नहीं चाहिए। पर, अपनी जान है कि दही भी लिये आ रही है, अंगूर भी, और भी जाने क्या-क्या," येरोश्का ने कहा। हर बात की व्यावहारिक व्याख्या करना उसे पसंद था। "हां, एक नहीं थी। क्या ज़िंदगी थी!"

"अब क्या है?"

"अब कुत्तों के पीछे जायेंगे, फ़िज़ेंट को उड़ाकर पेड़ पर बिठायेंगे, तब गोली चलाना।"

"तुम मर्यान्का पर डोरे डालना चाहोगे?"

"तुम कुत्तों को देखो। अब शाम को बातें होंगी," अपने चहेते कुत्ते ल्याम की ओर इशारा करते हुए बूढ़े ने कहा।

वे चुप हो गये।

फिर इधर-उधर की बातें करते सौ कदम चले होंगे कि बूढ़ा रुक गया। रास्ते के आर-पार पड़ी एक डंडी की ओर इशारा करके बोला:

"तुम क्या सोचते हो? सोचते हो, यह ऐसे ही पड़ी है? नहीं। यह डंडी बड़ी बुरी है।"

"क्या बुराई है इसमें?"

"हुं! तुम्हें कुछ पता नहीं। तुम मेरी बात सुनो। डंडी जब ऐसे पड़ी हो तो उसे लांघो नहीं, उससे बचकर निकल जाओ या उसे ऐसे रास्ते से परे फेंक दो और जाप कर लो: 'पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम' और बस भगवान का नाम लेकर आगे चल दो। तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेगी। हमारे बुजुर्गों ने सिखाया था मुझे यह सब।"

"क्या बेकार की बातें करते हो!" ओलेनिन ने कहा। "तुम मर्यान्का की बात बताओ, क्या वह लुकाश्का के साथ मौज करती है?"

"शी-शी! अब चुप रहो," फिर से बूढ़े ने फुसफुसाकर उसे टोक दिया। "बस सुनते रहो। इधर से चक्कर लगाते हुए जंगल-जंगल जायेंगे।"

और बूढ़ा कच्चे चमड़े के अपने जूतों में आहट किये बिना संकीर्ण पगडंडी पर घने, बीहड़ जंगल में बढ़ चला। नाक-भौंह सिकोड़ते हुए उसने कुछेक बार मुड़कर ओलेनिन को देखा जो अपने बड़े-बड़े बूटों से सरसर, ठकठक करता चल रहा था। बंदूक भी वह ठीक से नहीं उठाये था, कुछेक बार वह रास्ते पर बढ़ आयी टहनियों में फंसी थी।

"शोर नहीं मचा, हौले चल, फ़ौजी ठूंठ!" बूढ़े ने गुस्से से फुफकारते हुए कहा।

हवा से ही यह पता चल रहा था कि सूरज चढ़ गया है। कोहरा

छंट रहा था, लेकिन वन के शिखरों को अभी भी छिपाये हुए था। जंगल के बहुत ऊंचे होने की विचित्र अनुभूति हो रही थी। पग-पग पर भूदृश्य बदल रहा था। जो पेड़ लगता था वह झाड़ी निकलता, सरकंडा पेड़ लगता।

१६

कोहरा कहीं-कहीं उठ रहा था और उसके तले से सरकंडों की गीली छतें प्रकट हो रही थीं। कहीं ओस बनकर वह रास्ते को और बाड़ों के पास घास को गीला कर रहा था। चारों ओर धुआंरों में से धुआं उठ रहा था। लोग गांव में से निकल रहे थे, कोई बागों में काम करने जा रहा था, कोई नदी पर, तो कोई चौकियों पर। घास उगे गीले रास्ते पर शिकारी साथ-साथ चले जा रहे थे। दुम हिलाते और मुड़-मुड़कर मालिक को देखते कुत्ते उनके अगल-बगल चल रहे थे। झुंड के झुंड मच्छर हवा में मंडराते हुए शिकारियों का पीछा कर रहे थे, उनकी पीठ, मुंह और हाथ पर टूटते जा रहे थे। घास और जंगल की नमी की सोंध आ रही थी। ओलेनिन बार-बार पीछे मुड़कर उस बैलगाड़ी को देखता था, जिसमें मर्यान्का बैठी बैलों को हांक रही थी।

चारों ओर नीरवता थी। गांव की जो ध्वनियां पहले सुनायी देती रही थीं, वे अब शिकारियों तक नहीं पहुंच रही थीं; बस कुत्ते ही झाड़ियों में खड़खड़ कर रहे थे और कभी-कभार चिड़ियां चहक उठती थीं। ओलेनिन जानता था कि जंगल में ख़तरा है, कि अबरेक सदा ऐसी जगहों में छिपते हैं। वह यह भी जानता था कि जंगल में पैदल के लिए बंदूक बहुत बड़ी सुरक्षा है। उसे डर तो नहीं लग रहा था लेकिन वह अनुभव कर रहा था कि उसके स्थान पर किसी और को डर लग सकता था, और वह कोहरे में छिपे, नम जंगल को बड़े ध्यान से देख रहा था, विरले ही होनेवाली क्षीण ध्वनियों को कान लगाकर सुन रहा था, बंदूक एक हाथ से दूसरे हाथ में ले रहा था। उसे एक नयी, प्रिय अनुभूति हो रही थी। येरोश्का मामा जहां कहीं डबरे के पास जानवर की खुरी देखता थम जाता और उसे ग़ौर से निहारता हुआ ओलेनिन को इशारा करता। वह प्रायः कुछ नहीं बोल रहा था, बस कभी-कभार फुसफुसाकर कोई टिप्पणी करता। जिस रास्ते पर वे जा रहे थे, उस पर कभी बैलगाड़ियां आती-जाती रही थीं, लेकिन उनकी लीक पर कब से घास उग चुकी थी।

दोनों ओर हिमरोई और चिनार का जंगल इतना घना और झाड़-झंखाड़ भरा था कि उसके पार कुछ भी दिखायी नहीं देता था। हर पेड़ पर जंगली अंगूर की बेलें ऊपर तक चढ़ी हुई थीं, नीचे घनी कंटीली झाड़ियां उगी हुई थीं। हर छोटे-से मैदान पर बेरियों के झाड़ उग रहे थे और सरकंडे, जिनकी रोयेंदार भूरी फुनगियां हवा में डोल रही थीं। कहीं-कहीं रास्ते से जंगल की गहराई में जानवरों की बड़ी पगडंडियां और फ़ेज़ेंटों की सुरंगों जैसी छोटी पगडंडियां चली गयी थीं। मवेशियों से अछूते इस वन में हरियाली का ज़ोर कदम-कदम पर ओलेनिन को विस्मित कर रहा था। उसने इससे पहले ऐसा कोई दृश्य नहीं देखा था। यह जंगल, ख़तरा, रहस्यमय ढंग से बुदबुदाता बूढ़ा, सुघड़ आकृतिवाली मर्यान्का और पहाड़ – यह सब ओलेनिन को स्वप्न प्रतीत हो रहा था।

"फ़ेज़ेंट बिठा दिया," पीछे मुड़कर देखते हुए और अपनी टोपी मुंह पर खींचते हुए बूढ़ा बुदबुदाया। "थूथना तो ढक लो अपना: फ़ेज़ेंट को आदमी का थूथना अच्छा नहीं लगता," उसने गुस्से से ओलेनिन पर हाथ झटका और प्राय: रेंगता हुआ आगे बढ़ा।

ओलेनिन अभी पीछे ही था जब बूढ़ा थम गया और पेड़ पर नज़र दौड़ाने लगा। पेड़ से फ़ेज़ेंट कुत्ते पर कुड़का, जो उस पर भौंक रहा था, और तब ओलेनिन ने फ़ेज़ेंट देखा। लेकिन उसी क्षण धमाका हुआ, येरोश्का की भारी-भरकम बंदूक तोप-सी गरजी। फ़ेज़ेंट उड़ा और पर गंवाता हुआ ज़मीन पर आ गिरा। बूढ़े के पास जाते हुए ओलेनिन ने एक और फ़ेज़ेंट को डरा दिया। वह उड़ा, ओलेनिन ने बंदूक घुमायी और गोली दाग़ी। फ़ेज़ेंट को जैसे किसी ने ऊपर उछाला और फिर वह टहनियों में फंसता, पत्थर-सा नीचे आ पड़ा।

"शाबाश!" बूढ़ा हंसते हुए चिल्लाया। उसे उड़ते पंछी पर निशाना लगाना नहीं आता था।

फ़ेज़ेंटों को उठाकर वे आगे चल दिये। गति और प्रशंसा से उत्तेजित ओलेनिन बार-बार बूढ़े के साथ बात छेड़ रहा था।

"ठहरो! इधर चलेंगे," बूढ़े ने उसे टोका। "कल यहां हिरन की खुरी देखी थी।"

वे झुरमुट में मुड़ गये और कोई तीन सौ क़दम चलने के बाद एक छोटे-से मैदान पर पहुंचे, जहां सरकंडे उग रहे थे और कहीं-कहीं पानी भरा हुआ था। ओलेनिन बूढ़े शिकारी से पीछे रह गया था, कोई बीस

क़दम आगे येरोश्का मामा झुका और अर्थमय ढंग से सिर हिलाने और हाथ से इशारा करने लगा। उसके पास पहुंचकर ओलेनिन ने मनुष्य का पदचिह्न देखा जिसकी ओर बूढ़ा इशारा कर रहा था।

"देखा?"

"देखा। तो क्या हुआ?" ओलेनिन ने जहां तक बन पड़ा शांत स्वर में कहा। "आदमी के पैर का निशान है।"

अनचाहे ही उसके मस्तिष्क में कूपर के 'पाथफ़ाइंडर' का, अबरेकों का विचार कौंध गया, लेकिन बूढ़ा जिस रहस्यमय ढंग से चल रहा था उसे देखते हुए वह कुछ पूछने का साहस नहीं कर पा रहा था और इस असमंजस में था कि यह रहस्यमयता ख़तरे से उत्पन्न है या शिकार से।

"नहीं, यह तो मेरा पैर है, यह देखो," बूढ़े ने बड़े सहज भाव से उत्तर दिया और घास पर उस जगह इशारा किया जहां जानवर की खुरी हल्की-सी दिख रही थी।

बूढ़ा आगे चल दिया। ओलेनिन उससे पीछे नहीं रह रहा था। बीसेक कदम चलकर नीचे को उतरते हुए वे एक झुरमुट में नाशपाती के छतनार पेड़ के पास पहुंचे, जिसके तले ज़मीन काली पड़ी हुई थी और ताज़ी लीद नज़र आ रही थी।

अंगूर की बेलों से घिरा यह स्थान कोई रमणीय लतामंडप लगता था, जहां झुटपुटा था, ठंडक भी।

"सुबह यहीं था," बूढ़े ने आह भरकर कहा। "निशान ताज़े हैं।"

सहसा उनसे कोई दस क़दम दूर जंगल में बड़े ज़ोरों की तड़तड़ हुई। दोनों ने चौंककर बंदूकें थामीं, लेकिन कुछ दीख नहीं रहा था। बस टहनि-यों के टूटने की ही आवाज़ आ रही थी। पल भर को हिरन के सरपट दौड़ने की आवाज़ आयी, तड़तड़ गूंज में बदल गयी, जो शांत जंगल में दूर ही दूर तक फैलती जा रही थी। ओलेनिन के हृदय में मानो कुछ टूट गया। घने झुरमुट में नज़रें गड़ाये कुछ देख पाने का वह व्यर्थ प्रयत्न कर रहा था। अंततः वह बूढ़े की ओर मुड़ा। येरोश्का मामा बंदूक छाती से सटाये निश्चल खड़ा था। उसकी टोपी पीछे को खिसक गयी थी, आंखों में असाधारण चमक थी और मुंह, जिसमें से घिसे हुए पीले दांत निकले पड़ रहे थे, खुले का खुला रह गया था।

"बारहसिंगा," वह बोला। और हताशा से बंदूक ज़मीन पर फेंककर वह अपनी सफ़ेद दाढ़ी नोचने लगा। "यहीं खड़ा था! रास्ते से आना

था! बुद्धू! बुद्धू!" और उसने गुस्से में अपनी दाढ़ी कसकर पकड़ ली। "बुद्धू! सूअर!" अपनी दाढ़ी ज़ोर-ज़ोर से नोचते हुए वह कहे जा रहा था। जंगल पर से मानो कुछ उड़ता हुआ गुज़रा था; भागते हिरन की आवाज दूर-दूर तक चारों दिशाओं में गूंज रही थी।...

सांझ का झुटपुटा हो गया था जब बूढ़े के साथ ओलेनिन घर लौटा—थका-मांदा, भूखा और बलवान। खाना तैयार था। उसने खाना खाया, बूढ़े के साथ पी, सो उसे गरमाहट मिली, चित्त प्रसन्न हो गया और वह ओसारे पर निकल आया। फिर से उसकी आंखों के सामने डूबते सूरज की किरणों में चमकते गिरिपिंड थे। फिर से बूढ़ा शिकार, अबरेकों, और जानों के, मौज-चैन की ज़िंदगी के अपने अनगिनत किस्से सुना रहा था। फिर से सुंदरी मर्यान्का अंदर-बाहर आ-जा रही थी, अहाता पार कर रही थी। कमीज़ तले सुंदरी की हृष्ट-पुष्ट, अछूती देह का आभास होता था।

२०

अगले दिन ओलेनिन अकेला ही उस जगह गया जहां बूढ़े और उसने हिरन को डरा दिया था। गांव के फाटक से चक्कर लगाकर जाने के बजाय वह कंटीली बाड़ लांघकर गांव से बाहर आ गया, जैसा कि सभी लोग करते थे। अपने चेर्केस कोट में कांटे वह अभी निकाल भी न पाया था कि आगे भाग गये उसके कुत्ते ने दो फ़ेज़ेंट उड़ाये। वह झाड़ियों में पहुंचा भी न था कि क़दम-क़दम पर फ़ेज़ेंट उठने लगे। (बूढ़े ने कल उसे यह जगह नहीं दिखायी थी क्योंकि यहां वह अपनी ढाल के साथ शिकार करने आना चाहता था।) ओलेनिन ने बारह बार गोली चलाकर पांच फ़ेज़ेंट मार लिये, लेकिन उन्हें उठाने के लिए झाड़-झंखाड़ में घुसते-निकलते वह इतना थक गया कि पसीने से तर-ब-तर हो गया। उसने कुत्ते को वापस अपने पास बुला लिया, बंदूक का घोड़ा उतारकर, छर्रों के ऊपर गोलियां भर दीं और अपने कोट की खुली आस्तीनों से मच्छरों को भगाता धीरे-धीरे कल की जगह को चल दिया। लेकिन ऐन रास्ते पर ही फ़ेज़ेंटों की गंध पा रहे कुत्ते को रोके रखना नामुमकिन था, सो उसने दो और मार लिये, लेकिन उन्हें झाड़ियों में से उठाते-उठाते उसे देर लग गयी और दोपहर को ही कहीं वह कल की जगह पहचानने लगा।

दिन एकदम शांत, साफ़ और गर्म था। जंगल में भी सुबह की

ताज़गी नहीं रही थी और अनगिनत मच्छर उसके चेहरे, पीठ और बांहों पर शब्दशः छा गये थे। उसका काला कुत्ता सुरमई-सा हो गया था – उसकी सारी पीठ मच्छरों से ढंकी हुई थी। ओलेनिन के कोट का भी यही हाल था, कोट को बींधकर मच्छर उसे डंक मार रहे थे। ओलेनिन इन मच्छरों से बचने के लिए कहीं भी भाग जाने को तैयार था, उसे लग रहा था कि गर्मियों में तो गांव में रहा ही नहीं जा सकता। वह घर लौट चला था, लेकिन तभी उसे यह ख़याल आया कि आख़िर लोग यहां रहते ही हैं, और उसने तय किया कि सब कुछ सहेगा – काट लें मच्छर जितना काटते हैं। अजीब बात यह थी कि दोपहर तक उसे यह मच्छरों का काटना अच्छा ही लगने लगा। उसे तो यह भी प्रतीत हुआ कि यदि चारों ओर यह मच्छरों भरा वातावरण न होता, पसीने से लथपथ चेहरे पर हाथ फेरने से उस पर यों मच्छर न मले जाते और सारे बदन में यह बेचैन चिनचिनाहट न होती तो यहां के जंगल का चरित्र और आकर्षण उसके लिए वह न रहता। इन बीहड़, भयावह हद तक विपुल पेड़-पौधों के साथ, जंगल में भरे पड़े अथाह पशु-पक्षियों के साथ, इस घनी, स्याह हरियाली के साथ इस सुगंधित गर्म हवा के साथ और तेरेक से जगह-जगह निकलकर बहती जाती छोटी-छोटी जलधाराओं और उनके ऊपर लटकती पत्तियों तले कहीं छलछल करते जल के साथ ये अनगिनत कीट इतना मेल खा रहे थे कि ओलेनिन को अभी तक जो वीभत्स और असहनीय लग रहा था वही अब प्रिय प्रतीत होने लगा। उस जगह का चक्कर लगाकर जहां कल उन्हें हिरन मिला था और वहां कुछ भी न पाकर उसका मन हुआ कि कुछ आराम करे। सूरज जंगल के ऐन ऊपर चढ़ आया था। जब भी ओलेनिन खुली जगह पर निकलता तो धूप सीधे उसके सिर और पीठ पर पड़ती। सात भारी फ़ेज़ेंटों के बोझ से कमर दुखने लगी थी। उसने हिरन की कल की खुरियां खोज लीं और एक झाड़ी के नीचे से होकर घने झुरमुट में ठीक उस जगह घुस गया जहां कल हिरन लेटा हुआ था और उसकी मांद के पास ही लेट गया। उसने अपने चारों ओर की स्याह हरियाली पर नज़र डाली, हिरन के लेटे रहने से ज़मीन पर बना नम धब्बा देखा, कल की लीद, हिरन के घुटनों की छाप, हिरन के खुर से उखड़ा काली मिट्टी का छोटा-सा लोंदा और कल के अपने पदचिह्न देखे। यहां ठंडक थी, आराम था; वह कुछ नहीं सोच रहा था, कुछ नहीं चाहता था। सहसा उसे अकारण सुख की और सबसे प्रेम की ऐसी अनोखी अनुभूति हुई कि वह अपनी बचपन की आदत

के मुताबिक सलीब का निशान बनाने लगा और किसी का उपकार मानने लगा। सहसा असाधारण स्पष्टता से उसके मस्तिष्क में यह विचार आया कि मैं, द्मीत्री ओलेनिन, सभी अन्य जीवों से इतना अलग एक जीव यहां, भगवान जाने कहां, एकदम अकेला लेटा हुआ हूं, उस जगह, जहां हिरन रहता था, सुंदर, बूढ़ा हिरन, जिसने शायद कभी आदमी को नहीं देखा, और ऐसे स्थान पर हूं मैं, जहां लोगों में से कोई कभी नहीं बैठा और कभी किसी ने यह सोचा तक नहीं कि यहां बैठेगा। "मैं यहां बैठा हूं और मेरे इर्द-गिर्द नये-पुराने पेड़ हैं, उनमें से एक पर जंगली अंगूर की बेल चढ़ी हुई है; मेरे आस-पास फ़ेज़ेंट मंडरा रहे हैं, एक-दूसरे को भगा रहे हैं, और शायद, अपने मारे गये भाइयों की गंध पा रहे हैं।" उसने अपने फ़ेजेंटों को टटोला, उन्हें उलट-पुलटकर देखा और गरम खून में सना अपना हाथ अपने चेर्केस कोट से पोंछ लिया। "शायद, सियार भी इनकी गंध पा रहे हैं और नाराज़गी से मुंह फुलाये परे जा रहे हैं; मेरे पास, उन पत्तियों के बीच, जो उन्हें विशाल टापू लगती हैं, मच्छर उड़ और भिनभिना रहे हैं: एक, दो, तीन, चार, सौ, हज़ार, लाख मच्छर, और वे सब कुछ न कुछ भिनभिना रहे हैं, उनमें से प्रत्येक मेरी ही भांति अन्य सभी से भिन्न एक द्मीत्री ओलेनिन है।" उसने बिल्कुल स्पष्टतः यह कल्पना की कि मच्छर क्या सोच और भिनभिना रहे हैं। "इधर आओ, दोस्तो, इधर! इसे हम खा सकते हैं!" वे भिनभिनाते हैं और उस पर टूटते हैं। और वह बिल्कुल स्पष्टतः यह समझ गया कि वह कोई रूसी कुलीन, मास्को समाज का सदस्य, अमुक-अमुक का मित्र और संबंधी नहीं है, बल्कि मात्र वैसा ही मच्छर, या वैसा ही फ़ेज़ेंट, या वैसा ही हिरन है, जैसे कि अब उसके इर्द-गिर्द जी रहे हैं। "उनकी ही भांति, येरोश्का मामा की भांति मैं जीऊंगा और मर जाऊंगा। वह सच कहता है: बस घास ही उग आयेगी।"

"तो क्या हुआ जो घास उग आयेगी?" वह आगे सोच रहा था। "तो भी जीना चाहिए, सुखी होना चाहिए, क्योंकि मैं केवल सुख की ही कामना करता हूं। मैं चाहे कुछ भी क्यों न होऊं: वैसा ही जीव, जैसे कि सब हैं, जिनके मरने पर बस घास उग आयेगी, और कुछ शेष नहीं रहेगा, या मैं चौखटा हूं, जिसमें एक ही देव का अंश जड़ा गया है—हर हालत में सर्वश्रेष्ठ ढंग से जीना चाहिए। सुखी होने के लिए कैसे जीना चाहिए और मैं पहले कभी सुखी क्यों नहीं था?" वह अपना विगत जीवन

याद करने लगा और उसे स्वयं अपने से वितृष्णा होने लगी। उसे लगा कि वह इतना स्वार्थी रहा है, जबकि वास्तव में उसे अपने लिए कुछ नहीं चाहिए था। वह हरियाली में से छनकर आती धूप को, उतरते सूरज और स्वच्छ आकाश को देखता जा रहा था और पहले की ही भांति अपने को सुखी अनुभव कर रहा था।

"मैं अब सुखी क्यों हूं और पहले मैं किसलिए जीता रहा हूं?" उसने सोचा। "मैं अपने लिए कितना कुछ मांगता था, कैसी-कैसी मैं योजनाएं बनाता था, लेकिन अपने को शर्मिंदा और दुखी करने के अलावा मैंने अपने लिए और कुछ हासिल नहीं किया! और अब मुझे सुख के लिए कुछ नहीं चाहिए!" सहसा उसे जैसे एक नये प्रकाश का बोध हुआ। "सुख यह है," उसने अपने आप से कहा "सुख इस बात में है कि दूसरों के लिए जिया जाये। यह स्वतःस्पष्ट है। मनुष्य में सुख की कामना निहित है; सो, वह न्यायसंगत है। इस कामना की स्वार्थमय पूर्ति करते हुए, यानी अपने लिए धन-दौलत, यश, जीवन के आराम, प्रेम खोजते हुए, ऐसा हो सकता है कि परिस्थितियां ऐसी बन जायें कि इन इच्छाओं की पूर्ति असंभव होगी। अतः ये इच्छाएं न्यायसंगत नहीं हैं, यह नहीं कहा जा सकता कि सुख की कामना न्यायसंगत नहीं है। कौनसी ऐसी इच्छाएं हैं जो बाहरी परिस्थितियों के बावजूद पूरी की जा सकती हैं? कौनसी? प्रेम, आत्मत्याग!" उसे लगा कि उसने एक नये सत्य की खोज कर ली है और इस खोज पर वह इतना प्रसन्न, इतना उत्तेजित हो उठा कि उछलकर खड़ा हो गया और बड़ी अधीरता से यह ढूंढ़ने लगा कि किसके लिए वह त्याग कर सकता है, किसके लिए भलाई कर सकता है, किसे प्रेम कर सकता है। "अपने लिए तो कुछ भी नहीं चाहिए," वह सोचता जा रहा था, "क्यों न दूसरों के लिए जिया जाये?" उसने बंदूक उठायी और जल्दी से जल्दी घर लौटने के इरादे से, ताकि अच्छी तरह सोच-विचार ले और भलाई करने का मौका खोज ले, वह झुरमुट में से बाहर निकल आया। खुली जगह पर पहुंचकर उसने इधर-उधर नज़र दौड़ायी: पेड़ों के शिखरों के पीछे सूरज दिखायी नहीं दे रहा था, ठंडक होती जा रही थी। यह स्थान उसे एकदम अपरिचित लगा – गांव के आस-पास के स्थान से बिल्कुल भिन्न। एकाएक सब कुछ बदल गया – मौसम भी, जंगल का चरित्र भी: आसमान पर घटाएं छाती जा रही थीं, पेड़ों की फुनगियों में हवा शोर कर रही थी, चारों ओर सरकंडे और गिरे पड़े पेड़ोंवाला पुराना जंगल था। उसने जब

कुत्ते को पुकारा, जो किसी जानवर के पीछे उससे दूर भाग गया था, तो उसे अपनी आवाज ही एकदम सूनी लगी। सहसा वह बुरी तरह से भयभीत हो उठा। उसके हाथ-पांव फूलने लगे। उसे अबरेकों का और हत्याओं का ख़याल आया, जिनके बारे में उसे बताया गया था, और उसे यही लग रहा था कि किसी भी क्षण किसी झाड़ी के पीछे से चेचेन निकल आयेगा और उसे अपने जीवन की रक्षा करनी होगी, मरना होगा, या कायरता दिखानी होगी। ईश्वर और परलोक भी अब उसे इस तरह याद आये जैसे कि बहुत अरसे से नहीं आये थे। लेकिन चारों ओर वही बीहड़, भावहीन, निरानन्द प्रकृति थी। "और क्या अपने लिए जीने में कोई तुक भी है," वह सोच रहा था, "जबकि तुम किसी भी क्षण मर सकते हो, और कोई भी भलाई किये बिना ही मर जाओगे, इस तरह कि किसी को पता ही नहीं चलेगा।" वह उस दिशा को चल दिया, जहां उसके विचार में गांव होना चाहिए था। शिकार की बात अब वह सोच ही नहीं रहा था, जान-लेवा थकावट महसूस कर रहा था और हर झाड़ी, हर पेड़ को बड़े ध्यान से, प्रायः आतंकित होकर देख रहा था, यह प्रतीक्षा करता हुआ कि किसी भी क्षण जान से हाथ धोना पड़ेगा। काफ़ी देर तक भटकने के बाद आख़िर वह एक नाली के पास जा निकला जिसमें तेरेक का रेतीला, ठंडा पानी बह रहा था। उसने इसके साथ-साथ ही चलने का निश्चय किया ताकि और अधिक न भटकना पड़े। वह चलता जा रहा था, हालांकि उसे ख़ुद नहीं मालूम था कि यह नाली उसे कहां ले जायेगी। सहसा उसकी पीठ पीछे सरकंडों में खड़खड़ हुई। उसने ठिठककर बंदूक थाम ली। उसे अपने आप पर शर्म आयी: हांफता हुआ कुत्ता नाली के ठंडे पानी में कूद पड़ा और चपड़-चपड़ करता पानी पीने लगा।

ओलेनिन ने भी अपनी प्यास बुझायी और उस दिशा को चल दिया, जिधर कुत्ता उसे खींच रहा था, यह सोचते हुए कि वह उसे गांव ले जायेगा। कुत्ते के साथ के बावजूद उसे चारों ओर सब कुछ पहले से भी अधिक मनहूस लग रहा था। जंगल स्याह पड़ रहा था, टूटे हुए पुराने पेड़ों की फुनगियों में हवा अधिकाधिक तेज़ होती बह रही थी। इन पेड़ों पर अपने घोंसलों के गिर्द कोई बड़े-बड़े पक्षी चीखते हुए मंडरा रहे थे। पेड़-पौधे कम होते जा रहे थे, सरसराते सरकंडे और जानवरों की खुरियों से भरे बूचे रेतीले मैदान ही अधिक नज़र आने लगे थे। हवा की सूं-सूं में एक और उदास, एकसुरी गूंज मिल रही थी। मन बुरी तरह घबरा

रहा था। उसने हाथ पीछे ले जाकर फ़ेज़ेंट टटोले और एक फ़ेज़ेंट कम पाया। वह कहीं टूटकर गिर पड़ा था, उसकी खूनोखून गर्दन और सिर ही पेटी में खोंपे रह गये थे। वह इतना भयाक्रांत हो गया जितना कि पहले कभी भी नहीं हुआ था। वह ईश्वर से प्रार्थना करने लगा। उसे बस एक ही बात का डर था कि वह कोई भी नेक काम किये बिना, भलाई किये बिना ही मर जायेगा, जबकि वह जीने को इतना आतुर है, जीने को, ताकि आत्मत्याग का पराक्रम कर सके।

२१

सहसा उसके हृदय में मानो सूरज चमक उठा। उसने रूसी बोली सुनी, तेरेक का तेज़ और एकसार बहाव सुना और दो क़दम आगे बढ़ने पर उसे नदी की बहती मटमैली चादर, तटों व चाकियों पर गीली रेत, दूर की स्तेपी, नदी के ऊपर उठी हुई चौकी की बुर्जी, कंटीली झाड़ियों में चरता ज़ीन कसा और छंदा हुआ घोड़ा तथा पहाड़ – यह सब उसे दिखायी दिया। पल भर को लाल सूरज बादलों के पीछे से निकल आया और उसकी अंतिम किरणें नदी के पाट पर, सरकंडों पर, बुर्जी पर और उन कज़्ज़ाकों पर चमकीं, जो झुंड बनाये खड़े थे और जिनके बीच अपनी चुस्त आकृति से लुकाश्का ने ओलेनिन का ध्यान बरबस अपनी ओर आकर्षित किया।

ओलेनिन ने फिर से बिना किसी प्रत्यक्ष कारण के अपने को पूर्णतः सुखी अनुभव किया। वह तेरेक के तट पर नीझ्ने-प्रोतोत्स्की चौकी पर पहुंच गया था, जिसके सामने नदी के दूसरे तट पर शांतिमय जीवन व्यतीत करनेवाले चेचेनों का गांव था। उसने कज़्ज़ाकों का अभिवादन किया, लेकिन किसी के लिए कोई भलाई करने का अभी कोई निमित्त न पाकर वह अंदर चला गया। वहां भी उसे कोई अवसर नहीं मिला। कज़्ज़ाकों ने उसके आने पर कोई उत्साह नहीं दिखाया। मिट्टी के झोंपड़े में जाकर उसने सिगरेट सुलगायी। कज़्ज़ाकों ने उसकी ओर ख़ास ध्यान नहीं दिया, एक तो इसलिए कि वह सिगरेट पी रहा था, दूसरा इसलिए कि इस शाम उनके लिए दूसरा मन-बहलाव था। रूसियों के साथ लड़ते रहनेवाले चेचेन, मारे गये अबरेक के संबंधी, अपने टोहिये के साथ पहाड़ों से आये थे, पैसे देकर लाश ले जाने के लिए। गांव से कज़्ज़ाक अफ़सरों के आने की प्रतीक्षा हो रही थी। मारे गये अबरेक का भाई ऊंचा और सुघड़ था, छंटी और रंगी

हुई लाल दाढ़ीवाला उसका चेर्केस कोट और भेड़ की खाल की टोपी एकदम फटे-पुराने थे, फिर भी उसकी मुद्रा में शांति और राजसी तेज व्याप्त था। उसका चेहरा-मोहरा मृतक से बहुत मिलता-जुलता था। उसने किसी की ओर भी आंख उठाकर देखने की कृपा नहीं की और मृतक पर एक नज़र तक नहीं डाली। छाया में उकड़ू बैठा वह पाइप पीता हुआ थूक रहा था, बस कभी-कभार वह अपने कंठ्य स्वर में कुछ आदेश देता, जिन्हें उसका साथी सादर पूरा करता। साफ़ नज़र आता था कि यह जिगीत है, जिसने रूसियों को कई बार बिल्कुल दूसरी ही परिस्थितियों में देखा है और अब रूसियों में उसके लिए न केवल आश्चर्यजनक, बल्कि रोचक भी कुछ नहीं रह गया है। ओलेनिन मृतक के पास जाकर उसे देखने लगा था लेकिन उसके भाई ने ओलेनिन पर उड़ती-सी उदासीन और तिरस्कारपूर्ण दृष्टि डाली और झटके से और गुस्से से कुछ कहा। टोहिये ने जल्दी से मृतक का चेहरा ढंक दिया। ओलेनिन जिगीत के चेहरे के गरिमामय और सख़्ती भरे भाव से बहुत प्रभावित हुआ; यह पूछते हुए कि वह कौनसे गांव का है, उसने उसके साथ बातचीत छेड़नी चाही, लेकिन चेचेन ने उस पर उड़ती-सी नज़र डाली और हिकारत से थूककर मुंह मोड़ लिया। ओलेनिन को इस बात पर बहुत आश्चर्य हुआ कि इस पर्वतवासी ने उसमें कोई दिलचस्पी नहीं दिखायी; उसने अपने मन को समझाया कि इसका कारण केवल मूर्खता हो सकता है या भाषा का न समझ पाना। वह उसके साथी की ओर उन्मुख हुआ। यह साथी, टोहिया और दुभाषिया, वैसा ही फटेहाल था, लेकिन इसके बाल लाल नहीं, काले थे, दांत दूध जैसे सफ़ेद थे और काली आंखों में चमक थी। टोहिया ख़ुशी-ख़ुशी बातें करने लगा। उसने ओलेनिन से एक सिगरेट भी मांग ली।

"ये पांच भाई थे," टोहिया अपनी टूटी-फूटी रूसी में बताने लगा। "यह तीसरा भाई है जिसे रूसियों ने मार डाला है, सिर्फ़ दो रह गये हैं; वह जिगीत है, बहुत बड़ा जिगीत," टोहिये ने चेचेन की ओर इशारा करके कहा। "जब इस अहमद ख़ान को मारा तो यह दूसरे किनारे पर सरकंडों में बैठा हुआ था, इसने सब कुछ देखा था: कैसे उसे नाव में लिटाया, कैसे तट पर ले गये। रात तक यह वहीं बैठा रहा था; बूढ़े को मार डालना चाहता था, पर दूसरों ने नहीं मारने दिया।"

लुकाश्का उनके पास आकर बैठ गया।

"कौनसे गांव से हैं?" उसने पूछा।

"उन पहाड़ों से," तेरेक के पार नीले धुंधले दर्रे की ग्रोर इशारा करते हुए टोहिये ने जवाब दिया। "सुयुक-सू जानते हो? उससे दसेक वेर्स्ता ग्रागे है।"

"सुयुक-सू में गिरेइ ख़ान को जानते हो?" लुकाश्का ने पूछा, प्रत्यक्षत: उसे ग्रपने इस परिचय पर गर्व था। "मेरा कुनाक है।"

"मेरा पड़ोसी है," टोहिये ने जवाब दिया।

"चोखा ग्रादमी है!" लगता था लुकाश्का को बातचीत में बहुत दिलचस्पी है ग्रौर वह टोहिये के साथ तातार बोली में बोलने लगा।

थोड़ी देर में कज़्ज़ाकों का लेफ़्टिनेंट ग्रौर गांव का प्रधान दो कज़्ज़ाकों के साथ घोड़ों पर सवार ग्रा पहुंचे। लेफ़्टिनेंट नया-नया ही कज़्ज़ाक ग्रफ़सर बना था। उसने कज़्ज़ाकों का फ़ौज़ी ढंग से ग्रभिवादन किया, लेकिन किसी ने भी जवाब में सिपाहियों की तरह कड़ककर सलाम नहीं बजाया, बस कुछ लोगों ने ही ज़रा झुककर सलाम कर दिया। कुछ कज़्ज़ाक, जिनमें लुकाश्का भी था, उठकर सावधान की मुद्रा में खड़े हो गये। हवलदार ने रिपोर्ट दी कि चौकी पर सब कुछ ठीक-ठाक है। ग्रोलेनिन को यह सब हास्यास्पद लगा: ये कज़्ज़ाक जैसे सिपाहियों का खेल खेल रहे थे। लेकिन शीघ्र ही ग्रौपचारिकता का स्थान सामान्य संबंधों ने ले लिया, ग्रौर लेफ़्टिनेंट जो दूसरों जैसा ही चुस्त-फुर्तीला कज़्ज़ाक था, दुभाषिये से तातार बोली में जल्दी-जल्दी कुछ बातें करने लगा। फिर उन्होंने कोई पर्चा लिखकर टोहिये को दिया ग्रौर उससे पैसे लेकर लाश के पास गये।

"लुका गव्रीलोव कौन है तुममें?" लेफ़्टिनेंट ने पूछा। लुकाश्का टोपी उतारकर उसके पास गया।

"मैंने रेजिमेंट कमांडर को तुम्हारी रिपोर्ट भेजी है। क्या मिलेगा, मुझे नहीं मालूम, मैंने क्रास के लिए लिखा है, – हवलदार के लिए तुम ग्रभी छोटे हो। पढ़ना-लिखना ग्राता है?"

"जी नहीं।"

"क्या चोखा जवान है!" लेफ़्टिनेंट ने फिर से ग्रफ़सर बनते हुए कहा। "सिर ढक लो। कौनसे गव्रीलोव का है यह? 'महाबली' का?"

"उनका भानजा पड़ता है," हवलदार ने जवाब दिया।

"पता है, पता है। ग्रच्छा, जाग्रो, उनकी मदद कराग्रो," उसने कज़्ज़ाकों से कहा।

लुकाश्का का चेहरा ख़ुशी से चमक रहा था ग्रौर सदा से ग्रधिक

सुंदर लग रहा था। हवलदार के पास से हटकर उसने टोपी पहनी और आकर ओलेनिन के पास बैठ गया।

जब लाश नाव में रख दी गयी तो चेचेन भाई तट पर आया। कज़्ज़ाकों ने बरबस पीछे हटकर उसे रास्ता दिया। पांव से नाव को ज़ोर से धकेलकर वह उसमें कूद गया। ओलेनिन का ध्यान इस ओर गया कि अब कहीं चेचेन ने पहली बार सभी कज़्ज़ाकों पर तेज़ी से नज़र डाली और फिर अपने साथी से कुछ पूछा। साथी ने कुछ जवाब दिया और लुकाश्का की ओर इशारा किया। चेचेन ने उसकी ओर देखा और फिर धीरे से मुंह फेरकर उस तट की तरफ़ देखने लगा। उसकी इस दृष्टि में घृणा नहीं, हिकारत भरी थी। उसने और भी कुछ कहा।

"क्या कहा उसने?" ओलेनिन ने चुलबुल दुभाषिये से पूछा।

"तुम्हारा आदमी हमारा मारता, हमारा तुम्हारा बिगाड़ता, सब एक बात," टोहिये ने स्पष्टतः अपने मन से घड़कर कहा, अपने सफ़ेद दांत चमकाता हुआ हंसने लगा और फिर नाव में कूद गया।

मृतक भाई बुत बना बैठा था और एकटक उस तट की ओर देखता जा रहा था। उसकी घृणा और हिकारत इतनी तीव्र थी कि उसके लिए यहां कौतूहलजनक भी कुछ नहीं था। नाव के एक सिरे पर खड़ा टोहिया लग्गा कभी एक ओर ले जाता था, तो कभी दूसरी ओर; बड़ी होशियारी से वह नाव चला रहा था और लगातार बोलता जा रहा था। धार को काटते हुए बढ़ती नाव छोटी होती जा रही थी, नाव से आनेवाली आवाज़ें प्रायः सुनायी नहीं दे रही थीं और अंततः, नाव उस तट पर जा लगी, जहां उनके घोड़े खड़े थे। वहां उन्होंने लाश नाव से उतारी, घोड़ें के भड़कने के बावजूद लाश ज़ीन पर रख दी और घोड़ों पर सवार होकर सड़क पर चल दिये। वे गांव के पास से गुज़रे जहां उन्हें देखने के लिए भीड़ जमा हो गयी थी।

इस तट पर सभी कज़्ज़ाक बहुत संतुष्ट और ख़ुश थे। चारों ओर से हंसी-ठट्ठा सुनायी दे रहा था। लेफ़्टिनेंट और गांव का प्रधान कुछ खाने-पीने के लिए झोंपड़े में चले गये। अपने ख़ुशी से दमकते चेहरे पर गंभीरता का भाव लाने का व्यर्थ प्रयत्न करता लुकाश्का ओलेनिन के पास बैठा था। कोहनियां घुटनों पर टिकाये वह एक डंडी छील रहा था।

"आप तमाकू क्यों पीते हैं?" उसने जैसे कौतूहल दिखाते हुए पूछा। "अच्छा है क्या?"

प्रत्यक्षत: उसने सिर्फ़ इसलिए पूछा था कि ओलेनिन अटपटा और अकेला महसूस कर रहा था।

"यों ही, आदत पड़ गयी है," ओलेनिन ने जवाब दिया, "क्यों?"

"हुं! हम लोग तमाकू पीने लगें तो मुसीबत हो जाये! देखो, पहाड़ पास ही हैं," दर्रे की ओर इशारा करते हुए लुकाश्का ने कहा, "पर वहां तक भी न पहुंच पायें! आप अकेले घर कैसे जायेंगे: अंधेरा हो गया। चाहें तो मैं आपको छोड़ आऊं। आप हवलदार से कह दीजिये।"

"कैसा बांका है," कज़्ज़ाक के खिले चेहरे को देखते हुए ओलेनिन ने सोचा। उसे मर्यान्का का ख़याल आया और वह चुंबन याद आया, जिसकी आवाज़ अहाते के फाटक के पीछे उसने सुनी थी और उसे लुकाश्का पर, उसके अशिक्षित होने पर दया आयी। "यह कैसा गड़बड़ झाला है," वह सोच रहा था। "आदमी ने आदमी को मारा है, और सुखी है, संतुष्ट है, जैसे कोई सबसे अच्छा काम किया हो। क्या उसे इस बात का कोई ख़याल नहीं आता कि इसमें ख़ुश होने का कोई कारण नहीं है? कि सुख मारने में नहीं, आत्मबलिदान करने में है?"

"हां, भैया, अब उसके हत्थे मत आना," नाव के पास खड़े रहे कज़्ज़ाकों में से एक ने कहा। "सुना था, कैसे वह तेरे बारे में पूछ रहा था?"

लुकाश्का ने सिर उठाया।

"धर्मपुत्र?" लुकाश्का ने कहा, उसका अभिप्राय मृत चेचेन से था।

"धर्मपुत्र तो अब नहीं उठेगा, लेकिन वह लाल बालोंवाला धर्मपुत्र का भाई है।"

"शुक्र मनाये कि ख़ुद सही-सलामत लौट गया," लुकाश्का ने हंसते हुए कहा।

"किस बात पर ख़ुश हो रहे हो?" ओलेनिन ने लुकाश्का से कहा। "अगर कोई तुम्हारे भाई को मार देता तो तुम ख़ुश होते?"

कज़्ज़ाक ओलेनिन की ओर देखते हुए आंखों ही आंखों में हंस रहा था। लगता था ओलेनिन उससे जो कुछ कहना चाहता था, वह सब समझ गया था, लेकिन इन सब बातों से वह ऊपर था।

"हां, ऐसा भी होता है। हमारे भाईबंद नहीं मारे जाते क्या?"

लेफ़्टिनेंट और गांव का प्रधान चले गये। ओलेनिन ने लुकाश्का को ख़ुश करने के लिए और ख़ुद भी अंधेरे जंगल में अकेले जाने से बचने के लिए लुकाश्का को छुट्टी देने को कहा और हवलदार ने उसे छुट्टी दे दी। ओलेनिन सोच रहा था कि लुकाश्का मर्यान्का से मिलना चाहता है, वैसे भी वह ऐसे देखने में भले और मिलनसार कज़्ज़ाक का साथ पाने पर ख़ुश था। उसकी कल्पना में अनचाहे ही लुकाश्का और मर्यान्का जुड़ गये थे और उसे उनके बारे में सोचना अच्छा लग रहा था। "वह मर्यान्का से प्यार करता है," ओलेनिन मन ही मन सोच रहा था, "मैं भी उससे प्यार कर सकता था।" और जब वे अंधेरे जंगल से होते हुए घर जा रहे थे तो उसके मन में एक नया, कोमल भाव ज़ोरों से उमड़ रहा था। लुकाश्का का भी चित्त प्रसन्न था। इन दो, इतने भिन्न नौजवानों के बीच प्यार जैसी कोई भावना उठ रही थी। हर बार एक दूसरे की ओर नज़रें उठाने पर उनका हंसने को मन होता।

"तुम्हें कौनसे फाटक से गांव में जाना है?" ओलेनिन ने पूछा।

"बिचले फाटक से। मैं आपको दलदल तक पहुंचा दूंगा। वहां आगे डरने की कोई बात नहीं है।"

ओलेनिन हंस पड़ा।

"मैं क्या डर रहा हूं? अच्छा, तुम जाओ। मैं अकेला चला जाऊंगा।"

"कोई बात नहीं! मुझे करना ही क्या है? डरें कैसे न आप? हमें भी डर लगता है," ओलेनिन का स्वाभिमान रखते हुए लुकाश्का ने भी हंसते हुए कहा।

"तो मेरे यहां चलो। कुछ बातें करेंगे, खायें-पियेंगे, सुबह चले जाना।"

"मैं क्या रात काटने को जगह नहीं ढूंढ सकता," लुकाश्का हंसा, "हवलदार ने भी लौट आने को कहा था।"

"मैंने कल तुम्हें गाते सुना था और देखा भी था..."

"सभी आदमी हैं..." लुकाश्का ने सिर हिलाया।

"यह सच है कि तुम्हारी शादी हो रही है?" ओलेनिन ने पूछा।

"मां करना चाहती है। पर अभी तो घोड़ा भी नहीं है।"

"तुम क्या अभी घुड़सवार कज़्ज़ाक नहीं बने?"

"कहां? अभी-अभी तो भरती हुआ हूं। अभी घोड़ा भी नहीं है, लाऊं भी कहां से। इसीलिए ब्याह नहीं हो रहा।"

"कितने का ग्राता है घोड़ा?"

"उस रोज़ नदी पार एक का सौदा हो रहा था, पर साठ कलदार में भी तैयार नहीं हुए, हालांकि घोड़ा नोगाई है।"

"तुम मेरा द्रबंत बनोगे?" (द्रबंत मुहिम में ग्रफ़सर को मिला एक तरह का ग्रर्दली होता है।) "मैं इसका बंदोबस्त कर लूंगा ग्रौर तुम्हें घोड़ा भी दे दूंगा," सहसा ग्रोलेनिन ने कहा। "सच। मेरे पास दो हैं, मुझे नहीं चाहिए।"

"चाहिए क्यों नहीं?" लुकाश्का ने हंसते हुए कहा। "ग्राप क्यों देंगे भला? भगवान करेगा, हम ख़ुद हासिल कर लेंगे।"

"नहीं, सच! या तुम द्रबंत बनना नहीं चाहते?" ग्रोलेनिन ने कहा। वह ख़ुश था कि उसके मन में लुकाश्का को घोड़ा देने का विचार ग्राया। लेकिन, जाने क्यों वह ग्रटपटा ग्रौर शर्मिंदा महसूस कर रहा था। वह कुछ कहना चाहता था, लेकिन उसकी समझ में नहीं ग्रा रहा था कि क्या कहे।

लुकाश्का ने ही मौन तोड़ा।

"ग्रापके पास क्या रूस में ग्रपना मकान है?" उसने पूछा।

ग्रोलेनिन उसे यह बताने से ग्रपने ग्राप को नहीं रोक सका कि उसका एक नहीं कई मकान हैं।

"ग्रच्छा मकान है? हमारे यहां के मकानों से बड़ा है?" लुकाश्का ने सहज सद्भाव से पूछा।

"बहुत बड़ा, दस गुना बड़ा होगा। तीन मंज़िला है," ग्रोलेनिन ने बताया।

"हमारे यहां जैसे घोड़े भी हैं?"

"मेरे पास सौ घोड़े हैं, तीन-तीन, चार-चार सौ रूबल के, मगर तुम्हारे घोड़ों जैसे नहीं हैं। चांदी के तीन-तीन सौ रूबल के! दुलकी चाल चलनेवाले... पर मुझे यहां के घोड़े ज़्यादा ग्रच्छे लगते हैं।"

"ग्राप क्या ग्रपनी मर्ज़ी से यहां ग्राये हैं या ग्रापको भेजा गया है?" लुकाश्का ने ग्रभी भी व्यंग्य-सा करते हुए पूछा। "यहां ग्राप भटके थे," उस पगडंडी की ग्रोर, जिसके पास से वे गुज़र रहे थे, इशारा करते हुए उसने कहा। "ग्रापको दायें जाना चाहिए था।"

"ऐसे ही, ग्रपनी मर्ज़ी से ग्राया हूं," ग्रोलेनिन ने जवाब दिया, "तुम्हारा इलाक़ा देखना चाहता था, मुहिमों में जाना चाहता था।"

"मुहिम पर तो किसी भी रोज़ चल पड़ूं," लुकाश्का ने कहा। "देखो तो, सियार हुआ रहे हैं," कान लगाकर सुनते हुए उसने कहा।

"तुम्हें इस बात का कोई ख़ौफ़ नहीं हो रहा कि तुमने आदमी को जान से मारा है?" ओलेनिन ने पूछा।

"ख़ौफ़ किस बात का? मुहिम पर तो मैं ख़ुशी-ख़ुशी चला जाऊं," लुकाश्का ने फिर से कहा। "इतना मन करता है, इतना मन करता है।..."

"कौन जाने, हम साथ ही जायें। हमारी कम्पनी त्योहार से पहले जायेगी। तुम्हारी टुकड़ी भी।"

"क्या शौक आया आपको यहां आने का! अपना घर है, घोड़े हैं, नौकर-चाकर भी हैं। मैं तो बस मौज करता। आपका ओहदा क्या है?"

"मैं कैडेट हूं, पर अफ़सर बनाने के लिए मेरी रिपोर्ट गयी है।"

"हां, अगर आप डींग नहीं हांकते कि आप इतने आराम से रहते थे तो मैं तो ऐसे में घर से कहीं न जाता। मैं तो वैसे भी कहीं न जाऊं। अच्छा है न हमारे यहां जीना?"

"हां। बहुत अच्छा," ओलेनिन ने कहा।

बिल्कुल अंधेरा घिर आया था, जब वे इस तरह बातें करते हुए गांव के पास पहुंचे। अभी भी उनके चारों ओर जंगल का स्याह अंधकार था। ऊंचे शिखरों में हवा सांय-सांय कर रही थी। सियार, लगता था, अचानक कहीं उनके बिल्कुल पास ही हुआने, खिलखिलाने और रोने लगते; आगे गांव से औरतों की आवाज़ें सुनायी देने लगी थीं और कुत्तों का भौंकना भी। घरों की रूप-रेखा साफ़ नज़र आने लगी थी, बत्तियां जल रही थीं और उपलों के धुएं की ख़ास गंध आ रही थी। ओलेनिन को, ख़ास तौर पर आज शाम को, यही लग रहा था कि यहां गांव में ही उसका घर, उसका परिवार है, उसका सारा सुख है, कि कभी भी कहीं भी उसका जीवन इतना सुखी नहीं रहा है और न होगा, जितना इस गांव में है। इस शाम को उसे सबसे और विशेषतः लुकाश्का से इतना प्यार था! वे जब घर पहुंचे तो लुकाश्का यह देखकर दंग रह गया कि ओलेनिन ख़ुद जाकर छप्पर से ग्रोज़नया में ख़रीदा घोड़ा निकाल लाया – वह नहीं, जिस पर वह सदा सवारी करता था, बल्कि दूसरा, जो बुरा नहीं था, हालांकि जवान भी नहीं था, और उसने लुकाश्का को यह घोड़ा थमा दिया।

"किसलिए आप मुझे दे रहे हैं?" लुकाश्का ने कहा। "मैंने तो आपके लिए कुछ भी नहीं किया।"

"सच, यह तो कुछ भी नहीं," ओलेनिन ने जवाब दिया, "ले लो, तुम भी कभी मुझे कुछ दे दोगे... इकट्ठे मुहिम पर जायेंगे।"

लुकाश्का सकपका गया।

"क्या करते हैं आप? घोड़ा कोई सस्ती चीज़ है क्या?" वह घोड़े की ओर न देखते हुए बोला।

"ले लो, ले लो! अगर तुमने नहीं लिया तो तुम मेरा दिल दुखाओगे। वन्यूशा, घोड़े को उसे दे दो।"

लुकाश्का ने लगाम पकड़ ली।

"अच्छा, मेहरबानी। कभी सोचा तक न था।..."

ओलेनिन बारहवर्षीय किशोर की भांति ख़ुशी से फूला न समा रहा था।

"यहां बांध दो इसे। अच्छा घोड़ा है, मैंने ग्रोज़नया में ख़रीदा था, दौड़ने में तेज़ है। वन्यूशा, हमें चिख़ीर तो दो। चलो, अंदर चलें।"

अंगूरी आयी। लुकाश्का ने बैठकर अपना जाम लिया।

"भगवान ने चाहा तो मैं भी एक दिन आपके लिए कुछ करूंगा," अंगूरी के आख़िरी घूंट भरते हुए उसने कहा। "नाम क्या है तुम्हारा?"

"द्मीत्री अन्द्रेयेविच।"

"अच्छा, द्मीत्री अन्द्रेयेविच, भगवान तुम्हारा भला करे। हम-तुम कुनाक होंगे। अब तुम हमारे यहां आना। हम अमीर तो नहीं, पर कुनाक की ख़ातिर करना जानते हैं। मैं मां से भी कह दूंगा, तुम्हें जो चाहिए–दही, अंगूर–सब दे देगी। और अगर तुम चौकी पर आये तो मैं तुम्हारा सेवक होऊंगा, शिकार पर जाना हो या नदी पार, जहां चाहो। मुझे पता नहीं था, अभी कल ही इतना बड़ा सूअर मारा जंगल में! ऐसे ही कज़्ज़ाकों को बांट दिया, पता होता, तुम्हारे लिए ले आता।"

"कोई बात नहीं, शुक्रिया! तुम इसे बस जोतना नहीं, यह कभी जुता नहीं है।"

"अरे, घोड़े को कौन जोतता है! तुम्हें एक और बात बताता हूं," लुकाश्का ने दबी आवाज़ में कहा। "मेरा कुनाक है गिरेइ ख़ान; कहता था चलो, रास्ते पर घात लगायें, जहां पहाड़वाले मैदान में आते हैं। चाहो तो साथ चलेंगे। मैं किसी से तुम्हारा भेद नहीं खोलूंगा, तुम्हारा मुरशिद होऊंगा।"

"चलेंगे, कभी चलेंगे।"

लगता था लुकाश्का की सारी सकपकाहट दूर हो गयी है और वह अपने प्रति ओलेनिन का रुख़ समझ गया है। उसकी शांतचित्तता और बर्ताव में सरलता पर ओलेनिन को आश्चर्य हुआ और कुछ हद तक यह अप्रिय भी लगा। वे काफ़ी देर तक बातें करते रहे और फिर लुकाश्का, जो नशे में नहीं था (उसे कभी भी नशा नहीं चढ़ता था), लेकिन बहुत पी चुका था, ओलेनिन से हाथ मिलाकर बाहर आ गया।

ओलेनिन खिड़की में से झांकने लगा यह देखने के लिए कि लुकाश्का बाहर निकलकर क्या करेगा। वह सिर झुकाये धीमी चाल से जा रहा था। फिर घोड़े को अहाते से बाहर ले जाकर एकाएक उसने सिर झटका, बिल्ली की तरह उछलकर घोड़े पर चढ़ गया, बागडोर समेटी और हुंकार भरकर गली में घोड़ा दौड़ा दिया। ओलेनिन सोच रहा था कि लुकाश्का मर्यान्का के साथ अपनी यह ख़ुशी बांटने जायेगा, लेकिन बावजूद इसके कि लुकाश्का ने ऐसा नहीं किया, उसका हृदय इतना प्रसन्न था जितना पहले कभी नहीं हुआ था। वह लड़कों की तरह ख़ुश हो रहा था और वन्यूशा को यह बताये बिना नहीं रह सका कि उसने घोड़ा लुकाश्का को भेंट कर दिया है। यही नहीं, उसने उसे यह भी बताया कि घोड़ा क्यों दिया है, और सुख का अपना सारा नया सिद्धांत भी उसे समझाया। वन्यूशा ने इस सिद्धांत की कोई तारीफ़ नहीं की, उलटे यह कहा कि लर्जान इलन्यापा* और इसलिए यह सब बकवास है।

लुकाश्का अपने घर गया, घोड़े से कूदकर उसने घोड़ा मां को थमा दिया और कहा कि वह उसे कज़्ज़ाकों के घोड़ों के साथ चरने के लिए छोड़ दे; स्वयं उसे उसी रात चौकी पर लौटना था। गूंगी ने घोड़े को झुंड में पहुंचाने का ज़िम्मा लिया और इशारों से दिखाया कि जिसने घोड़ा दिया है उस आदमी को देखते ही वह उसके पांवों में झुकेगी। मां ने बेटे की बात सुनकर बस सिर हिलाया और मन ही मन फ़ैसला किया कि लुकाश्का ने घोड़ा चुराया है, इसलिए उसने गूंगी से कहा कि वह उजाला होने से पहले ही घोड़ा झुंड में पहुंचा दे।

लुकाश्का अकेला ही चौकी को चल दिया। वह यही सोचता जा रहा

---

* पैसे नहीं हैं।

था कि ओलेनिन ने उसे घोड़ा क्यों दिया है। उसके विचार में घोड़ा ख़ास अच्छा नहीं था, तो भी चालीस कलदार से कम का नहीं था, सो वह ऐसा तोहफ़ा पाकर बहुत ख़ुश था। लेकिन यह तोहफ़ा उसे क्यों दिया गया यह बात वह किसी भी तरह समझ नहीं पा रहा था, इसलिए उसके मन में रत्ती भर भी कृतज्ञता नहीं थी। इसके विपरीत उसके मन में कैडेट के बुरे इरादों के बारे में अस्पष्ट-सा संदेह उठ रहा था। वह यह नहीं कह सकता था कि ये बुरे इरादे क्या हैं, लेकिन यह मान लेना भी उसे असंभव लगता था कि अनजान आदमी ने बस यों ही, बिना किसी वजह के अपनी उदारता से उसे चालीस कलदार का घोड़ा दे दिया है। अगर वह नशे में होता तो बात समझ में भी आती – मान लेते कि वह बनना चाहता था। लेकिन कैडेट ज़रा भी नशे में नहीं था, सो ज़रूर वह किसी बुरे काम के लिए उसे पटाना चाहता था। "अरे जा!" लुकाश्का सोच रहा था। "घोड़ा तो मेरे पास है, आगे की देखी जायेगी! हम तो ख़ुद किसी से कम नहीं। देख लेंगे, कौन किसे चकमा देता है!" वह यह सोच रहा था और ओलेनिन से सतर्क रहने की आवश्यकता अनुभव करते हुए अपने मन में उसके प्रति दुष्भाव जगा रहा था। उसने किसी को यह नहीं बताया कि उसे घोड़ा कैसे मिला। किसी से कहता कि ख़रीदा है, किसी को कोई गोल-मटोल जवाब दे देता। लेकिन गांव में शीघ्र ही सच्चाई का पता चल गया। लुकाश्का की मां, मर्यान्का, इल्या वसील्येविच और दूसरे कज़्ज़ाक, जिन्हें ओलेनिन की इस अकारण भेंट का पता चला, असमंजस में पड़ गये और कैडेट से आशंकित रहने लगे। लेकिन साथ ही इन आशंकाओं के बावजूद ओलेनिन की इस करनी ने उनके मन में उसकी सादगी और संपदा के प्रति आदर भी जगाया।

"सुना, वो इल्या वसील्येविच के किरायेदार कैडेट ने लुकाश्का को पचास कलदार का घोड़ा मुफ़्त में दे दिया," कोई कहता। "बड़ा अमीर है!"

"सुना है," दूसरा जवाब देता। "कोई सेवा की होगी उसकी। ख़ैर, देखते हैं, क्या बनता है आगे। क्या क़िस्मत है झपट्टू की!"

"ये कैडेट भी कमबख़्त बड़े चलते पुर्ज़े होते हैं!" कोई तीसरा कहता। "कहीं आग-वाग लगा देंगे, या कुछ और कर डालेंगे!"

२३

ओलेनिन का जीवन बिना किसी उतार-चढ़ाव के, एक ही गति से चल रहा था। बड़े अफ़सरों या अपने बराबरवालों से उसके कोई विशेष संबंध नहीं थे। इस लिहाज़ से काकेशिया में अमीर कैडेट की स्थिति विशेषत: अच्छी थी। उसे फ़ौजी कामों और अभ्यासों पर नहीं भेजा जाता था। मुहिम में भाग लेने के पुरस्कारस्वरूप उसे अफ़सर बनाने की सिफ़ारिश की गयी थी, फ़िलहाल वह चैन से रह सकता था। अफ़सर उसे अभिजात मानते थे और इसलिए उसके साथ संबंधों में मर्यादा बरतते थे। उधर अफ़सरों की पीने-पिलाने और गाने-बजाने की पार्टियों और ताश के खेलों में, जिनका अनुभव उसे अपनी सैनिक टुकड़ी के साथ रहते समय हुआ था, उसे कुछ भी आकर्षक नहीं लगता था, और अपनी ओर से वह भी गांव में अफ़सरों की संगत से और अफ़सरों के जीवन से कन्नी काटता था। कज़्ज़ाक गांवों में अफ़सरों के जीवन का एक निश्चित ढर्रा काफ़ी पहले ही बन चुका है। जिस तरह क़िले में हर कैडेट या अफ़सर नियमित रूप से तेज़ पोर्टर बियर पीता है, ताश खेलता है और मुहिम के लिए मिलनेवाले इनामों की बातें करता है, उसी तरह कज़्ज़ाक गांव में वह नियमित रूप से अपने मकान मालिक के साथ चिख़ीर पीता है, लड़कियों को मिठाइयां और शहद खिलाता है, कज़्ज़ाक औरतों के साथ इश्क लड़ाता है, उनका दीवाना बनता है और कभी-कभार शादी भी कर लेता है। ओलेनिन सदा निराले ढंग से रहा था और उसे पिटे-पिटाये रास्तों से अचेतन घृणा थी। यहां भी वह काकेशिया में तैनात अफ़सर के जीवन के घिसे-पिटे ढर्रे पर नहीं चला।

अपने आप ही उसकी ऐसी दिनचर्या बन गयी कि वह पौ फटते ही उठता। चाय पीकर और अपने ओसारे से पहाड़ों के, प्रभात के और मर्यान्का के सौंदर्य का रसपान कर चुकने पर वह बैल की खाल का फटा-पुराना कोट और कच्चे चमड़े के भिगोये हुए जूते पहनता, कमर पर कटार बांधता, बंदूक उठाता, नाश्ते और तंबाकू का झोला कंधे पर लटकाता, अपने कुत्ते को बुलाता और पांच बजते न बजते वह गांव के बाहर जंगल में चला जाता। शाम को जब वह लौटता तो सात बजने को होते। वह थका-मांदा और भूखा लौटता, पांच-छह फ़ेज़ेंट कमर पर लटकाये और कभी कोई जानवर भी, नाश्ते का झोला अछूता ही होता। यदि उसके मस्तिष्क में विचार भी उसी तरह लगे हुए होते जैसे डिबिया में सिगरेटें तो यह देखा जा सकता कि इन चौदह घंटों में वहां एक भी विचार हिला-डुला तक

नहीं है। नये नैतिक बल और ताज़गी की अनुभूति लिये वह घर लौटता और पूर्णतः सुखी होता। वह यह नहीं बता सकता था कि इस सारा समय वह क्या सोचता रहा है। कोई विचार थे या यादें, या फिर स्वप्न, जो उसके मस्तिष्क में घूमते रहे थे – इन सबके अंश ही मस्तिष्क में मंडराते रहे थे। कभी उसे ख़याल आता और वह अपने आप से पूछता : मैं क्या सोच रहा हूं? और वह अपने को एक कज़्ज़ाक पाता जो अपनी कज़्ज़ाक पत्नी के साथ बाग में काम कर रहा है, या वह पहाड़ों में घूमता अब्रेक होता, या अपने आप से ही बचकर भाग रहा वराह। और सारा समय वह ताकता रहता, कान लगाये सुनता रहता – कहीं कोई आहट हो, कोई फ़ेज़ेंट, वराह या हिरन दीखे।

शाम को येरोश्का मामा उसके यहां मौजूद होता। वन्यूशा चिख़ीर ले आता और वे बैठे हौले-हौले बातें करते रहते, जी भरकर पीते और दोनों बिल्कुल संतुष्ट होकर अपने-अपने घर सोने चले जाते। अगले दिन फिर शिकार, फिर सुखद थकावट, फिर से बातें करते हुए जी भर पीना, फिर दोनों सुखी। कभी-कभी त्योहार या छुट्टी के रोज़ वह सारा दिन घर पर रहता। तब उसका एक ही काम होता, अपनी खिड़कियों में से या ओसारे से वह मर्यान्का की हर गतिविधि को बड़ी उत्सुकता से देखता रहता, हालांकि स्वयं उसे इसकी चेतना न होती। वह मर्यान्का को वैसे ही देखता और प्यार करता था (उसे यही लगता था), जैसे कि वह पर्वतों और आकाश के सौंदर्य पर विमुग्ध होता था। उसके साथ किसी तरह का संबंध स्थापित करने का विचार तक ओलेनिन के मन में नहीं था। उसे लगता था कि मर्यान्का के साथ उसके वैसे संबंध भी नहीं हो सकते जैसे मर्यान्का और कज़्ज़ाक लुकाश्का के बीच संभव हैं, जबकि एक अमीर अफ़सर और कज़्ज़ाक लड़की के बीच जो संबंध संभव हैं, वे तो क़तई ही नहीं हो सकते। उसे लगता था कि यदि वह वैसा करने की कोशिश करेगा, जैसे कि उसके साथ के अफ़सर करते हैं, तो वह चिंतन-मनन के पूर्ण आनंद के स्थान पर यंत्रणा, निराशा और पश्चात्ताप के अथाह गर्त में जा पड़ेगा। इसके अलावा, इस स्त्री के संबंध में वह आत्म-त्याग का पराक्रम कर चुका था, जिससे उसे अपार हर्ष प्राप्त हुआ था; सबसे बड़ी बात यह थी कि वह न जाने क्यों मर्यान्का से डरता था और किसी भी हालत में उससे चुहल के लिए प्यार की बात करने का साहस नहीं कर सकता था।

गर्मियों में एक दिन ग्रोलेनिन शिकार पर नहीं गया, घर पर ही बैठा रहा। अचानक मास्को का उसका एक परिचित, एकदम नौजवान आदमी, जिससे वह कुलीन समाज में मिला था, मानो आसमान से वहां आ टपका।

"ओह, mon cher, माई डियर, कितनी ख़ुशी हुई मुझे यह जानकर कि आप यहां हैं," मास्को की फ़्रांसीसी में उसने बोलना शुरू किया और हर बात में फ़्रांसीसी शब्द जोड़ता हुआ बोलता चला गया। "मुझसे कहा– ओलेनिन। कौन ओलेनिन? इतनी ख़ुशी हुई मुझे।... कहां मिलाया क़िस्मत ने! तो कैसे हैं आप? क्या? क्यों?"

और प्रिंस बेलेत्स्की ने अपना सारा क़िस्सा सुना डाला: कैसे वह अस्थायी तौर पर इस रेजिमेंट में भरती हुआ, कैसे कमांडर-इन-चीफ़ उसे अपना ऐड-डे-कैम्प बनाना चाहता था और कैसे वह मुहिम के बाद इस पद पर जायेगा, हालांकि उसकी इसमें कोई दिलचस्पी नहीं है।

"इस सड़ियल जगह पर आये हैं, तो कैरियर तो बना लेना चाहिए... कोई क्रॉस... कोई ओहदा-वोहदा... गार्ड्स में तबादला। यह सब ज़रूरी है, मेरे अपने लिए नहीं, मगर रिश्तेदारों के लिए, जान-पहचानवालों के लिए। प्रिंस मुझसे बड़ी अच्छी तरह मिले, बड़े अच्छे आदमी हैं," बेलेत्स्की बोलता ही चला जा रहा था। "मुहिम के लिए मुझे सेंट आन्ना क्रॉस देने की सिफ़ारिश हुई है। अब मुहिम तक यहां रहूंगा। बड़ी शानदार जगह है यह। क्या औरतें हैं! आप कैसे रह रहे हैं? हमारा कप्तान स्तार्त्सेव, जानते हैं न, वह भोला, भोंदू जीव... वह मुझसे कह रहा था कि आप तो बिल्कुल जंगलियों की तरह रहते हैं, किसी से मिलते-जुलते ही नहीं। मैं समझता हूं, आप यहां के अफ़सरों से मेल-मिलाप नहीं बढ़ाना चाहते। मुझे ख़ुशी है कि अब हम मिला करेंगे। मैं यहां हवलदार के घर में ठहरा हूं। क्या लड़की है वहां, उस्तेन्का! सच कहता हूं– लाजवाब है!"

वह दुनिया, जिसे ओलेनिन सोचता था कि वह सदा के लिए छोड़ आया है, उस पर फ़्रांसीसी और रूसी शब्दों की बौछार करती ही जा रही थी, करती ही जा रही थी।

बेलेत्स्की के बारे में आम राय यह थी कि वह नरम स्वभाव का अच्छा नौजवान है। हो सकता है, वह वास्तव में ऐसा रहा भी हो, लेकिन ओलेनिन को वह सलोने चेहरे के बावजूद अत्यंत अप्रिय लगा। उससे वह सारी अधमता फूटी पड़ रही थी, जिसे ओलेनिन त्याग चुका था। सबसे

अधिक झुंझलाहट उसे इस बात पर हो रही थी कि वह उस दुनिया के इस आदमी को दुत्कार नहीं सकता था, ऐसा करने में बिल्कुल असमर्थ था, मानो उस पुरानी दुनिया का, उसके भूतपूर्व संसार का उस पर कोई अलंघनीय अधिकार था। उसे बेलेत्स्की पर और स्वयं अपने पर ग़ुस्सा आ रहा था और अपनी इच्छा के विपरीत वह अपनी बातचीत में फ़्रांसीसी फ़िकरे जोड़ रहा था, कमांडर-इन-चीफ़ में और मास्को के परिचितों में दिलचस्पी दिखा रहा था और इस आधार पर कि वे दोनों कज़्ज़ाकों के गांव में फ़्रांसीसी बोली बोल रहे थे, वह अपने साथ के अफ़सरों और कज़्ज़ाकों के बारे में हिकारत से बातें कर रहा था और बेलेत्स्की के साथ दोस्ताना बर्ताव कर रहा था। उसने बेलेत्स्की को अपने यहां आते रहने को कहा और ख़ुद भी उसके यहां आने का वायदा किया। लेकिन ओलेनिन स्वयं बेलेत्स्की के यहां नहीं गया। वन्यूशा को बेलेत्स्की पसंद आया, उसके अनुसार वह असली साहब था।

बेलेत्स्की ने तुरंत ही कज़्ज़ाक गांव में अमीर अफ़सरों की आम ज़िंदगी अपना ली। ओलेनिन के देखते-देखते एक महीने में वह गांव का पुराना निवासी ही बन गया; वह बूढ़ों को पिलाता, दावतें देता और ख़ुद लड़कियों के यहां दावतों में जाता, अपनी जीतों की डींगें मारता और नौबत यहां तक आ गयी कि कज़्ज़ाक औरतें और लड़कियां पता नहीं क्यों उसे बाबा कहने लगीं, जबकि कज़्ज़ाक शराब और औरत के शौक़ीन इस आदमी को आसानी से समझ गये, उसके आदी हो गये। उन्हें तो वह ओलेनिन से अधिक पसंद आया जो उनके लिए एक पहेली ही था।

२४

सुबह के पांच बजे थे। वन्यूशा ओसारे पर समोवार जला रहा था। ओलेनिन घोड़े पर सवार होकर तेरेक में नहाने चला गया। (इधर कुछ दिनों से उसने अपने लिए एक नया मनोविनोद सोच लिया था – अपने घोड़े को नदी में नहलाता था।) मकान मालकिन अपनी कोठरी में थी, जिसके धुआंरे से जलायी जा रही अंगीठी का घना काला धुआं उठ रहा था; लड़की छप्पर में भैंस को दोह रही थी। "अरी, खड़ी हो जा, मुई!" वहां से उसका अधीर स्वर आया और फिर दोहने की एकसार आवाज़ आने लगी।

घर के पास की गली में से घोड़े की चुस्त टाप सुनायी दी और सुंदर, सच्चे घोड़े की गीली, चमकती नंगी पीठ पर सवार ओलेनिन फाटक के पास पहुंचा। छप्पर में से मर्यान्का का सुंदर सिर, जिस पर लाल रूमाल बंधा हुआ था, प्रकट हुआ और फिर से ओझल हो गया। ओलेनिन लाल रेशमी कमीज़ और सफ़ेद चेर्केस कोट पहने था, जिस पर कटार के साथ कमरबंद बंधा हुआ था। उसके सिर पर ऊंची टोपी थी। हृष्ट-पुष्ट घोड़े की गीली पीठ पर वह ज़रा नज़ाकत से बैठा हुआ था। पीठ पीछे बंदूक को थामते हुए वह फाटक खोलने के लिए झुका। उसके बाल अभी गीले थे, चेहरे पर यौवन और स्वास्थ्य की दमक थी।

वह सोच रहा था कि वह ख़ूबसूरत और फ़ुर्तीला है, और जिगीत जैसा है; लेकिन यह उसका भ्रम था। किसी भी अनुभवी काकेशियावासी की नज़रों में वह सिपाही ही था।

लड़की का सिर निकला देखकर वह और भी अधिक चुस्ती से झुका, फाटक का टट्टर खोलकर उसने लगाम खींची, कोड़ा फटकारा और अहाते में चला आया। "वन्यूशा, चाय तैयार है?" छप्पर की ओर न देखते हुए उसने विनोदमय स्वर में आवाज़ लगायी। वह सहर्ष यह अनुभव कर रहा था कि किस तरह उसका सुंदर घोड़ा पिछले पुट्ठे सिकोड़ता, लगाम खींचता और एक-एक मांसपेशी फड़काता अहाते की सूखी, सख़्त ज़मीन पर सुम पटक रहा है, किसी भी क्षण बाड़ के पार छलांग लगाने को तैयार है। "से प्रे!"* वन्यूशा ने जवाब दिया। ओलेनिन को लग रहा था कि मर्यान्का का सुंदर सिर अभी भी छप्पर में से बाहर निकला हुआ है, लेकिन उसने मुड़कर नहीं देखा। जब वह घोड़े से कूदा तो उसकी बंदूक ओसारे में अटक गयी और वह बेढब-सा लड़खड़ाया। उसने सहमकर छप्पर की ओर देखा, लेकिन वहां कोई नज़र नहीं आ रहा था, बस दूध दोहने की एकसार आवाज़ ही अंदर से आ रही थी।

ओलेनिन घर के अंदर गया और थोड़ी देर में ही किताब और पाइप लिये बाहर आ गया। चाय का गिलास लेकर वह एक ओर को बैठ गया, जहां अभी सूरज की तिरछी किरणें नहीं पड़ रही थीं। इस दिन दोपहर के खाने तक उसका कहीं भी जाने का कोई इरादा नहीं था, वह चिट्ठियां लिखना चाहता था, जोकि बहुत दिनों से टालता आया था। लेकिन जाने

---

*तैयार है!

क्यों ओसारे से उठने को उसका मन नहीं हो रहा था, घर के अंदर जाना तो उसे जेल में जाने जैसा लग रहा था। मालकिन ने अंगीठी जला ली, लड़की गायों-भैंसों को चरने के लिए बाहर छोड़ आयी और लौटकर वाड़ की दीवार पर उपले लगाने लगी। ओलेनिन पढ़ रहा था, लेकिन उसकी आंखों के सामने खुली पड़ी किताब में क्या लिखा है यह उसकी बिल्कुल समझ में नहीं आ रहा था। बार-बार वह किताब से नज़रें हटाकर अपने सामने चलती-फिरती हृष्ट-पुष्ट युवा स्त्री को देखने लगता था। यह स्त्री मकान से पड़ रही सुबह की नम छाया में आती, या अहाते के बीच में फैले बाल रवि के हर्षोल्लासमय प्रकाश में जाती, जहां चमकीले वस्त्रों में उसकी सारी सुघड़ आकृति चमचमाती और उसकी काली परछाईं पड़ती– उसे सदा यही डर रहता कि इस ललना की कोई भी गति उसकी नज़रों से छूट न जाये। उसे यह देखकर ख़ुशी होती कि कैसे उसकी देह सहज लावण्य से झुकती है, उसके वक्ष और सुघड़ टांगों पर उसकी गुलाबी कमीज़ में कैसी चुन्नटें पड़ती हैं; कैसे उसकी कमर सीधी होती है और खुली कमीज़ तले उठती-गिरती छाती की सुडौल रेखाएं उभर आती हैं; कैसे पुरानी लाल चप्पल पहने उसके पतले पांवों का तलवा अपनी आकृति बदले बिना ज़मीन पर पड़ता है; कैसे ऊपर उठी आस्तीनों में उसकी बांहें मांस-पेशियां कसकर, मानो ग़ुस्से में फटाफट बेलचा चलाती हैं और कैसे उसकी गहरी काली आंखें कभी-कभार उसकी ओर उठ जाती हैं। पतली भौंहें भले ही सिकुड़ी होती हैं, पर आंखों में सुख और अपने सौंदर्य की चेतना छलकती है।

"क्यों, ओलेनिन, बड़ी देर हो गयी क्या आपको उठे हुए?" बेलेत्स्की की आवाज़ आयी। वह काकेशियाई अफ़सरों का कोट पहने अहाते में चला आ रहा था।

"ओ, बेलेत्स्की!" ओलेनिन ने हाथ बढ़ाते हुए जवाब दिया। "आज आप इतनी जल्दी कैसे?"

"क्या करें! भगा दिया मुझे। मेरे यहां आज दावत है। मर्यान्का, तुम आओगी न उस्तेन्का के यहां?" उसने लड़की से पूछा।

ओलेनिन को बड़ा आश्चर्य हुआ कि बेलेत्स्की इस स्त्री से इतनी आसानी से बात कर सकता है। लेकिन मर्यान्का ने जैसे कुछ सुना नहीं, अपना सिर झुकाया और बेलचा कंधे पर रखकर अपनी चुस्त मर्दानी चाल से कोठरी की ओर चल दी।

"शर्माती है, सुंदरी, शर्माती है," बेलेत्स्की ने कहा, "आप से शर्माती है," और मुस्कराते हुए ओसारे पर चढ़ आया।

"कैसी दावत है? किसने निकाला आपको?"

"उस्तेन्का के यहां, हमारी मकान-मालकिन के यहां दावत है, आपका भी न्योता है। दावत का मतलब है कज़्ज़ाक समोसे बनेंगे और लड़कियां जमा होंगी।"

"तो हम वहां क्या करेंगे?"

बेलेत्स्की के चेहरे पर चालाकी भरी मुस्कान फैल गयी। उसने आंख मारकर सिर से उस कोठरी की ओर इशारा किया, जिसमें मर्यान्का गयी थी।

ओलेनिन ने कंधे बिचकाये, उसका मुंह लाल हो गया।

"सच, आप भी अजीब आदमी हैं!" उसने कहा।

"अजी, छोड़िये, बनिये मत!"

ओलेनिन की त्योरियों में बल पड़ गये। बेलेत्स्की ने यह देख लिया और वह चापलूसी के भाव से मुस्कराया।

"कमाल है, यह कैसे हो सकता है?" वह बोला। "एक ही घर में रहते हैं... इतनी अच्छी, ऐसी लाजवाब लड़की है, ग़ज़ब की ख़ूबसूरत।..."

"आश्चर्यजनक है इसका सौंदर्य! ऐसी रूपवती मैंने कभी नहीं देखी!" ओलेनिन ने कहा।

"तो फिर?" बेलेत्स्की ने पूछा; उसकी समझ में बिल्कुल कुछ नहीं आ रहा था।

"यह विचित्र लग सकता है," ओलेनिन ने उत्तर दिया। "लेकिन वास्तव में जो बात है मैं वही क्यों न कहूं? जब से मैं यहां रहने लगा हूं, मेरे लिए जैसे औरत का अस्तित्व ही नहीं रहा है। और इतना अच्छा लग रहा है मुझे, सच! और फिर, हमें और इन औरतों को क्या चीज़ जोड़ सकती है? येरोश्का की बात और है; उसका मेरा एक ही शौक है – शिकार।"

"लो, करो बात! क्या चीज़? मुझे और अमालिया इवानोव्ना को क्या चीज़ जोड़ती है? वही। आप कहेंगे कि ये साफ़-सुथरी नहीं हैं, सो बात दूसरी है। A la guerre comme á la guerre!*"

---

*जैसा रंग, वैसा ढंग!

"पर मैंने तो कभी उन अमालिया बाइयों को नहीं जाना है और न कभी उनके साथ बर्ताव करना मुझे आया है," ओलेनिन ने जवाब दिया। "उनकी इज़्ज़त नहीं की जा सकती, लेकिन इनके लिए तो मेरे दिल में इज़्ज़त है।"

"तो रखिये इज़्ज़त! कौन आपको इज़्ज़त करने से रोकता है?"

ओलेनिन ने इस पर कुछ नहीं कहा। उसने जो बात कहनी शुरू की थी उसे ही वह पूरी करना चाहता था। वह उसके दिल की बात थी।

"मैं जानता हूं कि मैं एक अपवाद हूं।" (प्रत्यक्षतः, वह लजा रहा था।) "लेकिन मेरा जीवन कुछ इस तरह ढल गया है कि मुझे न केवल अपने नियमों को बदलने की कोई आवश्यकता नहीं दिखायी देती, बल्कि आपकी भांति रहते हुए तो मैं यहां जी भी न सकूं, इतना सुखी जीवन व्यतीत करने की तो बात ही दूर रही। और फिर मैं इनमें कुछ और ही खोजता हूं, कुछ और ही देखता हूं, वह नहीं जो आप देखते हैं।"

बेलेत्स्की के चेहरे पर अविश्वास स्पष्ट था।

"तो भी आप आइये शाम को मेरे यहां, मर्यान्का भी होगी, मैं आपका परिचय करा दूंगा। अवश्य आइयेगा! यही है न कि मन न लगा, तो चले जाना। आयेंगे न?"

"आ तो जाता, लेकिन, सच पूछिये तो मुझे डर है कि कहीं मैं मोह-पाश में पड़ जाऊं।"

"अरे-रे-रे!" बेलेत्स्की चिल्लाया। "आप बस आ जाइये, आगे मैं आपको संभाल लूंगा। आयेंगे न? सच?"

"आ तो जाता, पर, सच में, मेरी समझ में नहीं आता कि हम करेंगे क्या, हमारी भूमिका क्या होगी।"

"देखिये, इसे मेरी प्रार्थना समझ लीजिये। आयेंगे न?"

"अच्छा, चला आऊंगा, शायद," ओलेनिन ने कहा।

"कमाल करते हैं आप भी! ऐसी लाजवाब औरतें हैं, और कहीं भी तो नहीं हैं ऐसी बेजोड़ औरतें, मगर आप यहां संन्यासियों की तरह रह रहे हैं! क्या तुक है! क्यों अपना जीवन ख़राब करें, जो है, उसका उपयोग क्यों न करें? आपने सुना, हमारी कंपनी को वोज़्द्वीझेन्स्कया भेजा जा रहा है?"

"लगता तो नहीं। मैंने सुना है कि आठवीं कंपनी वहां जायेगी," ओलेनिन ने कहा।

"नहीं, मुझे ऐड-डे-कैम्प का पत्र मिला है। वह लिखता है कि प्रिंस स्वयं मुहिम में होंगे। मुझे ख़ुशी है कि उनसे मिलने का अवसर मिलेगा। यहां तो अब मन ऊबने लगा है।"

"सुना है, जल्दी ही धावे पर जायेंगे।"

"यह तो नहीं सुना; हां, यह सुना है कि क्रिनोवीत्सिन को धावे के लिए सेंट आन्ना क्रॉस मिला है। वह लेफ़्टिनेंट बनने की उम्मीद लगाये था," बेलेत्स्की ने हंसते हुए कहा। "बड़ी बुरी हुई उसके साथ। वह हेड-क्वार्टर में गया है।..."

झुटपुटा होने लगा तो ओलेनिन दावत के बारे में सोचने लगा। इस न्योते ने उसे उलझने में डाल दिया था। वह जाना चाहता था, लेकिन वहां क्या होगा यह सोचकर कुछ अजीब, अटपटा और थोड़ा डर भी लग रहा था। वह जानता था कि वहां न कज़्ज़ाक होंगे, न औरतें, लड़कियों के अलावा वहां कोई नहीं होगा। यह क्या होगा? उसे कैसा बर्ताव करना होगा? क्या बोलना होगा? वे लोग क्या बातें करेंगे? उसके और इन जंगली कज़्ज़ाक लड़कियों के बीच क्या संबंध होंगे? बेलेत्स्की ऐसे अजीबो-गरीब, निर्लज्जतापूर्ण और साथ ही एकदम कड़े संबंधों के बारे में बताता रहा था।... उसे यह सोचना अजीब लगता था कि वह मर्यान्का के साथ एक ही कमरे में बैठा होगा और शायद उससे बातें भी करनी पड़ेंगी। वह जब उसकी राजसी गरिमामय ठवन याद करता तो उसे यह असंभव लगता। जबकि बेलेत्स्की बताता रहा था कि सब कुछ बिल्कुल आसान है। "क्या बेलेत्स्की मर्यान्का से भी ऐसे ही पेश आयेगा? हुं, दिलचस्प बात है," वह सोच रहा था। "नहीं, न जाना ही अच्छा है। यह सब इतना ओछा, इतना घिनौना है, सबसे बड़ी बात यह है कि इस सब में कुछ रखा नहीं है।" लेकिन फिर उसे यह कौतूहल सताने लगता: क्या होगा वहां, कैसे होगा? और उसने एक तरह से वचन भी दे रखा था। कुछ भी फ़ैसला किये बिना वह घर से निकला, बेलेत्स्की के घर तक गया और अंदर चला गया।

बेलेत्स्की जिस मकान में रह रहा था, वह ओलेनिन के मकान जैसा ही था। मकान लकड़ी के खंभों पर ज़मीन से कोई चार फ़ुट ऊपर उठा हुआ था। उसमें दो कमरे थे। सीधी सीढ़ियां चढ़कर ओलेनिन जिस कमरे में

घुसा, उस पहले कमरे में बड़ी दीवार के पास गद्दे, रज़ाइयां, तकिये, कालीन बड़ी सफ़ाई से और करीने से, कज़्ज़ाकों के ढंग से सजाकर रखे हुए थे। यहीं, अगल-बगल की दीवारों पर तांबे के बर्तन और हथियार टंगे हुए थे; बेंच तले तरबूज़ और कद्दू रखे हुए थे। दूसरे कमरे में खासा बड़ा अलावघर, मेज़ और बेंचें थीं, एक कोने में पुरातनपंथियों की देवप्रतिमाएं लगी हुई थीं। अपने बिस्तर और संदूकों के साथ बेलेत्स्की इसी कमरे में रह रहा था। दीवार पर उसका छोटा-सा कालीन टंगा हुआ था और उस पर हथियार, मेज़ पर प्रसाधन सामग्री रखी हुई थी और कुछ छविचित्र भी। बेंच पर रेशमी गाउन पड़ा हुआ था। साफ़-सुथरा और सलोना बेलेत्स्की केवल अंतरीय पहने पलंग पर लेटा हुआ था और «Les Trois Mousquetaires» पढ़ रहा था।

वह उछलकर खड़ा हो गया।

"देखा, कैसे मैं यहां जमा हुआ हूं। बढ़िया है न? बड़ा अच्छा किया आपने जो आ गये। वहां बड़े ज़ोरों से काम चल रहा है। आपको मालूम है कज़्ज़ाकों के समोसे कैसे बनते हैं? मैदा गूंधके उसमें सूअर का गोश्त और अंगूर भरते हैं। लेकिन यही सब कुछ नहीं है। उधर देखिये, वहां कैसी दौड़-धूप हो रही है!"

वाकई, खिड़की से झांकने पर उन्होंने मकान मालिकों के हिस्से में असाधारण चहल-पहल पायी। लड़कियां कभी कुछ तो कभी कुछ उठाये ड्योढ़ी में से आ-जा रही थीं।

"कितनी देर है?" बेलेत्स्की ने चिल्लाकर पूछा।

"थोड़ी-सी! क्यों, भूख लग आयी बाबा को?" और मकान में से खिलखिलाकर हंसने की आवाज़ आयी।

गदराये बदन और लाल गालोंवाली सलोनी-सी उस्तेन्का आस्तीन ऊपर चढ़ाये बेलेत्स्की के कमरे में प्लेटें लेने आयी।

"अरे, छोड़ो! देखो, प्लेटें टूट जायेंगी," बेलेत्स्की से बचकर निकलते हुए वह चीखी। "तुम मदद कराने आओ न," हंसते हुए उसने ओलेनिन से कहा। "लड़कियों के लिए मिठाइयां लाना न भूलना।"

"मर्यान्का आ गयी?" बेलेत्स्की ने पूछा।

"और नहीं तो क्या! वही तो मैदा गूंधके लायी है।"

"जानते हैं," बेलेत्स्की ओलेनिन से कहने लगा, "यदि इस उस्तेन्का को ढंग से कपड़े पहना दें, साफ़-सुथरा कर दें, थोड़ा संवार दें, तो हमारी

सभी सुंदरियों से बढ़कर होगी। ग्रापने वह कज़्ज़ाक स्त्री देखी है, जिसकी कर्नल से शादी हुई है—बोर्श्चेवा नाम है। क्या शान है उसमें! कहां से ग्राता है इनमें यह सब?.."

"मैंने बोर्श्चेवा को तो नहीं देखा, लेकिन मेरे ख़याल में इनकी इस वेशभूषा से ग्रच्छी ग्रौर कोई नहीं हो सकती।"

"मैं तो ग्राराम से हर तरह की ज़िंदगी में ग्रपने को ढाल लेता हूं," बेलेत्स्की ने विनोदमय ग्राह भरकर कहा। "जाकर देखता हूं क्या कर रही हैं।"

वह गाउन पहनकर बाहर दौड़ गया। जाते-जाते चिल्लाकर कह गया:

"ग्राप मिठाई का बंदोबस्त कर लीजिये!"

ग्रोलेनिन ने बेलेत्स्की के ग्रर्दली को मिठाई ग्रौर शहद लाने भेजा। ग्रचानक उसे पैसे देना इतना घिनौना लगा, मानो वह किसी को घूस दे रहा हो, कि उसने ग्रर्दली के इस सवाल का कोई ठीक जवाब नहीं दिया: "पिपरमैंटवाली कितनी खरीदूं ग्रौर शहदवाली कितनी?"

"ग्रपने ग्राप देख लेना।"

"सारे पैसों की?" बूढ़े सिपाही ने ग्रर्थपूर्ण स्वर में पूछा। "पिपर-मैंटवाली ज़्यादा महंगी हैं। सोलह कोपेक की दे रहा था।"

"सारों की ले ग्राग्रो, सारों की," ग्रोलेनिन ने कहा ग्रौर जाकर खिड़की के पास बैठ गया। उसे स्वयं इस बात पर ग्राश्चर्य हो रहा था कि उसकी छाती में ऐसे धुकधुक क्यों हो रही है जैसे कि वह कोई बहुत बड़ा ग्रौर बुरा काम करने जा रहा हो।

बेलेत्स्की के लड़कियों के मकान में घुसने पर वहां मची चिल्ल-पों उसने सुनी ग्रौर कुछ मिनट बाद देखा कि चीखों, ठहाकों ग्रौर गुल-गपाड़े के साथ वह वहां से बाहर धकेला गया ग्रौर दौड़ता हुग्रा सीढ़ियां उतरा।

"निकाल दिया," उसने कहा।

कुछ मिनट बाद उस्तेन्का ग्रायी ग्रौर यह कहकर कि सब कुछ तैयार है उसने ग्रतिथियों को ग्रपने घर में चलने को निमंत्रित किया।

जब वे घर में घुसे तो वहां सचमुच सब कुछ तैयार था, उस्तेन्का दीवार के साथ तकिये ठीक से लगा रही थी। मेज़ पर बहुत ही छोटा मेज़पोश बिछा हुग्रा था ग्रौर उस पर चिख़ीर की सुराही ग्रौर सूखी मछली रखी हुई थी। मकान में गूंधे मैदे की ग्रौर ग्रंगूर की सुगंध फैल रही थी। सजीले वेशमेत पहने कोई छह लड़कियां जिनके सिर पर सदा की भांति

रूमाल नहीं बंधे हुए थे, अलावघर के पीछे कोने में दुबकी हुई थीं, काना-फूसी करती खिलखिला रही थीं। "किरपा करिये, हमारी अंगूरी चखिये," उस्तेन्का ने अतिथियों को निमंत्रित किया।

ओलेनिन ने लड़कियों के झुंड में, जिसमें बिना किसी अपवाद के सभी सुंदर थीं, मर्यान्का को देख लिया। यह सोचकर उसका मन दुखी हुआ और झुंझलाया कि वह ऐसी ओछी और अटपटी परिस्थितियों में उसके निकट आ रहा है। वह अपने आप को भोंदू और अटपटा अनुभव कर रहा था, और उसने निश्चय किया कि जो बेलेत्स्की करेगा, वही वह करेगा। बेलेत्स्की कुछ समारोही-से ढंग से, लेकिन अकड़ते हुए और बेतकल्लुफ़ी से मेज़ तक गया, वहां उसने उस्तेन्का की सेहत का जाम पिया और दूसरों को भी ऐसा करने का निमंत्रण दिया। उस्तेन्का ने कहा कि लड़कियां नहीं पीतीं।

"शहद मिलाकर तो पी सकती हैं," लड़कियों में से किसी की आ-वाज़ आयी।

अर्दली को बुलाया गया, जो अभी-अभी शहद और मिठाई लेकर लौटा था। उसने न जाने ईर्ष्या से या हिकारत से मालिकों पर तिरछी नज़र डाली, जो उसके ख़याल में रंगरलियां मना रहे थे; शहद और मोटे कागज़ में लिपटी खताई जैसी मिठाई बड़े ध्यान से और ईमानदारी से सौंपकर वह दाम की व बाक़ी बचे पैसों की बात समझाने लगा, लेकिन बेलेत्स्की ने उसे भगा दिया।

गिलसियों में उंडेली अंगूरी में शहद घोलकर और तीन पौंड मिठाई मेज़ पर सजाकर बेलेत्स्की ने लड़कियों को खींचकर कोने में से बाहर निकाला, उन्हें मेज़ के पास बिठाया और मिठाई बांटने लगा। ओलेनिन ने अनचाहे ही यह देखा कि किस तरह मर्यान्का ने अपने धूप से संवलाये छोटे से हाथ में पिपरमैंटवाली मिठाई के दो गोल टुकड़े और एक भूरा टुकड़ा पकड़ लिया था और यह समझ नहीं पा रही थी कि उनका क्या करे। उस्तेन्का और बेलेत्स्की तो बेतकल्लुफ़ी दिखा रहे थे और सबको प्रमोदित करने की चेष्टा कर रहे थे, लेकिन फिर भी बातचीत बुझी-बुझी और अरुचिकर ही चल रही थी। ओलेनिन सकुचा रहा था, सोच रहा था कि क्या कहे, यह अनुभव कर रहा था कि दूसरों में कौतूहल जगा रहा है और शायद उन्हें उपहासास्पद भी लग रहा है, दूसरों को अपने संकोच से जकड़ रहा है। वह शर्म से लाल हो रहा था और उसे लग

रहा था कि मर्यान्का को ख़ास तौर पर अटपटा लगा रहा है। "इन्हें शायद यह उम्मीद है कि हम इन्हें पैसे देंगे," वह सोच रहा था। "कैसे हम पैसे देंगे? और कैसे जल्दी से जल्दी दे-दाकर जान छुड़ायी जाये?"

२५

"यह क्या बात है कि तुम अपने किरायेदार को ही नहीं जानतीं?" बेलेत्स्की ने मर्यान्का से कहा।

"जानें कैसे, जब ये हमारे यहां आते ही नहीं?" मर्यान्का ने ओलेनिन पर एक नज़र डालकर कहा।

ओलेनिन न जाने किस बात से डर गया, उसका चेहरा एकदम लाल हो गया और बिना सोचे-समझे कि वह क्या कह रहा है, वह बोला:

"मुझे तुम्हारी मां से डर लगता है। पहली बार जब मैं तुम्हारे यहां आया था, उसने मुझे ऐसी खरी-खोटी सुनायी थी।"

मर्यान्का खिलखिलाकर हंसी।

"इतने में ही डर गये?" उसने कहा और ओलेनिन पर एक नज़र डालकर मुंह मोड़ लिया।

अब कहीं पहली बार ओलेनिन ने सुंदरी का सारा चेहरा देखा, इससे पहले तो उसने उसे आंखों तक रूमाल लपेटे ही देखा था। वह गांव में सबसे सुंदर यों ही नहीं मानी जाती थी। उस्तेन्का प्यारी-सी लड़की थी, नाटी, गोल-मटोल, लाल-लाल गालों और कजरारी आंखोंवाली; उसके लाल होंठों पर सदा मुस्कान रहती, वह सदा हंसती और बतियाती रहती। उसके विपरीत मर्यान्का प्यारी-सी नहीं थी, लेकिन वह सुंदरी थी। उसके नयन-नक्श बहुत ही मर्दाने और अनघड़ लग सकते थे, यदि उसकी सारी देह इतनी सुघड़, उसकी छाती और कंधे इतने सुडौल न होते, और सबसे बड़ी बात, यदि काली भौंहों तले स्याह छाया से घिरे उसके काले मृगनयनों में यह सख़्ती भरा और साथ ही कोमलता का भाव न होता और उसके मुंह पर, उसकी मुस्कान में इतना स्नेह न छलकता होता। वह विरले ही मुस्कराती थी, लेकिन उसकी मुस्कान सदा चकाचौंध करती थी। एक अक्षत शक्ति और हृष्ट-पुष्टता का आभास उससे होता था। सभी लड़कियां सुंदर थीं, लेकिन वे स्वयं भी, और बेलेत्स्की भी, मिठाई लेकर आया अर्दली भी—सभी बरबस उसी की ओर देखते थे, लड़कियों को संबोधित करते हुए उसी

को संबोधित करते थे। उनके बीच वह एक गर्वीली ग्रौर सुखी रानी लगती थी।

बेलेत्स्की दावत में जान बनाये रखने की कोशिश में लगातार बोलता चला जा रहा था, लड़कियों से चिख़ीर पेश करवा रहा था, उनके साथ मज़ाक कर रहा था, मर्यान्का की ख़ूबसूरती के बारे में ग्रोलेनिन से फ़्रांसीसी में भद्दी टिप्पणियां कर रहा था, उसे "la vôtre" (ग्रापकी) कह रहा था ग्रौर ग्रोलेनिन को सुझा रहा था कि वह भी उसकी ही तरह करे। ग्रोलेनिन के लिए यह सब ग्रसहनीय होता जा रहा था। उसने यहां से निकल भागने का बहाना सोचा ही था कि तभी बेलेत्स्की ने कहा कि दावत उस्तेन्का के लिए की गयी है इसलिए वह चिख़ीर पेश करे ग्रौर साथ में चुंबन दे। उस्तेन्का इस शर्त पर राज़ी हो गयी कि उसकी रकाबी में वे पैसे रखें, जैसा कि कज़्ज़ाकों के यहां शादी-ब्याह में होता है।

"शैतान मुझे इस घिनौनी दावत में खींच लाया!" ग्रोलेनिन ने मन ही मन सोचा ग्रौर उठकर जाना चाहा।

"कहां चल दिये?"

"जाके ग्रपना तंबाकू लाता हूं," भागने के इरादे से उसने कहा, लेकिन बेलेत्स्की ने उसका हाथ पकड़ लिया।

"मेरे पास पैसे हैं," उसने फ़्रांसीसी में कहा।

"जा नहीं सकता, यहां पैसे देने चाहिए," ग्रोलेनिन ने सोचा ग्रौर उसे ग्रपनी बेढबी पर बड़ी झुंझलाहट हुई। "क्या मैं वह सब नहीं कर सकता जो बेलेत्स्की करता है? मुझे ग्राना नहीं चाहिए था, लेकिन ग्रब ग्रा गया हूं तो इनका मज़ा किरकिरा नहीं करना चाहिए। कज़्ज़ाकों की तरह पीनी चाहिए," ग्रौर उसने लकड़ी का कटोरा उठाकर जिसमें लगभग ग्राठ गिलास ग्राते थे, उसमें ग्रंगूरी उंडेली ग्रौर प्राय: सारी की सारी पी गया। लड़कियां हक्की-बक्की ग्रौर भयभीत-सी उसे पीते देख रही थीं। उन्हें यह ग्रजीब ग्रौर ग्रशिष्ट लगा। उस्तेन्का ने दोनों को एक-एक गिलास ग्रौर पेश की ग्रौर दोनों को चुंबन दिया।

"लो री, लड़कियो, ग्राज मौज करेंगी," रकाबी पर मर्दों के रखे चार कलदार खनकाते हुए उसने कहा।

ग्रोलेनिन को ग्रब ग्रटपटा नहीं लग रहा था। वह बातें करने लगा।

"चलो, मर्यान्का, ग्रब तुम चुंबन के साथ पेश करो," बेलेत्स्की ने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा।

"ऐसा दूंगी चुम्मा!" उसने मज़ाक में उस पर हाथ उठाते हुए कहा।

"बाबा को तो पैसों के बिना भी चूम सकते हैं," दूसरी लड़की बोल पड़ी।

"कितनी समझदार है!" बेलेत्स्की ने कहा और हाथ-पांव मारती लड़की का चुंबन ले लिया। "नहीं, तुम पेश करो," बेलेत्स्की ने फिर से मर्यान्का से कहा। "अपने किरायेदार को पेश करो।"

और उसका हाथ पकड़कर वह उसे बेंच तक ले आया और वहां ओलेनिन के बगल में बिठा दिया।

"क्या रूप है!" उसका सिर घुमाते हुए बेलेत्स्की ने कहा।

मर्यान्का ने कोई विरोध नहीं किया, गर्वीली मुस्कान के साथ उसने अपने मृगनयन ओलेनिन की ओर घुमाये।

"रूप की रानी है!" बेलेत्स्की ने फिर से कहा।

"कैसी सुंदरी हूं मैं!" मर्यान्का की दृष्टि भी यह कहती प्रतीत हुई।

ओलेनिन ने, बिना सोचे-समझे कि वह क्या कर रहा है, मर्यान्का का आलिंगन करना और चुंबन लेना चाहा। सहसा वह उछली, बेलेत्स्की को धकेला, मेज़ पर से ढकना गिरा दिया और छिटककर अलावघर के पास जा खड़ी हुई। लड़कियां चीखने और हंसने लगीं। बेलेत्स्की ने उनके कान में कुछ कहा और अचानक वे सब बाहर ड्योढ़ी में भाग गयीं और कमरे का दरवाज़ा उन्होंने बाहर से बंद कर दिया।

"तुमने बेलेत्स्की को तो चूमा और मुझे क्यों नहीं चूमना चाहतीं?" ओलेनिन ने पूछा।

"नहीं चाहती, बस, मेरी मर्ज़ी," अपना होंठ काटते और भौंह तानते हुए उसने कहा। "वह तो बाबा है," मुस्कराते हुए उसने इतना और जोड़ दिया, फिर दरवाज़े पर जाकर थपथपाने लगी: "क्यों बंद कर दिया, चुड़ैलो?"

"रहने दो उन्हें वहां, हम यहां रहेंगे," ओलेनिन ने उसके पास जाते हुए कहा।

उसके माथे पर बल पड़ गये और उसने सख़्ती से हाथ बढ़ाकर उसे अपने से दूर हटा दिया। फिर से ओलेनिन को उसमें ऐसी राजसी गरिमा दिखी कि वह होश में आ गया और उसे शर्म आयी कि वह क्या कर रहा है। दरवाज़े के पास जाकर वह उसे झकझोरने लगा।

"बेलेत्स्की, खोलिये! यह क्या भोंडा मज़ाक है!"

फिर से मर्यान्का की मुक्त हंसी गूंजी।

"डरते हो क्या मुझसे?" उसने कहा।

"तुम भी तो अपनी मां की जैसी गुस्सैल हो।"

"तुम येरोश्का मामा के साथ ही बैठे रहा करो तब तुम्हें लड़कियां बड़ा प्यार करेंगी," और वह सीधे उसकी आंखों में झांकते हुए मुस्करा दी।

वह नहीं जानता था कि क्या कहे।

"अगर मैं तुम्हारे यहां आया करता तो?.." उसके मुंह से निकला।

"तब दूसरी बात होती," सिर झटककर उसने कहा।

इसी क्षण बेलेत्स्की ने दरवाज़ा धकेलकर खोल दिया और मर्यान्का इस तरह उछलकर पीछे हटी कि उसका कूल्हा ओलेनिन की टांग से टकराया।

"पहले जो कुछ मैं सोचता रहा हूं वे सब बातें थोथी हैं: प्यार, सुख, लुकाश्का। सुख बस एक ही बात में हैं: जो सुखी है, वही सही है," ओलेनिन के दिमाग में यह विचार कौंधा और अपने लिए भी अप्रत्याशित शक्ति से उसने सुंदरी मर्यान्का को पकड़कर उसकी कनपटी और गाल चूमा। मर्यान्का नाराज़ नहीं हुई, बस ज़ोर से हंसी और दौड़कर दूसरी लड़कियों के पास चली गयी।

दावत यहीं ख़त्म हो गयी। उस्तेन्का की मां काम से लौट आयी और उसने लड़कियों को डांट-डपटकर भगा दिया।

२६

"हां," घर लौटते हुए ओलेनिन सोच रहा था, "अपने को अगर थोड़ी ढील दे दूं तो पूरी तरह इस लड़की के मोहपाश में पड़ जाऊं।" इन्हीं विचारों के साथ वह सोने गया, लेकिन सोच रहा था कि यह सब बीत जायेगा और उसका वही पुराना जीवन लौट आयेगा।

लेकिन पुराना जीवन नहीं लौटा। मर्यान्का को वह दूसरी नज़रों से देखने लगा। उनके बीच पहले जो दीवार थी वह ढह गयी। ओलेनिन अब उससे मिलने पर हर बार उसका अभिवादन करता।

मकान मालिक जब किराया लेने आया तो ओलेनिन के इतने धनवान और उदार होने की बातें सुनकर उसने उसे अपने यहां बुलाया। मकान

मालकिन ने प्यार से उसकी ख़ातिर की। दावत के दिन से ओलेनिन अक्सर शाम को उनके घर जाने लगा। वहां वह रात तक बैठा रहता। यों देखने में लगता था कि वह पहले की ही भांति गांव में रह रहा है, लेकिन उसके हृदय में सब कुछ बदल गया था। दिन वह जंगल में बिताता, कोई आठ बजे जब सांझ घिरती तो वह मकान मालिकों के यहां चला जाता – अकेला ही या येरोश्का मामा के साथ। वे उसे अपने यहां देखने के इतने आदी हो गये कि यदि वह न आता तो वे हैरान होते। अंगूरी के वह अच्छे दाम देता था और आदमी भी शांत स्वभाव का था। वन्यूशा उसके लिए चाय ले आता; वह अलावघर के पास एक कोने में बैठ जाता; मकान मालकिन निस्संकोच अपना काम करती रहती और वे चाय और चिख़ीर पीते हुए कज़्ज़ाकों के कामों की, पड़ोसियों की और रूस की बातें करते रहते; रूस के बारे में ओलेनिन बताया करता और वे पूछा करते। कभी-कभी वह अपने साथ किताब ले जाता और वहां बैठा पढ़ता रहता। मर्यान्का जंगली बकरी की तरह अपने पांव समेटकर अलावघर के ऊपर या अंधेरे कोने में बैठी रहती। वह बातचीत में हिस्सा नहीं लेती थी, लेकिन ओलेनिन उसकी आंखें और चेहरा देखता था, उसके उठने-बैठने, चलने-फिरने – सभी गतियों की, और बीज खाने की आवाज़ें सुनता था और यह अनुभव करता था कि जब वह बोलता है तो वह रोम-रोम से सुनती है। जब वह चुपचाप किताब पढ़ रहा होता तो भी मर्यान्का की उपस्थिति की उसे अनुभूति रहती। कभी-कभी ओलेनिन को लगता कि मर्यान्का की नज़रें उस पर लगी हुई हैं; जब उनकी नज़र टकरा जाती तो वह एकाएक चुप हो जाता और उसे देखने लगता। तब वह तुरंत ही छिप जाती और वह यह दिखावा करते हुए कि मकान मालकिन के साथ बातचीत में मशगूल है, उसके सांस की, उसकी हर गति की आवाज़ पर कान लगाये रहता और फिर से उसकी नज़र देख पाने की आस लगाये रहता। दूसरों के सामने वह उससे ज़्यादातर प्यार से हंसकर ही बात करती थी, लेकिन अकेले में लजाती और रुखाई दिखाती। कभी-कभी वह ऐसे समय उनके यहां आ जाता, जब मर्यान्का अभी गली से लौटी न होती: अचानक उसके क़दमों की तेज़ आहट आती, और खुले दरवाज़े में उसकी छींट की नीली कमीज़ की झलक दिखायी दे जाती। वह कमरे में आती, उसे देखती और उसकी आंखों में एक हल्की-सी स्नेहपूर्ण मुस्कान तिर जाती – वह प्रसन्न और भयभीत हो उठता।

उसकी कोई कामना नहीं थी, वह उससे कुछ नहीं चाहता था, लेकिन उसकी उपस्थिति ओलेनिन के लिए एक निरंतर बढ़ती आवश्यकता बनती जा रही थी।

ओलेनिन कज़्ज़ाक गांव के जीवन में इतना रम गया था कि अपना अतीत उसे बिल्कुल बेगाना-सा लगता था और भविष्य में, विशेषतः, जिस संसार में वह रह रहा था, उससे बाहर किसी भविष्य में उसकी कोई रुचि ही नहीं थी। घर से, अपने सगे-संबंधियों और मित्रों से जब पत्र मिलते तो उसे यह बहुत बुरा लगता कि वे उसके लिए दुखी हैं, सोचते हैं कि वह कहीं का नहीं रह गया, जबकि वह अपने कज़्ज़ाक गांव में रहते हुए उन सबको किसी काम का नहीं मानता था, जो उसके जैसा जीवन व्यतीत नहीं करते। उसे पूरा विश्वास था कि उसे कभी भी इस बात का पश्चात्ताप नहीं होगा कि उसने अपने पुराने जीवन से नाता तोड़ लिया है और अपने कज़्ज़ाक गांव में ऐसा एकाकी और अनोखा जीवन जी रहा है। मुहिमों में, क़िलों में उसे अच्छा लगा था, लेकिन यहां आकर ही, येरोश्का मामा का संरक्षण पाकर ही, अपने जंगल से, कज़्ज़ाक गांव के एक सिरे पर अपने घर से और विशेषतः मर्यान्का व लुकाश्का को याद करके ही उसके लिए अपने पुराने जीवन का सारा झूठ, सारा पाखंड एकदम स्पष्ट हो गया था। इस झूठ और इस पाखंड पर पहले भी उसका रोष जागता रहा था, लेकिन अब तो वह उसे एकदम घिनौना और हास्यास्पद लगता था। रोज़-ब-रोज़ वह अपने को अधिक स्वतंत्र और सच्चा मानव अनुभव कर रहा था। काकेशिया को उसने अपनी कल्पना के कोहक़ाफ़ से बिल्कुल भिन्न पाया। यहां उसे अपने सपनों और काकेशिया के सारे वर्णनों जैसा कुछ भी नहीं मिला। "काकेशियाई लबादों, प्रचंड जलधाराओं, रोमानी नायकों और खलनायकों जैसा यहां कुछ नहीं है," वह अब सोचता था, "लोग यहां वैसे ही जीते हैं, जैसे प्रकृति जीती है—मरते हैं, जन्म लेते हैं, संभोग करते हैं, फिर से वे जन्म लेते हैं, लड़ते-झगड़ते हैं, पीते हैं, खाते हैं, ख़ुश होते हैं और फिर मरते हैं, और कोई प्रतिबंध नहीं हैं, सिवाय उनके जो प्रकृति ने सूरज पर, घास पर, पशु-पक्षियों और वृक्षों पर भी लगाये हैं। उनके और कोई नियम नहीं हैं।..." इसलिए ये लोग उसे स्वयं अपनी तुलना में सुंदर, बलवान और मुक्त लगते थे और उन्हें देखते हुए अपने आप पर शर्म आती, अपने लिए खेद होता। प्रायः पूरी गंभीरता से उसके मन में यह विचार आता कि वह सब कुछ छोड़-छाड़ दे, अपना नाम

कज़्ज़ाकों में लिखा ले, मकान और ढोर-डंगर ख़रीद ले, कज़्ज़ाक औरत से – लेकिन मर्यान्का से नहीं, उससे वह लुकाश्का की ख़ातिर इंकार करता है – विवाह कर ले, और येरोश्का मामा के साथ रहे, उसके साथ शिकार करने और मछली पकड़ने जाया करे तथा कज़्ज़ाकों के साथ मुहिमों पर। "तो मैं ऐसा करता क्यों नहीं? किस बात का इंतज़ार है मुझे?" वह अपने आप से पूछता। वह अपने आप को उकसाता, शर्मिंदा करता : "क्या मैं वह काम करने से डरता हूं, जिसे मैं विवेकसंगत और न्यायसंगत मानता हूं? क्या एक आम कज़्ज़ाक होने, प्रकृति के समीप रहने, किसी का बुरा न करने, बल्कि लोगों का भला करने की इच्छा करना, इस सबके सपने देखना उस सबके सपने देखने की तुलना में बेवकूफ़ी है, जिसके सपने मैं पहले देखता रहा हूं – जैसे कि मंत्री बनने या रेजिमेंट कमांडर बनने के सपने?" लेकिन कोई अंतःस्वर उससे कह रहा था कि वह थोड़ा इंतज़ार करे, अभी फ़ैसला न करे। इस बात की अस्पष्ट-सी चेतना उसे रोक रही थी कि वह येरोश्का और लुकाश्का का जीवन पूरी तरह नहीं जी सकता; क्योंकि उसका सुख दूसरा है, – उसे यह विचार रोक रहा था कि सुख आत्मत्याग में ही है। लुकाश्का के लिए उसने जो किया था उससे उसका मन अभी भी सदा ख़ुश होता था। वह लगातार दूसरों के लिए आत्मत्याग के अवसर ढूंढता रहता था, लेकिन ऐसा कोई अवसर नहीं आता था। कभी-कभी वह सुख के अपने खोजे इस नुस्ख़े को भूल जाता था और सोचता था कि वह येरोश्का मामा के जीवन में पूर्णतः लीन होने में समर्थ है; लेकिन फिर सहसा उसे ध्यान आ जाता और वह तुरंत ही सचेतन आत्मत्याग का विचार पकड़ लेता और उसके आधार पर सभी लोगों को और पराये सुख को निश्चिंत होकर और सगर्व देखता।

२७

अंगूर की फ़सल बटोरे जाने के कुछ दिन पहले लुकाश्का घोड़े पर सवार होकर ओलेनिन के यहां आया। वह सदा से भी अधिक बांका लग रहा था।

"क्यों, शादी कर रहे हो?" ओलेनिन ने सहर्ष स्वागत करते हुए पूछा।

लुकाश्का ने सीधे-सीधे जवाब नहीं दिया।

"देखिये, नदी पार आपका घोड़ा बदला लिया! क्या घोड़ा है! लोव* का क़बरदा! घोड़े पहचानता हूं मैं।"

उन्होंने नये घोड़े को देखा, उसे अहाते में चलाकर उसकी चाल देखी। घोड़ा सचमुच ही लाजवाब था: रंग कुम्मैत, चौड़ी छाती, लंबा धड़, चमकते लोम, रेशमी पूंछ और उम्दा नस्ल के घोड़े का कोमल, पतला अयाल। इतना हट्टा-कट्टा था वह कि लुकाश्का के शब्दों में "इसकी पीठ पर चाहो तो लेट ही जाओ"। उसके सुम, आंखें और दांत – सभी एकदम सुस्पष्ट और तीखे थे, जैसे कि बिल्कुल साफ़ नस्ल के घोड़ों के होते हैं। ओलेनिन उसे एकटक निहारता जा रहा था। काकेशिया में अभी तक उसने इतना सुंदर घोड़ा नहीं देखा था।

"चाल कैसी है!" घोड़े की गर्दन थपथपाते हुए लुकाश्का ने कहा। "कैसे दौड़ता है! होशियार इतना है – मालिक के पीछे बंधा चलता है!"

"ऊपर से कितने दिये?" ओलेनिन ने पूछा।

"गिने नहीं," लुकाश्का ने मुस्कराते हुए जवाब दिया। "कुनाक से लिया है।"

"लाजवाब है, इतना ख़ूबसूरत! कितने लोगे?" ओलेनिन ने पूछा।

"डेढ़ सौ कलदार मिल रहे थे, पर आपको ऐसे ही दे दूंगा," लुकाश्का ने ज़िंदादिली से कहा। "आपके कहने की देर है, घोड़ा आपका। ज़ीन उतारकर सौंप दूंगा। मुझे बस काम के लिए कोई मिल जाये।"

"नहीं, नहीं, हरगिज़ नहीं।"

"अच्छा, मैं आपके लिए पेशकश लाया हूं," और लुकाश्का ने कमरबंद खोलकर उस पर बंधी दो कटारों में से एक निकाल उतारी। "नदी पार मिली थी।"

"शुक्रिया।"

"अंगूर, मां ने कहा था, ख़ुद ले आयेगी।"

"कोई ज़रूरत नहीं। हमारा-तुम्हारा लेना-देना होता रहेगा। मैं तुम्हें कटार के पैसे तो दे नहीं रहा।"

"यह आप क्या बात करते हैं – हम तो कुनाक हैं! ऐसे ही नदी पार गिरेइ ख़ान मुझे अपने घर ले गया, कहने लगा – ले लो जो अच्छा लगे। मैंने यह कटार ले ली। यही हमारा क़ायदा है।"

---

*लोव का अश्वपालन फ़ार्म पूरे काकेशिया में एक सबसे अच्छा फ़ार्म गिना जाता है। – ले०

उन्होंने अंदर जाकर होंठ तर किये।

"कुछ दिन रहोगे यहां?" ओलेनिन ने पूछा।

"नहीं, मैं विदा लेने आया हूं। मुझे चौकी से तेरेक पार हमारी टुकड़ी में भेज रहे हैं। आज ही अपने साथी नज़ारका के साथ जा रहा हूं।"

"ब्याह कब होगा?"

"थोड़े दिनों में आऊंगा, तब मंगनी होगी, और फिर से टुकड़ी में लौटना होगा," लुकाश्का ने अनिच्छा से जवाब दिया।

"तो क्या, मंगेतर से मिले बिना चले जाओगे?"

"हां, बस। क्या करना है मिल-विल के? आप जब मुहिम पर जायेंगे, तो हमारी टुकड़ी में पूछ लेना: लुकाश्का कहां है। क्या सूअर हैं वहां! मैंने दो मारे हैं। आपको ले जाऊंगा।"

"अच्छा, तो फिर विदा! ईसा तुम्हारी रक्षा करे!"

लुकाश्का घोड़े पर चढ़ा और मर्यान्का के यहां न जाकर अहाते से बाहर गली में चला गया, जहां नज़ारका उसका इंतज़ार कर रहा था।

"क्यों? उधर नहीं चलेंगे?" नज़ारका ने आंख मारकर उस ओर इशारा किया, जिधर याम्का रहती थी।

"ठीक!" लुकाश्का बोला। "ले, मेरा घोड़ा वहां ले जा, अगर मैं देर तक न आया तो इसे चारा डाल दियो। सुबह तक टुकड़ी में पहुंच ही जाऊंगा।"

"कैडेट ने और कुछ नहीं दिया?"

"नहीं। शुक्र समझ, उसे कटार देके अहसान चुकाया, वह तो घोड़ा ही मांगने चला था," घोड़े से उतरकर उसे नज़ारका को थमाते हुए लुकाश्का ने कहा।

ओलेनिन की खिड़की के बिल्कुल पास से होता हुआ वह अहाते में पहुंचा और मकान मालिकों के घर की खिड़की के पास गया। बिल्कुल अंधेरा हो चुका था। मर्यान्का सिर्फ़ एक कमीज़ पहने सोने से पहले बाल काढ़ रही थी।

"मैं हूं," कज़्ज़ाक फुसफुसाया।

मर्यान्का के चेहरे पर सख़्ती भरी उदासीनता का भाव था; लेकिन सहसा अपना नाम सुनते ही उसका चेहरा दमक उठा। खिड़की खोलकर वह बाहर झुकी—भयभीत और प्रसन्न।

"क्या है? क्या चाहिए?" वह बोली।

"खोल दो," लुकाश्का ने कहा। "अंदर आने दो पल भर को। इतना उदास हो गया हूं तुम्हारे बिना! सच!"

उसने मर्यान्का का सिर बांहों में भरकर चूमा।

"सच, खोल दो न!"

"क्या बेकार की बातें करते हो! कह दिया न नहीं आने दूंगी। कब तक रहोगे?"

वह कुछ जवाब नहीं दे रहा था, बस उसे चूमता जा रहा था। वह भी और नहीं पूछ रही थी।

"देखो तो, खिड़की में गलबहियां भी नहीं डाली जातीं ठीक से," लुकाश्का ने कहा।

"मर्यान्का!" मां की आवाज़ आयी। "कौन है, बेटी?"

लुकाश्का ने झट से टोपी उतार ली, ताकि उससे पहचाना न जाये और खिड़की तले झुक गया।

"जाओ, जल्दी से," मर्यान्का बुदबुदायी।

"लुकाश्का आया था," मां को उसने जवाब दिया, "बापू को पूछ रहा था।"

"तो भेज दे उसे इधर।"

"चला गया, कहता था, जल्दी में है।"

सचमुच ही लुकाश्का झुका-झुका ही तेज़ क़दमों से अहाते में चला गया और फिर याम्का के यहां भाग गया। केवल ओलेनिन ने ही उसे देखा। दो प्याले चिख़ीर के पीकर वह और नज़ारका गांव से चले गये। रात अंधेरी और शांत थी, सुखद गर्माहट लिये। वे चुपचाप चले जा रहे थे, बस घोड़ों की टाप ही सुनायी दे रही थी। लुकाश्का ने मिंगाल कज़्ज़ाक का गीत छेड़ा, लेकिन मुखड़ा अधूरा छोड़कर ही चुप हो गया और फिर नज़ारका से बोला:

"नहीं जाने दिया अंदर।"

"ओहो!" नज़ारका जवाब में बोला। "मुझे पता था नहीं जाने देगी। याम्का क्या कह रही थी: कैडेट उनके घर के चक्कर लगाने लगा है। येरोश्का मामा डींग हांक रहा था कि उसने कैडेट को मर्यान्का से मिलाने के बदले बंदूक ली है।"

"बकता है बुड्ढा शैतान!" लुकाश्का ने ग़ुस्से से कहा, "ऐसी लड़की

नहीं वह। नहीं तो मैं बुड्ढे की धुनाई कर डालूंगा।" ग्रौर वह ग्रपना मनपसंद गीत गाने लगा :

इस्माइल के गांव से,
मालिक के प्यारे बाग से,
उड़ निकला सलोना बाज़ एक।
दौड़ा पीछे उसके जवान एक,
पुकारता उसे, बुलाता दाहिने हाथ पे :
"उतर ग्रा बाज़ ग्रो, दाहिने हाथ पे,
तू न ग्राया तो मार डालेगा,
रूसी ज़ार मुझे"।
दिया जवाब तब यह बाज़ ने :
"सोने के पिंजरे में न रख पाया तू मुझे,
दाहिने हाथ पे न रख पाया तू मुझे;
उड़के जाऊंगा नीले समुंदर पे मैं,
करूंगा शिकार सफ़ेद हंस का मैं;
मांस कोमल मैं खाऊंगा,
तृप्ति तब मैं पाऊंगा"।

२८

मर्यान्का की मंगनी हो रही थी। लुकाश्का गांव लौट ग्राया था, लेकिन ग्रोलेनिन से मिलने नहीं ग्राया था। ग्रोलेनिन कार्नेट के निमंत्रण पर मंगनी में नहीं गया था। उसका मन उदास था, जब से वह गांव में रहने लगा था, तब से इतना उदास वह पहले कभी नहीं हुग्रा था। उसने देखा था कि चौथे पहर लुकाश्का सजा-धजा मां के साथ कार्नेट के घर गया था ग्रौर उसे यह विचार सता रहा था कि लुकाश्का उससे इतना खिंचा-खिंचा क्यों है। ग्रोलेनिन ग्रपने कमरे में बैठकर डायरी लिखने लगा।

"पिछले दिनों मैंने बहुत कुछ सोचा-विचारा है ग्रौर मैं बहुत बदल गया हूं," ग्रोलेनिन ने लिखा, "ग्रौर ग्रंततः उन निष्कर्षों पर पहुंचा हूं, जोकि सर्वविदित सत्य हैं। सुखी होने का बस एक ही रास्ता है : प्रेम करो, प्रेम में ग्रात्मोत्सर्ग करो, सबसे प्रेम करो, चारों ग्रोर प्रेम का ताना-बाना फैलाग्रो; जो उसमें ग्रा जाये, उसे ही ले लो। इस तरह मैंने वन्यूशा

को, येरोश्का मामा को, लुकाश्का और मर्यान्का को अपने प्रेम के ताने-बाने में ले लिया है।"

ओलेनिन जब ये आख़िरी शब्द लिख रहा था तभी येरोश्का मामा उसके कमरे में घुसा।

येरोश्का आजकल बहुत ही प्रसन्न था। कुछ दिन पहले ओलेनिन शाम को उसके घर गया तो उसे अहाते में छोटे-से चाकू से जंगली सूअर की खाल उतारते पाया था। ख़ुशी और गर्व से चमकता चेहरा लिये वह अपने काम में लगा हुआ था। पास ही उसके कुत्ते, जिनमें उसका चहेता ल्याम भी था, लेटे हुए थे और मालिक का काम देखते हुए हौले-हौले दुम हिला रहे थे। बाड़ के पीछे से लड़के आदर भरी नज़रों से उसे देख रहे थे और अब सदा की भांति उसे चिढ़ा नहीं रहे थे। पड़ोसिनें वैसे तो उसे मुंह नहीं लगाती थीं, लेकिन अब सब उसका हाल पूछ रही थीं और कोई उसके लिए चिख़ीर की सुराही ला रही थी, तो कोई दही और कोई आटा-मैदा। अगले दिन सुबह वह ख़ून से सना अपने छप्पर में बैठा था और सूअर का ताज़ा गोश्त पौंड-पौंड दे रहा था, किसी से पैसे लेकर और किसी से अंगूरी। उसके चेहरे पर लिखा था: "भगवान की किरपा से जानवर मार लिया, तो आज मामा की भी ज़रूरत पड़ गयी।" इस सबका नतीजा वही हुआ जो होना था – वह पीने लगा और अब चार दिन से पी रहा था, इस बीच गांव से कहीं नहीं गया था। इसके अलावा आज मंगनी में भी उसने पी थी।

कार्नेट के घर से जब येरोश्का मामा ओलेनिन के पास आया तो वह नशे में धुत्त था, उसका चेहरा लाल था, दाढ़ी अस्त-व्यस्त, लेकिन वह नया लाल बेशमेत पहने था, जिस पर गोट लगी हुई थी। वह बलालाइका लेकर आया था, जो उसने नदी पार ख़रीदी थी। उसने बहुत पहले से ओलेनिन को बलालाइका का आनंद दिलाने का वायदा कर रखा था और आज वह इसके लिए सही मिज़ाज में था। ओलेनिन को लिखते देखकर वह निराश हुआ।

"लिखते रहो, लिखते रहो," उसने फुसफुसाकर कहा, मानो उसे यह लग रहा हो कि उसके और कागज़ के बीच कोई आत्मा बैठी है और उसे डराना नहीं चाहिए, सो वह ज़रा भी शोर किये बिना हौले से फ़र्श पर बैठ गया। जब वह पिये होता तो उसे फ़र्श पर बैठना ही सबसे अच्छा लगता। ओलेनिन ने मुड़कर उस पर नज़र डाली, अंगूरी मंगवायी

ग्रौर लिखना जारी रखा। येरोश्का को अकेले पीना उबाऊ लग रहा था; वह बात करना चाहता था।

"मंगनी में गया था! थू, शूअर हैं! नहीं चाहिए मुझे! तुम्हारे पास आ गया।"

"बलालाइका कहां से ली?" ओलेनिन ने पूछा और लिखना जारी रखा।

"नदी पार गया था, भाई मेरे, वहीं से लाया हूं," उसने पहले की ही भांति दबे स्वर में कहा। "मैं तो इसे बजाने में उस्ताद हूं: तातारों का, कज्जाकों का, साहबों का, सिपाहियों का, जो कहो वही गीत-गाना सुना दूं।"

ओलेनिन ने एक बार फिर उस पर नज़र डाली, मुस्कराया और लिखता रहा।

इस मुस्कान से बूढ़े का हौसला बढ़ा।

"अरे छोड़ो, भाई तुम मेरे! छोड़ दो!" सहसा उसने दृढ़तापूर्वक कहा। "माना तुम्हारा दिल दुखाया है—पर मारो गोली, थूक दो! क्या, लिखते जाते हो, लिखते जाते हो! फ़ायदा क्या है?"

और उसने अपनी मोटी उंगलियों से फ़र्श पर ठकठक करते हुए ओलेनिन की नकल उतारी और हिकारत भरा मुंह बनाया।

"क्या शिकायतें लिखते रहते हो? अरे, मौज करो, मर्द बनो!" उसके लिए लिखने का मतलब सिर्फ़ शिकायती चिट्ठियां लिखना ही था।

ओलेनिन ने ठहाका मारा और येरोश्का ने भी। वह उछलकर फ़र्श से खड़ा हो गया और बलालाइका बजाने का अपना हुनर दिखाने लगा, तातार गाने लगा।

"अरे, लिखने में क्या रखा है, भले आदमी! इससे अच्छा तुम गाना सुनो, चलो, मैं सुनाता हूं। मर जाओगे, तो फिर कोई गाने-वाने सुनने को नहीं मिलेंगे। मौज करो!"

पहले उसने नाचते हुए अपना रचा एक गाना सुनाया:

अ-अजी-जी-जी-जी,
कहां देखा उसको जी?
बाज़ार में, दुकान में,
बेचता था वो सुइयां जी।

फिर उसने वह गाना सुनाया जो उसके पुराने दोस्त सूबेदार ने उसे सुनाया था :

सोम को हमें प्यार हुआ,
मंगल को दिल बेहाल हुआ,
बुध को प्यार का इज़हार किया,
चौथे रोज़ देखो इंतज़ार किया,
शुक्र को लो जवाब मिला :
हाय, न करो हमसे गिला।
शनि का फिर दिन आया,
मौत को जब हमने बुलाया;
तभी शुभ दिन रवि का आया,
मरने से उसने हमें बचाया।

और फिर से :

अ-अजी-जी-जी-जी
कहां देखा उसको जी ?

फिर कंधे बिचकाते, आंख मारते और पैरों से ताल देते हुए गाया :

गले लगा लूं तुझे, मैं चूम लूं,
लाल रेशम से तुझे संवार दूं,
आशा रखूं मैं नाम तेरा।
आशा, तू मेरी आशा,
सच्चा है कितना प्यार तेरा ?

और वह इतनी मस्ती में आ गया कि उछला और सारे कमरे में चक्कर काटता हुआ अकेला ही नाचने लगा।

अजी-जी-जी-जी का गाना और उसके जैसे दूसरे साहब लोगों के गाने उसने ओलेनिन के लिए ही गाये, लेकिन फिर और तीनेक गिलास चिख़ीर पीकर उसे बीते दिनों की याद आयी और वह सच्चे कज़्ज़ाक और तातार गीत गाने लगे। अपना एक मनपसंद गीत गाते-गाते अचानक उसकी आवाज़ भर्रा गयी और वह चुप हो गया, बस बलालाइका के तार झंकारता रहा।

"आह, मेरे दोस्त!" वह बोला।

बूढ़े के गले से निकली विचित्र आवाज़ सुनकर ओलेनिन ने सिर घुमाया: बूढ़ा रो रहा था। उसकी आंखें भरी हुई थीं और एक आंसू गाल पर ढरक रहा था।

"बीत गये मेरे दिन, बीत गये, अब नहीं लौटेंगे," सिसकते हुए उसने कहा और चुप हो गया। "पियो, पीते क्यों नहीं?" सहसा वह कर्णभेदी स्वर में चिल्लाया, आंसू अभी भी उसकी आंखों में थे।

एक तातार गीत उसे विशेषत: भावविह्वल करता था। इसमें शब्द थोड़े से ही थे, लेकिन इसका सारा आकर्षण इसकी दर्द भरी टेक में था: "हाय रे! हाय-हाय-हाय!" येरोश्का ने गीत के शब्द बताये: "नौजवान भेड़ों के रेवड़ को गांव से पहाड़ों में ले गया, रूसी आये, गांव जला डाला, सारे मर्दों को मार डाला, सभी औरतों को उठा ले गये। नौजवान पहाड़ों से लौटा: जहां गांव था, वहां उजाड़ था; मां नहीं, भाई नहीं, घर नहीं; बस एक पेड़ रह गया। नौजवान पेड़ तले बैठ गया और रोने लगा। अकेला मैं, तुझ-सा, अकेला रह गया, और गाने लगा जवान: हाय रे! हाय-हाय-हाय!" कलेजे को चीरती एक हूक जैसी यह टेक बूढ़े ने कई बार दोहरायी।

आख़िरी बार यह टेक गाते हुए येरोश्का ने सहसा दीवार पर टंगी बंदूक उठा ली और जल्दी-जल्दी अहाते में जाकर उसने दोनों नलियों से गोली दाग़ दी। और फिर से पहले से भी अधिक दर्द भरे स्वर में गाया: "हाय रे! हाय-हाय-हाय!" – और चुप हो गया।

ओलेनिन भी उसके पीछे-पीछे ओसारे पर निकल आया था और अब तारों भरे आकाश को देख रहा था, उस दिशा में जिधर मामा ने गोलियां दाग़ी थीं। कार्नेट के घर में बत्तियां जल रही थीं, वहां से आवाज़ें आ रही थीं। अहाते में लड़कियां ओसारे और खिड़कियों के पास जमा थीं, ड्योढ़ी और कोठरी के बीच भाग-दौड़ रही थीं। कुछ कज़्ज़ाक बाहर निकल आये, येरोश्का मामा के गीत के टेक दोहराने और हल्ला मचाने लगे।

"तुम मंगनी की दावत से क्यों चले आये?" ओलेनिन ने पूछा।

"छोड़ो, जाने दो उन्हें! भूल जाओ," बूढ़ा बोला। लगता था वहां उसका मन दुखाया गया था। "नहीं अच्छे लगते मुझे! नहीं अच्छे लगते। क्या लोग हैं! चलो, अंदर चलें! वे अपनी जगह ख़ुश, हम अपनी जगह।"

ओलेनिन अंदर चला गया।

"लुकाश्का ख़ुश है? मुझसे मिलने नहीं ग्रायेगा?" उसने पूछा।

"क्या लुकाश्का! उसके कान भर दिये हैं कि मैं तुम्हारे लिए लड़की को फुसला रहा हूं," बूढ़े ने बुदबुदाते हुए कहा। "लड़की का क्या है? हमारे चाहने की बात है, हमारी हो जायेगी: पैसे लाग्रो – लड़की हमारी! मैं सब कर दूंगा, सच।"

"नहीं, मामा, प्यार नहीं तो पैसों से कुछ नहीं होता।"

"कोई हमें प्यार नहीं करता, ग्रनाथ हैं हम!" सहसा येरोश्का मामा ने कहा ग्रौर फिर से रो पड़ा।

बूढ़े की बातें सुनते हुए ग्रोलेनिन ने सदा से ग्रधिक पी ली। "हां, ग्रब मेरा लुकाश्का सुखी है," वह सोच रहा था, लेकिन उसका मन उदास था। बूढ़े ने इस शाम इतनी पी ली कि फ़र्श पर ही पसर गया। वन्यूशा सिपाहियों की मदद से थू-थू करता उसे बाहर घसीट ले गया। वह बूढ़े के बुरे बर्ताव पर इतना नाराज़ था कि उसने कोई फ़्रांसीसी फ़िकरा नहीं बोला।

२६

ग्रगस्त का महीना था। कई दिनों से ग्रासमान पर बादल का एक टुकड़ा तक नहीं ग्राया था; चिलचिलाती धूप निकलती थी, सुबह से ही तपती हवा चलने लगती थी, टीलों पर ग्रौर रास्ते पर गरम रेत के बादल उठाती थी, सरकंडों, पेड़ों ग्रौर गांवों पर उन्हें उड़ाती ले जाती थी। घास ग्रौर पत्तियों पर धूल जमी हुई थी; रास्ते ग्रौर सूखे कच्छ नग्न हो गये थे ग्रौर उन पर क़दम गूंजते थे। तेरेक में पानी काफ़ी पहले ही उतर चुका था ग्रौर नालियों में भी जल्दी-जल्दी सूख रहा था। गांव के पास के पोखर में ढोरों के खुरों से रौंदे गये कीचड़ भरे किनारे उभर ग्राये थे ग्रौर सारा दिन पानी में छपाके लगते रहते थे, पोखर में नहाते लड़के-लड़कियां शोर मचाते रहते थे। स्तेपी में झाड़-झंखाड़ ग्रौर सरकंडों के झुरमुट सूख रहे थे ग्रौर दिन में मवेशी रंभाते हुए चरागाह से भाग जाते थे। जंगली जानवर दूर के सरकंडों में ग्रौर तेरेक के पार पहाड़ों में चले गये थे। निचानों पर ग्रौर गांवों पर झुंड के झुंड मच्छर ग्रौर भुनगे उड़ते रहते थे। हिमाच्छादित चोटियों पर धुंध-सी छायी रहती थी। हवा ऐसी थी कि खुलकर सांस नहीं ली जाती थी। कहा जाता था कि ग्रबरेकों ने उथली नदी पार कर ली है ग्रौर ग्रब इस ग्रोर बटमारी कर रहे हैं।

हर शाम को सूरज तपते लाल अस्ताचल में समाता था। काम के दिन थे। गांवों के सभी निवासी तरबूज़ के खेतों और अंगूर के बगीचों में काम में जुटे हुए थे। बगीचों में बेलों की घनी हरियाली थी, उसकी शीतल छाया में चौड़ी पत्तियों के पीछे काले अंगूर के भारी-भारी गुच्छे नज़र आते थे। बागों को जाती सड़क पर अंगूर से लदी बैलगाड़ियां चरचराती चली आती थीं। धूल भरी सड़क पर पहियों तले कुचले गये गुच्छे बिखरे हुए थे। अंगूर के रस से सनी कमीज़ें पहने, हाथों में अंगूर के गुच्छे पकड़े और मुंह में अंगूर के दाने ठूंसे लड़के-लड़कियां अपनी मांओं के पीछे भागे फिरते थे। फटेहाल कमेरे अपने मज़बूत कंधों पर अंगूर की टोकरियां उठाये सड़क पर चलते आते थे। मुंह पर आंखों तक रूमाल बांधे कज़्ज़ाक लड़कियां अंगूर से ऊपर तक लदी बैलगाड़ियों में जुते बैलों को हांकती थीं। सिपाहियों को रास्ते में कोई बैलगाड़ी मिलती तो वे लड़कियों से अंगूर मांगते और वे बैलों को रोके बिना ही बैलगाड़ी में चढ़ जातीं और दोनों हाथों में जितने अंगूर आते उठाकर सिपाही की झोली में डाल देती। कुछ अहातों में अंगूर पेरने का काम शुरू हो गया था। ताज़े रस की ख़ुशबू हवा में फैल रही थी। छप्परों तले रक्ताभ रस से भरी नांदें दिखायी देती थीं और अहातों में नोगाई कमेरे, जो पतलूनें घुटनों से ऊपर चढ़ाये होते और जिनकी पिंडलियां रंगी होतीं। घुरघुर करते सूअर फोक खाते और उसमें लोटते रहते थे। कोठरियों की सपाट छतें धूप में सुखाये जा रहे अंगूर के काले और सुनहले गुच्छों से अटी हुई थीं। कौए और मैगपाई छतों के पास मंडराते रहते थे, दाने चुगते हुए एक जगह से दूसरी जगह को उड़ते रहते थे।

साल भर के परिश्रम के फल सहर्ष बटोरे जा रहे थे। इस साल तो वे असाधारणतः अच्छे और प्रचुर थे।

छायादार हरे बगीचों में अंगूर के समुद्र के बीच चारों ओर से हंसने-गाने की आवाज़ें आती थीं, हर्षमय नारी कंठ सुनायी देते थे और रंग-बिरंगे वस्त्रों की झलक दिखायी देती थी।

ठीक दोपहर के समय मर्यान्का अपने बाग में आड़ू के पेड़ की छाया में बैठी थी और अनजुती बैलगाड़ी के नीचे से अपने परिवार के लिए खाना निकाल रही थी, उसके सामने ज़मीन पर बिछी झूल पर कार्नेट बैठा छोटी-सी सुराही से पानी लेकर हाथ धो रहा था, वह स्कूल से छुट्टियों में आया हुआ था। मर्यान्का का भाई अभी-अभी पोखर से लौटा था और आस्तीन से हाथ पोंछते हुए खाने के इंतज़ार में बहन और मां पर बेचैनी

भरी नज़रें डाल रहा था और हांफ रहा था। मां अपनी संवलायी, सशक्त बांहों पर आस्तीनें ऊपर चढ़ाये अंगूर, सूखी मछली, दही और रोटी चौकी पर रख रही थी। कार्नेट ने हाथ पोंछकर टोपी उतारी, सलीब का निशान बनाया और मेज़ के पास सरक आया। लड़का सुराही उठाकर डकाडक पानी पीने लगा। मां-बेटी पालथी मारकर चौकी के पास बैठ गयीं। छाया में भी असह्य तपिश थी। बाग के ऊपर धुंध-सी छायी हुई थी। टहनियों से होकर आती तेज़ हवा भी ठंडक नहीं ला रही थी, बस बागों में फैले नाशपाती, आड़ू और शहतूत के पेड़ों की फुनगियों को एक समान झुका रही थी। कार्नेट ने एक बार फिर प्रार्थना पढ़ी, पीठ पीछे से अंगूर के पत्तों से ढकी चिख़ीर की सुराही उठायी और कुछ घूंट भरकर बीवी को दे दी। कार्नेट सिर्फ़ एक कमीज़ पहने था, जिसके बटन खुले हुए थे। उसकी बालों से भरी मांसल छाती उघड़ी हुई थी। उसका चालाकी भरा पतला चेहरा प्रमुदित था। उसकी मुद्रा में और बोलने के ढंग में सदा जैसी धूर्तता नहीं थी; वह प्रसन्न था और अपने स्वाभाविक रूप में था।

"मचान के पीछे का कोना शाम तक ख़त्म कर लेंगे?" अपनी गीली दाढ़ी पोंछते हुए उसने कहा।

"कर लेंगे," बीवी ने जवाब दिया, "बस मौसम न बिगड़े। द्योम्किन के यहां तो अभी आधी फ़सल भी नहीं बटोरी गयी है," उसने आगे कहा। "उस्तेन्का बेचारी अकेली ही लगी हुई है।"

"उनके बस का है ही क्या!" कार्नेट ने घमंड भरे स्वर में कहा।

"ले, मर्यान्का, पी ले, बेटी!" बेटी को सुराही थमाते हुए मां ने कहा। "भगवान ने चाहा तो ब्याह का अच्छा इंतज़ाम हो जायेगा।"

"आगे की बात है," कार्नेट ने भौंहें ज़रा सिकोड़ते हुए कहा।

लड़की ने सिर झुका लिया।

"लो, बात क्यों न करें?" उलीत्का बीबी बोली। "काम पूरा हो गया है, अब दिन भी दूर नहीं।"

"आने तो दो दिन," कार्नेट ने फिर से कहा। "अभी तो फ़सल बटोरनी है।"

"लुकाश्का का नया घोड़ा देखा?" बीवी ने पूछा। "द्मीत्री अन्द्रेइच ने जो दिया था वह अब नहीं है—उसे बदला लाया है।"

"नहीं, मैंने नहीं देखा। किरायेदार के नौकर से बात हुई थी मेरी," कार्नेट ने कहा। "कहता था, फिर से एक हज़ार रूबल आये हैं।"

"हां, अमीर आदमी है," उसकी बीवी ने हामी भरी।

सारा परिवार ख़ुश और संतुष्ट था।

काम अच्छी तरह चल रहा था। अंगूर उनकी उम्मीद से ज़्यादा हुआ था और अधिक अच्छा भी था।

मर्यान्का ने खाना खाकर बैलों को घास डाली, अपना बेशमेत लपेटकर तकिया बना लिया और बैलगाड़ी तले दबी हुई, हरी-भरी घास पर लेट गयी। वह सिर पर लाल रेशमी रूमाल बांधे थी और छींट की रंग उड़ी नीली कमीज़ पहने थी; लेकिन उसे असह्य गर्मी लग रही थी। उसकी समझ में नहीं आता था टांगें कहां रखे। चेहरा तमतमा रहा था, आंखों में नींद और थकावट छायी हुई थी, होंठ बरबस खुल जाते थे, उरोज हर सांस के साथ उठ जाते थे।

फ़सल बटोरने का काम दो हफ़्ते पहले शुरू हो गया था और अब युवती के जीवन में बस निरंतर भारी काम ही था। सुबह तड़के पौ फटने के साथ ही वह उठती, ठंडे पानी से मुंह धोती, सिर पर रूमाल बांधती और नंगे पांव ही डंगरों के पास दौड़ी जाती। फिर जल्दी-जल्दी जूते और बेशमेत पहनती, रोटी की पोटली लेती, बैल जोतती और दिन भर के लिए बागों में चली जाती। वहां वह बस घड़ी-दो घड़ी आराम करती, सारा दिन अंगूर के गुच्छे काटती और टोकरियां उठाकर ले जाती रहती और शाम को, ज़रा भी थकावट महसूस न करते हुए प्रसन्नचित्त वह रस्सी से बैलों को खींचती, छड़ी से उनको हांकती गांव लौटती। सांझ के झुटपुटे में गायों-भैंसों को दोहकर, चारा डालकर वह मुट्ठी भर सूरजमुखी के बीज लेती और लड़कियों के साथ हंसने-बतियाने गली के नुक्कड़ पर चली जाती। लेकिन जैसे ही दीयाबाती जलती वह घर लौट आती, और रसोईवाली अंधेरी कोठरी में पिता, मां और छोटे भाई के साथ ब्यालू करती और चिंतामुक्त, स्वस्थ घर में जाती, अलावघर पर चढ़ जाती और ऊंघती हुई किरायेदार की बातें सुनती रहती। जैसे ही वह जाता वह अपने बिस्तर पर गिर पड़ती और सुबह तक गाढ़ी नींद सोती रहती। अगले दिन फिर वही क्रम चलता। लुकाश्का को उसने मंगनी के दिन से नहीं देखा था और इतमीनान से ब्याह के दिन का इंतज़ार कर रही थी। किरायेदार की वह आदी हो गयी थी और उसकी टकटकी अनुभव करके उसे प्रसन्नता होती थी।

गर्मी से कोई राहत नहीं थी, बैलगाड़ी की शीतल छाया में मच्छरों के झुंड उड़ रहे थे और लड़का करवटें बदलते हुए उसे पैर मार रहा था, तो भी मर्यान्का ने रूमाल से मुंह ढक लिया और सो ही चली थी कि तभी पड़ोसिन उस्तेन्का उसके पास भाग आयी और बैलगाड़ी तले घुसकर उसके बगल में लेट गयी।

"चलो, सोओ, लड़कियो! सोओ!" बैलगाड़ी तले आराम से लेटते हुए उस्तेन्का ने कहा। "ठहरो!" फिर वह उछलकर बोली: "ऐसे नहीं चलेगा।"

उसने जाकर कुछ हरी-हरी टहनियां तोड़ीं और उन्हें दोनों ओर बैलगाड़ी के पहियों पर टांग दिया और ऊपर से बेशमेत डाल दिया।"

"अरे, आने दे न," फिर से बैलगाड़ी तले घुसते हुए उसने लड़के से कहा, "कज़्ज़ाक का यहां लड़कियों के बीच क्या काम? जा यहां से!"

जब बैलगाड़ी तले सहेली के साथ अकेली रह गयी तो अचानक उसने मर्यान्का को बांहों में भर लिया और उससे चिपटते हुए उसके गालों और गर्दन पर चुंबनों की झड़ी लगा दी।

"मेरी प्यारी! मेरी रानी," अपनी पतली, खनकती हंसी हंसते हुए वह कहती जा रही थी।

"देख तो, बाबा से सीख आयी," मर्यान्का ने अपने को छुड़ाते हुए कहा। "बस कर!"

और वे दोनों इतने ज़ोरों से हंसने लगीं कि मां ने उन्हें डांट दिया।

"जलन होती है क्या?" उस्तेन्का बुदबुदायी।

"चल हट! सोने दे। क्या करने आयी है?"

लेकिन उस्तेन्का नहीं मान रही थी:

"क्या बात बताऊंगी! तू सुन तो!"

मर्यान्का ने कोहनी के बल उठकर सिर पर खिसक गया रूमाल ठीक किया।

"हां, बोल, क्या बतायेगी?"

"तेरे किरायेदार की बात जानती हूं।"

"जानने को है ही कुछ नहीं," मर्यान्का ने जवाब दिया।

"हाय री, शैतान कहीं की!" उस्तेन्का ने उसे टहोका मारते और

हंसते हुए कहा। "कुछ बताती ही नहीं। आता है तुम्हारे यहां?"

"आता है। तो क्या हुआ?" मर्यान्का ने कहा और सहसा उसके गालों पर लाली छा गयी।

"मैं तो सीधी-सादी लड़की हूं, मैं सबको बता दूं। छिपाऊं क्यों?" उस्तेन्का ने कहा और उसके खिले हुए लाल मुखड़े पर विचारमग्नता का भाव छा गया। "मैं क्या किसी का बुरा कर रही हूं? मैं तो उससे प्यार करती हूं, बस!"

"बाबा से?"

"हां।"

"और पाप?" मर्यान्का बोली।

"हाय, मर्यान्का! अरी कुंवारे होते न मौज की तो कब करेंगे? कज़्ज़ाक से ब्याही जाऊंगी, तो बच्चे जनने लगूंगी, घर-गिरस्ती की चिंताओं में पड़ जाऊंगी। तू लुकाश्का से ब्याही जायेगी तब तो ख़ुशी की बात तक नहीं सोच पायेगी—बस बच्चे और काम।"

"क्यों, कई लोग ब्याहकर भी ख़ुश रहते हैं। इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता!" मर्यान्का ने बिल्कुल शांत स्वर में उत्तर दिया।

"अरी, कुछ तो बता दे, क्या-क्या हुआ लुकाश्का के साथ?"

"हुआ क्या? रिश्ता मांगा था। बापू ने साल भर को टाल दिया। अब मंगनी हो गई है, पतझड़ में ब्याह होगा।"

"पर उसने तुझे क्या कहा?"

मर्यान्का मुस्करा दी।

"वही जो कहते हैं। कहता था, प्यार करता हूं। पीछे पड़ा हुआ था, बागों में चलने को कहता था।"

"देख तो, चिमटू कहीं का! पर तू तो गयी नहीं न। हाय री, कैसा निडर बांका बन गया है वह तो। सबसे बढ़कर है। वहां टुकड़ी में भी मौज मस्ती करता है। उस रोज़ हमारा कीरका आया था, कहता था, ऐसा घोड़ा बदलाया है उसने, इतना अच्छा घोड़ा लाया है! पर याद तो तुझे ही करता है, री। और क्या कहता था?" उस्तेन्का ने मर्यान्का से पूछा।

"सभी कुछ जानके रहेगी," मर्यान्का हंसी। "एक बार रात को घोड़े पर आया था, नशे में था। कहता था अंदर आने दे।"

"तूने नहीं आने दिया?"

"और नहीं तो, आने देती? मैंने एक बार कह दिया, सो कह

दिया। पत्थर की लकीर है मेरी बात," मर्यान्का ने गंभीरतापूर्वक उत्तर दिया।

"बांका कैसा है! उसके तो चाहने की देर है कोई लड़की इंकार न करे।"

"तो जाये औरों के पास," मर्यान्का ने सगर्व उत्तर दिया।

"तुझे उस पर तरस नहीं आता?"

"आता है, पर बेवकूफ़ियां मैं नहीं करती। बुरी बात है यह।"

सहसा उस्तेन्का ने सहेली की छाती पर सिर गिराया और उसे बांहों में भर लिया, बड़ी मुश्किल से वह अपनी हंसी दबा रही थी। हंसी दबाते-दबाते उसकी सांस फूल गयी और तब वह बोली: "पगली है तू तो, पगली! अपना सुख नहीं चाहती।" और फिर से वह मर्यान्का को गुद-गुदाने लगी।

"अरी छोड़!" मर्यान्का हंसी से लोट-पोट होती उससे कह रही थी।

"देखो तो, इन छोकरियों को, मस्ती आ रही है इन्हें, थकी नहीं न," बैलगाड़ी के बाहर से मर्यान्का की मां की उनींदी आवाज़ आयी।

"सुख नहीं चाहती," उस्तेन्का ने सिर ऊपर उठाते हुए फिर से कहा। "पर है तू सुखी। भगवान कसम! कितना प्यार करते हैं तुझे! ऐसी बेढब है तू पर तुझे प्यार करते हैं। हाय, तेरी जगह मैं होती न, ऐसा फंसाती तुम्हारे किरायेदार को। देखा था मैंने उसे जब तुम हमारे यहां आये थे, ऐसे घूर रहा था तुझे कि बस खा ही जायेगा। मेरे 'बाबा' ने ही मुझे क्या कुछ नहीं दिया है! और तुम्हारा तो, सुना है, रूसियों में सबसे अमीर है। उसका अर्दली कह रहा था कि उनके अपने किसान हैं।"

मर्यान्का कोहनी के बल उठी और कुछ सोचकर मुस्करायी।

"एक बार हमारे किरायेदार ने पता है क्या कहा था," घास का तिनका कुतरते हुए वह बोली। "कहता था: मेरा दिल करता है, मैं लुका-श्का कज़्ज़ाक होता, या तुम्हारा भाई लज़ूत्का। क्यों उसने ऐसा कहा?"

"हुं, ऐसे ही, बस जो मुंह में आया कह दिया," उस्तेन्का ने जवाब दिया। "मेरा क्या कुछ नहीं कहता। जैसे बावला हो।"

मर्यान्का ने सिर बेशमेत पर गिराया और उस्तेन्का के कंधे पर हाथ रखकर आंखें मींच लीं।

"आज बाग में काम करने आना चाहता था; बापू ने उसे बुलाया था," थोड़ी देर चुप रहकर वह बोली और सो गयी।

३१

सूरज नाशपाती के पेड़ के पीछे से निकल आया था, जिसकी छाया में बैलगाड़ी खड़ी थी। अब पहियों पर उस्तेन्का की लगायी टहनियों के पीछे से भी तिरछी किरणें बैलगाड़ी तले सो रही लड़कियों के चेहरे झुलसा रही थीं। मर्यान्का की नींद खुल गयी, वह सिर पर रूमाल ठीक करने लगी। इधर-उधर नज़र डालने पर उसने नाशपाती के पेड़ के पीछे किरायेदार को देखा, जो कंधे पर बंदूक लटकाये खड़ा था और उसके पिता से बातें कर रहा था। मर्यान्का ने उस्तेन्का को टहोका दिया और मुस्कराते हुए चुपचाप किरायेदार की ओर इशारा किया।

"कल मैं गया था, एक भी नहीं मिला," ओलेनिन कह रहा था और बेचैनी से इधर-उधर देख रहा था, टहनियों के पीछे मर्यान्का उसे दिखाई नहीं दे रही थी।

"यों है कि आप एक अदद चाप बनाते हुए उस दिशा में जाइये, वहां उजड़े बाग में, जिसे वीराना कहा जाता है, हमेशा ख़रगोश पाये जाते हैं," कार्नेट ने तुरंत अपना बोलने का ढंग बदलकर कहा।

"काम के दिनों में क्या ख़रगोश ढूंढते फिरते हो! इससे अच्छा यहां मदद करने ही चले आते! लड़कियों के साथ मिलकर काम करते," उलीत्का बीबी ने अपने प्रफुल्ल स्वर में कहा। "उठो, री, लड़कियो!" वह चिल्लायी।

मर्यान्का और उस्तेन्का बैलगाड़ी तले फुसफुसा रही थीं और मुश्किल से अपनी हंसी रोके हुए थीं।

जब से यह पता चला था कि ओलेनिन ने लुकाश्का को पचास कलदार का घोड़ा दिया है, उसके मकान मालिक उससे स्नेह दिखाने लगे थे; ख़ास तौर पर कार्नेट, लगता था, बेटी के साथ उसकी बढ़ती घनिष्ठता पर प्रसन्न है।

"मुझे कुछ काम करना ही नहीं आता," ओलेनिन ने कहा। वह हरी टहनियों के पार बैलगाड़ी तले नज़रें न घुमाने की कोशिश कर रहा था – मर्यान्का की नीली कमीज़ और लाल रूमाल उसने देख लिया था।

"अच्छा आना, मैं तुम्हें सूखी खूबानियां दूंगी," उलीत्का बीबी ने कहा।

"पुरानी कज़्ज़ाक मेहमाननवाज़ी की बातें हैं, बूढ़ी ग्रौरत का ग्रहमक़-पना," कार्नेट ने मानो ग्रपनी बीवी की बात समझाने ग्रौर उसकी ग़लती सुधारने की ख़ातिर कहा। "मैं सोचता हूं, रूस में तो जनाब न सिर्फ़ सूखी खूबानियां, बल्कि जितना कि ग्रनन्नास के मुरब्बे जी भरकर खाते रहे होंगे।"

"तो पुराने बाग में हैं?" ग्रोलेनिन ने पूछा। "मैं जाकर देखता हूं," ग्रौर हरी टहनियों के पार तेज़ी से एक नज़र डालकर उसने सिर से टोपी ज़रा उठायी ग्रौर ग्रंगूर की बेलों की हरी कतारों के बीच ग्रोझल हो गया।

सूरज बागों के जंगले के पीछे छिप गया था ग्रौर उसकी विखंडित किरणें पत्तियों के बीच चमक रही थीं, जब ग्रोलेनिन ग्रपने मकान मालिक के बाग में लौटा। हवा धीमी पड़ रही थी ग्रौर ग्रंगूर के बगीचों में ताज़गी फैलने लगी थी। दूर से ही किसी ग्रंत:प्रज्ञा से ग्रोलेनिन ने बेलों की कतारों के पीछे मर्यान्का की नीली कमीज़ पहचान ली ग्रौर जहां-तहां दाने तोड़ता हुग्रा उसके पास पहुंच गया। हांफता कुत्ता भी कभी-कभार कोई नीचा लटकता गुच्छा ग्रपने राल भरे मुंह में ले लेता। मर्यान्का का चेहरा तम-तमा रहा था, ग्रास्तीनें ऊपर चढ़ाये ग्रौर रूमाल ठोड़ी से नीचे उतारकर वह फुर्ती से भारी गुच्छे काट-काटकर टोकरी में रख रही थी। जो बेल उसने पकड़ रखी थी, उसे छोड़े बिना ही वह थमी, प्यार से मुस्करायी ग्रौर फिर से ग्रपने काम में लग लगी। ग्रोलेनिन पास ग्रा गया, उसने बंदूक कंधे पर लटका ली, ताकि हाथ खाली हो जायें। "तुम्हारे घरवाले कहां हैं? भगवान तुम्हारी मदद करे! तुम ग्रकेली हो?" वह कहना चाहता था, लेकिन उसने कुछ नहीं कहा, बस टोपी ही सिर से ज़रा ऊपर उठायी। वह मर्यान्का के साथ ग्रकेले में बड़ा ग्रटपटा महसूस कर रहा था, लेकिन मानो जान-बूझकर ग्रपनी यातना बढ़ाते हुए वह उसके पास चला गया।

"ऐसे तो तुम ग्रौरतों को गोली से उड़ा दोगे," मर्यान्का ने कहा।

"नहीं, मैं गोली नहीं चलाता।"

दोनों थोड़ी देर चुप रहे।

"कुछ हाथ ही बंटा दो।"

उसने चाकू निकाला ग्रौर चुपचाप गुच्छे काटने लगा। नीचे, पत्तियों तले उसे कोई तीन पौंड का गुच्छा मिला, जिसमें सभी दाने एक दूसरे

से सटकर चपटे हो गये थे। ग्रोलेनिन ग्रपनी उत्तेजना को वश में नहीं कर पा रहा था। उसने यह गुच्छा मर्यान्का को दिखाया।

"सारे काटूं? यह हरा तो नहीं?"

"इधर लाग्रो।"

उनके हाथ टकराये। ग्रोलेनिन ने उसका हाथ पकड़ा, वह मुस्कराते हुए उसकी ग्रोर देख रही थी।

"तुम्हारा ब्याह होनेवाला है?" ग्रोलेनिन ने पूछा।

उसने जवाब दिये बिना, मुंह फेर लिया ग्रौर फिर सख़्ती भरी तिरछी नज़रों से उसे देखा।

"तुम क्या लुकाश्का को प्यार करती हो?"

"तुम्हें इससे क्या?"

"मुझे जलन होती है।"

"ग्रच्छा जी!"

"सच, तुम इतनी सुंदर हो!"

ग्रौर सहसा वह ग्रपने कहे शब्दों पर पानी-पानी हो गया। उसे लगा कि उसके ये शब्द इतने घिसे-पिटे, इतने थोथे हैं। उसका चेहरा लाल सुर्ख़ हो गया, सकपकाकर उसने मर्यान्का के दोनों हाथ पकड़ लिये।

"जैसी भी हूं, तुम्हारी नहीं हूं! क्यों मखौल उड़ाते हो!" मर्यान्का ने जवाब दिया, लेकिन उसकी नज़र कह रही थी—वह भली-भांति जानती है कि वह मखौल नहीं उड़ा रहा।

"मखौल कहां? तुम नहीं जानतीं, मैं कितना..."

उसके शब्द पहले से भी ग्रधिक थोथे थे, वह जो ग्रनुभव कर रहा था, उससे पहले से भी कम मेल खाते थे; लेकिन वह कहता जा रहा था:

"मैं तुम्हारे लिए सब कुछ करने..."

"छोड़ो, चिमटू!"

लेकिन उसका चेहरा, उसकी चमकती ग्रांखें, उसका ऊंचा वक्ष, उसकी सुघड़ टांगें बिल्कुल दूसरी ही बात कह रहे थे। ग्रोलेनिन को लग रहा था कि वह जो कुछ कहता रहा है वह सब कितना थोथा है, कितना ग्रोछा है—यह वह समझती है, लेकिन वह इन सब बातों से ऊपर है; उसे लग रहा था कि वह उससे जो कुछ कहना चाहता था ग्रौर जो उसे कहना नहीं ग्राता था—वह सब वह बहुत पहले से जानती है, लेकिन सुनना चाहती थी कि वह उससे कैसे यह कहेगा। "उसे पता भी कैसे न

हो," वह सोच रहा था," जबकि मैं उसे वही सब बताना चाहता था, जो कि वह स्वयं है? लेकिन वह नहीं समझना चाहती, जवाब नहीं देना चाहती," वह सोच रहा था।

"ऐ!" अचानक बैल के पीछे से उस्तेन्का की आवाज़ और उसकी खनकती हंसी सुनायी दी। "द्मीत्री अन्द्रेइच, आ जाओ, मेरी मदद करा दो। मैं यहां बिल्कुल अकेली हूं!" पत्तियों के पीछे से अपना गोल मासूम चेहरा निकालकर उसने कहा।

ओलेनिन ने न कुछ जवाब दिया, न अपनी जगह से हिला-डुला।

मर्यान्का गुच्छे काटती जा रही थी, लेकिन बार-बार नज़रें उठाकर किरायेदार की ओर भी देखती जा रही थी। उसने फिर से कुछ कहना चाहा, लेकिन रुक गया, कंधे बिचकाकर उसने बंदूक का पट्टा ऊपर किया और तेज़-तेज़ क़दम भरता बाग से दूर चल दिया।

३२

दो-एक बार रुककर वह मर्यान्का और उस्तेन्का की खिलखिलाती हंसी सुनता रहा। वे इकट्ठी हो गयी थीं और कुछ चिल्ला रही थीं। सारी शाम ओलेनिन ने जंगल में शिकार करते बितायी। अंधेरा घिर रहा था जब वह खाली हाथ घर लौटा। अहाते से गुज़रते हुए उसने कोठरी का खुला दरवाज़ा देखा और कोठरी के अंदर नीली कमीज़। उसने वन्यूशा को ख़ास तौर पर ज़ोर से पुकारा ताकि मकान मालिकों को उसके लौट आने का पता चल जाये। वे बाग से लौट चुके थे, अपनी रसोईवाली कोठरी से निकलकर वे घर के अंदर चले गये – ओलेनिन को उन्होंने नहीं बुलाया। मर्यान्का दो-एक बार अहाते से बाहर गयी थी। एक बार अंधेरे में ओलेनिन को लगा कि मर्यान्का ने मुड़कर उसकी ओर देखा। वह उसकी हर गति पर नज़र लगाये हुए था, लेकिन उसके पास जाने की हिम्मत नहीं कर पा रहा था। जब वह घर के अंदर चली गयी तो ओलेनिन ओसारे से उतर आया और अहाते के चक्कर काटने लगा। लेकिन मर्यान्का इसके बाद बाहर नहीं निकली। ओलेनिन ने सारी रात अहाते में ही काटी, सारी रात वह मकान मालिक के घर में से आती हर ध्वनि पर कान लगाये रहा। शाम को उसने उन्हें बातें करते सुना, उसके ब्यालू करने की, फिर बिस्तर निकालने और सोने के लिए लेटने की आहटें सुनीं, उसने मर्यान्का

को किसी बात पर हंसते सुना; फिर यह सुना कि कैसे सब कुछ शांत हो गया। कार्नेट अपनी पत्नी के साथ दबी आवाज़ में कुछ बातें कर रहा था और कोई सांस ले रहा था। वह अपने कमरे में गया। वन्यूशा कपड़े उतारे बिना ही सो रहा था। ओलेनिन को उससे ईर्ष्या हुई और वह फिर से अहाते के चक्कर काटने लगा; लेकिन कोई बाहर नहीं निकल रहा था। कोई हिल-डुल नहीं रहा था; बस तीन व्यक्तियों की एकसार चलती सांसें सुनायी दे रही थीं। वह मर्यान्का की सांस पहचानता था और अपने हृदय की धड़कन सुनता जा रहा था। गांव में सब कुछ शांत हो गया, कृष्ण पक्ष का चांद देर से निकला और अहातों में कभी लेटते तो कभी धीरे-धीरे उठते, गहरी सांस लेते ढोर-डंगर नज़र आने लगे। ओलेनिन ग़ुस्से से अपने आप से पूछ रहा था: "मुझे चाहिए क्या?" लेकिन अपनी रात के मोहपाश से छूट नहीं पा रहा था। सहसा उसे मकान मालिक के घर में क़दमों की आहट और फ़र्श के पटरे की चरचराहट साफ़ सुनायी दी। वह लपककर घर के दरवाज़े के पास गया, लेकिन फिर से एकसार चलती सांसों के अलावा कुछ भी सुनायी नहीं दे रहा था। अहाते में भैंस ने भारी सांस छोड़कर करवट बदली, अगले घुटनों पर और फिर चारों टांगों पर खड़ी हुई, पूंछ हिलायी, अहाते की सूखी मिट्टी पर एकसार थपथप हुई और फिर से वह धूमिल चांदनी में लेट गयी।... वह अपने आप से पूछता: "मैं क्या करूं?"—और जाकर सोने का दृढ़ निश्चय करता; लेकिन फिर से आहट होती और उसकी कल्पना में इस कुहकाच्छन्न चांदनी रात में बाहर निकलती मर्यान्का का बिंब बनता और वह लपककर खिड़की के पास जाता, और फिर से क़दमों की आहट आती। उजाला होने से पहले वह एक बार फिर खिड़की के पास गया और झिलमिली खड़काकर दरवाज़े की ओर लपक गया। इस बार सचमुच ही उसने मर्यान्का की गहरी सांस और उसके क़दमों की आहट सुनी। उसने दरवाज़े का कुंडा हौले-से खड़काया। संभलकर रखे जाते पांवों तले फ़र्श की हल्की-सी चरचराहट हुई और क़दम दरवाज़े के पास आये। कुंडा हिला, दरवाज़ा चरमराया, जड़ी-बूटियों की और कद्दू की गंध आयी और दहलीज़ पर मर्यान्का की सारी आकृति प्रकट हुई। ओलेनिन ने पल भर को ही उसे चांदनी में देखा। मर्यान्का ने झट से दरवाज़ा बंद कर दिया और कुछ बुदबुदाकर हल्के क़दमों से वापस लौट गयी। ओलेनिन हल्की-हल्की दस्तक देने लगा, लेकिन कुछ जवाब नहीं आ रहा था। वह दौड़कर खिड़की के पास गया और कान लगाकर सुनने लगा।

अचानक चिचियाती हुई तीखी मर्दानी आवाज़ सुनकर वह चौंका।

"भई वाह!" सफ़ेद टोपी पहने कज़्ज़ाक ने अहाते से ओलेनिन के पास आते हुए कहा। "मैंने देखा है, बहुत अच्छे!"

ओलेनिन नज़ारका को पहचान गया और चुप खड़ा रहा – उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे।

"क्या कहने हैं! पंचायत में जाके बताऊंगा, उसके बाप को भी बताऊंगा। देखो तो कार्नेट की बेटी को! इसके लिए एक थोड़ा है!"

"क्या चाहते हो तुम मुझसे, क्या चाहिए तुम्हें?" ओलेनिन बोला।

"कुछ नहीं, मैं तो बस पंचायत में बता दूंगा।"

नज़ारका बहुत ज़ोर-ज़ोर से बोल रहा था, शायद जान-बूझकर।

"देखो तो, कैसा तेज़ है कैडेट!"

ओलेनिन थरथरा रहा था, उसका चेहरा फक पड़ गया था।

"इधर आओ, इधर!" उसने कसकर नज़ारका का हाथ पकड़ लिया और उसे अपने घर के पास ले गया। "कुछ भी तो नहीं हुआ, उसने मुझे अंदर नहीं जाने दिया, मैं कुछ नहीं... वह सुशील है..."

"कौन देखता है..." नज़ारका ने कहा।

"अरे, मैं तुम्हें फिर भी दिये देता हूं... ठहरो ज़रा! ..."

नज़ारका चुप हो गया। ओलेनिन दौड़कर अपने कमरे में गया और वहां से कज़्ज़ाक के लिए दस रूबल ले आया।

"देखो, कुछ भी तो नहीं हुआ, लेकिन फिर भी मैं दोषी हूं, इसीलिए तुम्हें दे रहा हूं! बस, भगवान के वास्ते, किसी को पता न चले। कुछ भी नहीं हुआ।..."

"मौज करो," नज़ारका ने हंसते हुए कहा और बाहर चला गया।

नज़ारका को इस रात लुकाश्का ने गांव भेजा था – चुराये घोड़े को छिपाने की जगह तैयार करने के लिए। गली से अपने घर जाते हुए उसे क़दमों की आहट सुनायी दे गयी थी। अगले दिन सुबह वह अपनी टुकड़ी में लौट गया और वहां डींग मारते हुए उसने अपने साथी को बताया कि कैसे उसने कैडेट से दस कलदार ऐंठ लिये।

अगली सुबह ओलेनिन का अपने मकान मालिकों से आमना-सामना हुआ, लेकिन वे कुछ नहीं जानते थे। मर्यान्का से उसने बात नहीं की, वह बस उसकी ओर देखकर हंस देती थी। अगली रात फिर उसने अहाते में भटकते हुए बितायी। अगला दिन उसने जान-बूझकर शिकार पर बिताया

ग्रौर शाम को ग्रपने ग्राप से बचने के लिए बेलेत्स्की के यहां चला गया। वह ग्रपने ग्राप से डर रहा था ग्रौर उसने प्रतिज्ञा कर ली थी कि मकान मालिकों के यहां नहीं जायेगा।

ग्रगली रात को सूबेदार ने उसे जगाया। कंपनी तुरंत ही धावे पर जा रही थी। ग्रोलेनिन इस मौके से ख़ुश था ग्रौर सोच रहा था कि ग्रब वह इस गांव में कभी नहीं लौटेगा।

धावा चार दिन चला। कमांडर ने, जो ग्रोलेनिन का रिश्तेदार था, उससे मिलना चाहा ग्रौर उसे हेडक्वार्टर में रहने का सुझाव दिया। ग्रोलेनिन ने इंकार कर दिया। वह ग्रपने गांव के बिना नहीं रह सकता था, उसने वहां लौटने की इजाज़त मांगी। धावे में भाग लेने के इनाम में उसे सैनिक क्रॉस दिया गया, जिसके लिए वह पहले लालायित था, लेकिन ग्रब इस ग्रोर से पूरी तरह उदासीन था। इससे भी ग्रधिक उदासीन वह इस बात से था कि उसे ग्रफ़सर का पद मिले, जिसका फ़ैसला ग्रभी तक नहीं हुग्रा था। वन्यूशा के साथ वह बिना किसी दुर्घटना के ही चौकी पर लौट ग्राया ग्रौर शेष कंपनी से कुछ घंटे पहले ही घर पहुंच गया। सारी शाम ग्रोलेनिन मर्यान्का को निहारता ग्रोसारे पर बैठा रहा। सारी रात वह फिर से बिना किसी उद्देश्य के ग्रौर बिना किसी विचार के ग्रहाते में भटकता रहा।

३३

ग्रगले दिन सुबह ग्रोलेनिन देर से उठा। मकान मालिक घर पर नहीं थे। वह शिकार करने नहीं गया, कभी वह कोई किताब उठा लेता, कभी ग्रोसारे पर निकलता ग्रौर फिर से ग्रंदर ग्राता, बिस्तर पर लेट जाता। वन्यूशा सोच रहा था कि वह बीमार है। शाम हो रही थी जब ग्रोलेनिन दृढ़तापूर्वक उठा ग्रौर लिखने बैठ गया। सांझ ढले तक वह लिखता रहा। उसने एक पत्र लिखा, लेकिन किसी को भेजा नहीं, क्योंकि कोई भी वे सब बातें न समझ पाता जो वह कहना चाहता था ग्रौर स्वयं ग्रोलेनिन को छोड़कर किसी को भी यह समझने की कोई ग्रावश्यकता भी नहीं थी।

ग्रोलेनिन ने यह लिखा:

"रूस से मुझे सहानुभूति के पत्र मिलते हैं। सब डरते हैं कि मैं इस बीहड़ जगह में दबा-फंसा तबाह हो जाऊंगा। मेरे बारे में कहते हैं: वह

उजड्ड हो जायेगा, हर बात में पिछड़ जायेगा, पीने लगेगा ग्रौर किसी कज्ज़ाक लड़की से ब्याह ही कर बैठेगा। कहते हैं, येर्मोलोव ने व्यर्थ ही नहीं कहा था: जो दस साल तक काकेशिया में फ़ौज में रह ले वह या तो पियक्कड़ हो जायेगा, या बदचलन ग्रौरत से ब्याह कर लेगा। हाय, कितना ख़ौफ़नाक है! सच, कहीं मैं ग्रपने को तबाह न कर बैठूं, जबकि मुझे काउंटेस ब० का पति होने, ज़ार के दरबार में ऊंचा ग्रोहदा पाने या 'मार्शल दे नोबलेस' – ग्रभिजातों का प्रधान – बनने का परम सौभाग्य प्राप्त हो सकता है! कितने घिनौने, कितने ग्रोछे हो तुम सब! तुम लोग नहीं जानते कि सुख क्या है ग्रौर जीवन क्या है! एक बार जीवन को उसके सारे ग्रकृत्रिम सौंदर्य में ग्रनुभव करना चाहिये। वह सब देखना ग्रौर समझना चाहिए, जो मैं प्रति दिन ग्रपने सामने देखता हूं: पर्वतों के वे ग्रनश्वर, ग्रगम्य हिमाच्छादित शिखर ग्रौर वैसा ग्रादिम सौंदर्य लिये भव्य नारी, जैसा ग्रपने सृजनहार के हाथों बनी पहली नारी का रहा होगा, ग्रौर तब यह स्पष्ट हो जायेगा कि कौन ग्रपने को तबाह कर रहा है, कौन सच्चा जीवन व्यतीत कर रहा है, कौन झूठा – तुम लोग या मैं। तुम्हें क्या मालूम कि ग्रपने मोह-भ्रम लिये तुम लोग मुझे कितने घिनौने ग्रौर दयनीय लगते हो! ग्रपने इस कच्चे मकान ग्रपने जंगल ग्रौर ग्रपने प्रेम के स्थान पर जैसे ही मैं कल्पना करता हूं तुम्हारी उन बैठकों की, नकली बालों के ऊपर पाउडर लगे बालों के लच्छोंवाली उन महिलाग्रों की, उन ग्रस्वाभाविक ढंग से हिलते होठों की, उन क्षीण-क्षत, छिपाये हुए ग्रंगों की ग्रौर उस फुसफुस की, जो ग्रर्थमय वार्तालाप होने का दावा करती है ग्रौर जिसे इसका कोई ग्रधिकार नहीं है – इस सबकी जैसे ही मैं कल्पना करता हूं मुझे मतली ग्राने लगती है। मैं उन भावशून्य चेहरों की कल्पना करता हूं, उन धनवान दुलहनों की, जिनके चेहरे पर लिखा होता है: 'कोई बात नहीं, मैं धनी दुलहन हूं, तो भी तुम मेरे पास ग्रा सकते हो'; मुझे याद ग्राता है वह किसी को कहीं, तो किसी को कहीं बिठाना, निर्लज्जता से वह जोड़े मिलाना ग्रौर ग्राये दिन वही गपशप, वही दिखावा; ग्रौर वे नियम – किससे हाथ मिलाना है, किसको बस ज़रा-सा सिर झुकाना है, किससे दो शब्द कहने हैं (ग्रौर यह सब सोच-समझकर, इसे नितांत ग्रावश्यक मानकर किया जाता है); ग्रौर रगों में भरी वह ऊब जो पीढ़ी दर पीढ़ी चली ग्राती है। बस एक बात समझ लो या एक बात पर विश्वास कर लो। यह देखना ग्रौर समझना चाहिए कि सत्य ग्रौर सौंदर्य

क्या है और तब वह सब जो तुम लोग कहते और सोचते हो, अपने लिए और मेरे लिए सुख की तुम्हारी वे सारी कामनाएं—सब कुछ धराशायी हो जायेगा। प्रकृति के साथ होना, उसे देखना, उससे बातें करना—यही सुख है। 'भगवान न करे, वह किसी कज़्ज़ाक औरत से शादी कर बैठा तब तो सभ्य समाज के लिए बिल्कुल गया,' मैं कल्पना करता हूं कैसे मेरे बारे में लोग सच्ची सहानुभूति के साथ ऐसी बातें करते होंगे। लेकिन मेरी बस एक ही इच्छा है: तुम लोगों के अर्थ में बिल्कुल तबाह हो जाऊं, मैं साधारण कज़्ज़ाक औरत से विवाह करना चाहता हूं लेकिन मैं इसकी जुर्रत नहीं करूंगा क्योंकि यह ऐसा सुख होगा, जिसके योग्य मैं नहीं हूं।

"तीन महीने बीत गये हैं उस दिन से जब मैंने पहली बार मर्यान्का नाम की कज़्ज़ाक लड़की को देखा। जिस संसार से निकलकर मैं आया था उसकी धारणाएं और कल्पनाएं अभी मुझमें ताज़ी थीं। मुझे तब यह विश्वास नहीं होता था कि मैं इस स्त्री से प्रेम कर सकता हूं। मैं उसे निहारता था, वैसे ही जैसे पर्वत और आकाश के सौंदर्य को, उसे निहारे बिना मैं रह भी कैसे सकता था—उनकी ही भांति वह भी अनुपम है। फिर मैंने अनुभव किया कि इस सौंदर्य का अवलोकन मेरे जीवन की आवश्यकता बन गया है, और मैं अपने आप से पूछने लगा: क्या मुझे उससे प्यार हो गया है? लेकिन इस भावना की कल्पना मैं जिस रूप में करता था, वैसा कुछ भी मैंने अपने में नहीं पाया। मेरी भावना एकाकीपन की उदासी और प्रणय की कामना नहीं थी, न ही यह निष्काम प्रेम था या विषयासक्ति थी, जो मैं अनुभव कर चुका हूं। मेरे लिए उसे देखना, उसे सुनना, यह जानना कि वह पास ही है, आवश्यक था और मैं तब सुखी नहीं तो निश्चिंत अवश्य होता था। उस दावत के बाद जिसमें मैं उससे मिला और पहली बार मैंने उसका स्पर्श किया, मैंने यह अनुभव किया कि मेरे और इस स्त्री के बीच एक संबंध है, जिसे हमने स्वीकार चाहे नहीं किया है, तो भी वह अटूट है, और उससे जूझना व्यर्थ है। लेकिन मैं अभी भी जूझ रहा था; मैं अपने आप से कहता: क्या ऐसी स्त्री से प्रेम किया जा सकता है जो मेरे जीवन की गहनतम रुचि को कभी नहीं समझ पायेगी? क्या स्त्री से केवल उसके सौंदर्य के लिए प्रेम किया जा सकता है, एक मूर्ति से प्रेम किया जा सकता है?—मैं अपने आप से पूछता था, जबकि मन ही मन प्रेम करने लगा था, हालांकि अभी भी अपनी भावना को स्वीकार नहीं कर रहा था।

"उस दावत के बाद जिसमें मैंने पहली बार उससे बात की, हमारे संबंध बदल गये। इससे पहले वह मेरे लिए बाह्य प्रकृति की एक बेगानी, किंतु भव्य वस्तु थी; उस शाम के बाद वह मेरे लिए इंसान बन गयी। मैं उससे मिलने लगा, उससे बातें करने लगा, कभी-कभार उसके पिता के पास बाग में काम पर जाने लगा और सारी-सारी शाम उनके यहां बैठा रहता। इन निकट संपर्कों में भी वह मेरी नज़रों में उतनी ही पवित्र, अगम्य और भव्य थी। वह सदा एक ही शांत, सगर्व और प्रसन्न-उदासीन स्वर में हर बात का उत्तर देती थी। कभी-कभी उसका व्यवहार स्नेहमय होता, लेकिन बहुधा उसकी हर दृष्टि, हर शब्द, हर गति से यह उदासीनता व्यक्त होती, हिकारत भरी नहीं, बल्कि अभिभूत करनेवाली, मोहनेवाली। हर दिन होंठों पर दिखावटी मुस्कान लिये मैं कुछ दिखने की कोशिश करता था और हृदय में भावावेग और कामनाओं की व्यथा छिपाये उससे चुहल करता था। वह देखती थी कि मैं दिखावा कर रहा हूं, लेकिन सहज भाव से, अपनी हर्षमय नज़रों से सीधे मेरी ओर देखती थी। यह स्थिति मेरे लिए असहनीय हो गयी। मैं चाहता था कि उससे कोई छल न करूं, मैं जो कुछ सोचता हूं, अनुभव करता हूं सब कुछ उसे बता दूं। मैं अत्यंत उत्तेजित था। बाग में यह हुआ – मैं ऐसे शब्दों में उससे अपने प्रेम की बातें करने लगा, जिन्हें याद करके मुझे अब शर्म आती है। मुझे शर्म आती है क्योंकि मुझे उससे यह सब कहने की जुर्रत नहीं करनी चाहिए थी, क्योंकि वह इन शब्दों से और इनसे मैं जो भावनाएं व्यक्त करना चाहता था उनसे भी बहुत ऊपर थी। मैं चुप हो गया, और इस दिन से मेरी दशा असहनीय हो गयी। पहले जैसे चुहल भरे संबंध बनाये रखकर मैं हीन नहीं बनना चाहता था, और यह अनुभव कर रहा था कि अभी इतना ऊंचा नहीं उठा हूं कि उसके साथ सीधे-सरल संबंध बना सकूं। हताश होकर मैं अपने आप से पूछ रहा था: मैं क्या करूं? बेतुके सपनों में मैं कभी उसे अपनी प्रेमिका के रूप में देखता तो कभी पत्नी के रूप में और दोनों ही विचारों को घृणा से अस्वीकार करता। उसे लौंडी बना देना भयावह होता। यह हत्या होती। उसे उच्च समाज की महिला, द्मीत्री अन्द्रेयेविच ओलेनिन की पत्नी बनाना, जैसे कि हमारे एक अफ़सर से विवाहित एक कज़्ज़ाक औरत है, और भी अधिक बुरी बात होती। हां, यदि मैं कज़्ज़ाक बन पाता, लुकाश्का बन पाता, घोड़े चुरा सकता, चिख़ीर के नशे में मग्न हो सकता, मस्ती से गीत गा सकता, लोगों को

जान से मार सकता और नशे में उसकी खिड़की पर चढ़ सकता, बिना यह सोचे कि मैं कौन हूं, किसलिए हूं—तब बात दूसरी होती। तब हम एक दूसरे को समझ पाते, तब मैं सुखी हो पाता। मैंने यह जीवन अपनाने का प्रयत्न किया और पहले से भी अधिक यह अनुभव किया कि मैं कितना निर्बल हूं, मेरा अंतर्मन कितना विखंडित है। मैं अपने आपको और अपने जटिल, विकृत, भोंडे अतीत को नहीं भूल सकता हूं। और अपना भविष्य मुझे पहले से भी अधिक आशाहीन लगता है। हर दिन मेरी आंखों के सामने हिमाच्छादित पर्वत होते हैं और होती है यह गरिमामय, सुखी नारी। संसार का एकमात्र संभव सुख मेरे लिए नहीं है, यह नारी मेरे लिए नहीं है। मेरी स्थिति में सबसे अधिक भयावह और सबसे अधिक मधुर बात यह है कि मैं अनुभव करता हूं कि उसे समझता हूं, लेकिन वह कभी भी मुझे नहीं समझेगी। वह मुझे नहीं समझेगी—इसलिए नहीं कि वह मुझसे हीन है; नहीं, उसे तो मुझे समझना ही नहीं चाहिए। वह सुखी है, वह प्रकृति के समान है: सुसंगत, प्रशांत और स्वतःपूर्ण। इधर मैं एक विकृत, दुर्बल जीव चाहता हूं कि वह मेरी विकृति, मेरी व्यथा समझे। मैं रात-रात भर नहीं सोया, उसकी खिड़की तले निष्प्रयोजन भटकता रहा, कुछ समझ नहीं रहा था कि मुझे क्या हुआ है। अठारह तारीख को हमारी कंपनी धावा बोलने गयी। तीन दिन तक मैं गांव से बाहर रहा। मैं उदास था और मेरे लिए सब बराबर था। टुकड़ी में गाने, ताश, शराब और इनामों की चर्चाएं मुझे पहले से भी अधिक भोंडी लगीं। आज मैं घर लौटा, मैंने उसे देखा, अपना घर देखा, येरोश्का मामा को देखा, अपने ओसारे से हिमाच्छादित पर्वतों को देखा और हर्ष की एक इतनी प्रबल नयी भावना से मैं अभिभूत हो गया कि मैं सब कुछ समझ गया। मैं इस स्त्री से सच्चा प्यार करता हूं, जीवन में पहली बार और एकमात्र बार मुझे सच्चा प्यार हुआ है। मैं जानता हूं कि मुझे क्या हुआ है। मुझे यह डर नहीं है कि यह भावना मुझे हीन बनायेगी, मैं अपने प्रेम पर लज्जित नहीं हूं, मुझे इस पर गर्व है। इसमें मेरा कोई दोष नहीं कि मुझे प्यार हो गया है। मेरी इच्छा के विपरीत ऐसा हुआ है। मैं आत्मत्याग में अपने प्रेम से बचना चाहता था, लुकाश्का कज़्ज़ाक और मर्यान्का के प्रेम में अपने लिए ख़ुशी की कल्पना करता रहा था और बस अपना प्रेम व ईर्ष्या ही जगाता रहा था। यह वह आदर्श, उदात्त प्रेम नहीं है, जो मैंने पहले अनुभव किया है; यह वह अनुराग नहीं है, जिसमें तुम अपने प्रेम पर विमुग्ध होते हो, अपनी

भावना का स्रोत अपने में अनुभव करते हो और सब कुछ स्वयं करते हैं। ऐसी भावना का भी मुझे अनुभव हो चुका है। आनंद भोगने की भावना तो यह और भी कम है, यह तो कुछ और ही है। हो सकता है कि मैं उसमें प्रकृति को, प्रकृति के सारे सौंदर्य के मूर्त रूप को प्रेम करता हूं; लेकिन मैं अपनी इच्छा से कुछ नहीं करता हूं, मेरे जरिये कोई नैसर्गिक शक्ति उससे प्रेम करती है, सारी सृष्टि, सारी प्रकृति मेरी आत्मा में यह प्यार भरती है और मुझसे कहती है: प्यार कर। मैं अपनी बुद्धि से या अपनी कल्पना से उससे प्रेम नहीं करता, मैं तो अपने रोम-रोम से उससे प्रेम करता हूं। उससे प्रेम करते हुए मैं अपने को सारी सुखमय सृष्टि का एक अभिन्न अंग अनुभव करता हूं। मैंने पहले अपनी नयी धारणाओं के बारे में लिखा था, जो अपने एकाकी जीवन के अनुभव से मैंने पायी थीं, लेकिन यह कोई नहीं जान सकता कि कितनी मुश्किल से वे धारणाएं मुझमें बनी थीं, उनका बोध होने पर मुझे ख़ुशी हुई थी और तब मैंने जीवन का एक नया, खुला रास्ता देखा था। इन धारणाओं से अधिक प्रिय मेरे लिए और कुछ नहीं था।... लेकिन... फिर प्रेम हुआ और ये धारणाएं नहीं रहीं, इनका अफ़सोस भी नहीं रहा। अब मेरे लिए यह समझ पाना भी कठिन है कि मुझे चित्त की ऐसी एकतरफ़ा, भावहीन और अमूर्त दशा प्रिय थी। सौंदर्य आया और उसने उस सारे मानसिक भगीरथ परिश्रम को निष्फल कर दिया। और इसके निष्फल हो जाने पर कोई खेद भी नहीं है! आत्मत्याग सब बकवास है। यह सब अहंकार है, सुख से उचित ही वंचित लोगों के लिए एक शरण है, दूसरों के सुख से होनेवाली ईर्ष्या से बचने का उपाय है। दूसरों के लिए जीना, भलाई करना! किसलिए? जबकि मेरे हृदय में केवल अपने प्रति प्रेम है और केवल एक कामना है— उससे प्यार करने की और उसके साथ रहने की, उसका जीवन जीने की। अब मैं दूसरों के लिए नहीं, लुकाश्का के लिए नहीं सुख की कामना करता। मैं अब इन दूसरों से प्यार नहीं करता। पहले मैं अपने से कहता कि यह बुरी बात है। मुझे ये प्रश्न सताते कि उसका क्या होगा, मेरा क्या होगा, लुकाश्का का क्या होगा? अब मेरे लिए सब बराबर है। मैं अपनी इच्छा से नहीं जी रहा, बल्कि मुझसे बढ़कर कोई शक्ति है, जो मुझे चला रही है। मैं दुख भोग रहा हूं, लेकिन पहले तो मृत था, अब ही मैं जी रहा हूं। आज मैं उनके यहां जाऊंगा और उसे सब कुछ कह दूंगा।"

शाम ढले यह पत्र लिखकर ग्रोलेनिन मकान मालिकों के यहां गया। उलीत्का बीबी ग्रलावघर के पीछे बेंच पर बैठी कोये खोल रही थी। मर्यान्का नंगे सिर मोमबत्ती के पास कुछ सी रही थी। ग्रोलेनिन को देखकर वह उछलकर खड़ी हो गयी ग्रौर रूमाल उठाकर ग्रलावघर के पास चली गयी।

"बैठ ले, थोड़ी देर हमारे साथ, बेटी," मां ने उससे कहा।

"नहीं, मैं नंगे सिर हूं।" ग्रौर वह उछलकर ग्रलावघर पर चढ़ गयी।

ग्रोलेनिन को उसका घुटना ग्रौर नीचे लटकती सुघड़ टांग ही दिखायी दे रही थी। उसने उलीत्का बीबी को चाय पिलायी। बीबी ने मर्यान्का को भेजकर उसके लिए कढ़ा हुग्रा दूध मंगाया। उसे मेज़ पर रखकर मर्यान्का फिर से ग्रलावघर पर जा बैठी। ग्रोलेनिन बस उसकी नज़रें महसूस कर रहा था। घर-गृहस्थी की फ़सल की बातें होने लगीं। उलीत्का बीबी का ग्रतिथि-सत्कार उमड़ ग्राया। वह ग्रोलेनिन के लिए ग्रंगूर के तरह-तरह के पकवान ले ग्रायी, सबसे ग्रच्छी ग्रंगूरी ग्रौर नान ले ग्रायी ग्रौर उस ग्रनघड़ किंतु गर्वभरे ग्रतिथि-सत्कार के साथ ग्रोलेनिन की ख़ातिर करने लगी, जो देहात के सीधे-सादे लोगों में ही पाया जाता है, उन लोगों में जो ग्रपने हाथों के परिश्रम से ग्रपनी रोटी कमाते हैं। शुरू-शुरू में जिस उलीत्का बीबी के रूखेपन पर ग्रोलेनिन को इतना ग्राश्चर्य हुग्रा था उसी की ग्रब बेटी के प्रति सहज-सरल ममता प्रायः उसके हृदय को छू जाती थी।

"हां, भैया, भगवान की दया है! सभी कुछ है, ग्रच्छी फ़सल बटोर ली है, चिख़ीर भी बना ली, बेचने को भी निकल ग्रायेगी, ग्रपने लिए भी रह जायेगी। तुम ग्रब चले नहीं जाना। ब्याह की ख़ुशियां मनायेंगे मिल-कर।"

"कब है ब्याह?" ग्रोलेनिन ने पूछा, यह महसूस करते हुए कि कैसे उसका चेहरा लाल हो उठा है ग्रौर दिल बुरी तरह धड़कने लगा है।

ग्रलावघर पर हिलने-डुलने की ग्रौर बीज खाने की ग्राहट हुई।

"ग्रगले हफ़्ते ही कर देना चाहिए। हम तो तैयार हैं," बीबी ने बड़े सहज, शांत भाव से जवाब दिया, मानो ग्रोलेनिन इस दुनिया में था ही नहीं ग्रौर न है। "मैंने तो मर्यान्का के लिए सब कुछ जमा कर रखा है। ग्रच्छी तरह ब्याहेंगे इसे। बस एक ही बात में ज़रा गड़बड़ है: लुकाश्का हमारा कुछ ज़्यादा ही मौज मारने लगा है। बिल्कुल हत्थे से उखड़ गया है।

पैंतरे दिखाने में लगा हुआ है। उस रोज़ टुकड़ी से एक कज़्ज़ाक आया था कह रहा था लुकाश्का नोगाई गया था।"

"कहीं पकड़ा न जाये," ओलेनिन ने कहा।

"मैं भी यही कहती हूं: लुकाश्का, ज्यादा कारस्तानियां मत दिखा। ठीक है, तू जवान आदमी है, बांकापन दिखाना चाहता है। पर हर काम की बेला होती है। ठीक है, झपट लिया, चुरा लिया, अबरेक को मार लिया तूने, बांका जवान है तू! पर अब बस कर! नहीं तो, बिल्कुल ही बुरी होगी।"

"हां, मैंने भी उसे दो-एक बार टुकड़ी में देखा है, मौज उड़ाता रहता है। घोड़ा भी बेच डाला," ओलेनिन ने कहा और मुड़कर अलावघर की ओर नज़र डाली।

बड़ी-बड़ी काली आंखें सख़्ती और विद्वेष से चमक रही थीं। उसे अपनी बात पर शर्म आयी।

"तो क्या हुआ! वह किसी का बुरा नहीं चेतता!" सहसा मर्यान्का बोल उठी। "अपने पैसों से मौज करता है," और टांगें नीचे लटकाकर अलावघर से उतर गयी, अपने पीछे धड़ाम से दरवाज़ा बंद करके बाहर चली गयी।

जब तक वह घर के अंदर थी ओलेनिन की नज़रें उसके पीछे लगी रही थीं, फिर वे दरवाज़े पर टिक गयीं, वह इंतज़ार करने लगा, उलीत्का बीबी क्या कह रही थी – उसकी कुछ समझ में नहीं आ रहा था। कुछ मिनट बाद मेहमान आ गये: एक बूढ़ा, उलीत्का बीबी का भाई, और येरोश्का मामा। उनके पीछे-पीछे मर्यान्का और उस्तेन्का अंदर आयीं।

"नमस्ते!" उस्तेन्का ने अपनी बारीक आवाज़ में कहा। "तुम छुट्टी ही मना रहे हो?" उसने ओलेनिन से पूछा।

"मना रहा हूं," उसने जवाब दिया और न जाने क्यों शर्मिंदा और अटपटा महसूस किया।

वह जाना चाहता था, लेकिन क़दम नहीं उठ रहे थे। चुप रहना भी उसे असंभव लग रहा था। बूढ़े ने उसे बचाया: उसने पीने के लिए मांगी और ओलेनिन ने भी उसके साथ पी। फिर येरोश्का मामा के साथ पी। फिर दूसरे कज़्ज़ाक के साथ और उसके बाद फिर से येरोश्का के साथ। और ओलेनिन जितनी ज़्यादा पीता जा रहा था, उतना ही उसका दिल बोझिल होता जा रहा था। लेकिन बूढ़े मस्ती में आ गये थे। लड़कियां

अलावघर पर जा बैठीं और उनकी ओर देख-देखकर कानाफूसी करने लगीं, और वे बड़ी देर तक पीते रहे। ओलेनिन कुछ नहीं बोल रहा था और सबसे ज्यादा पी रहा था। कज़्ज़ाक चिल्लाने लगे थे, बुढ़िया उन्हें और चिख़ीर नहीं दे रही थी, लड़कियां येरोश्का मामा का मज़ाक़ उड़ा रही थीं, और शाम के कोई दस बजे थे, जब सब बाहर ओसारे पर निकले। बूढ़ों ने ख़ुद ही ओलेनिन के घर चलकर कसर पूरी करने को कहा। उस्तेन्का अपने घर चली गयी। येरोश्का कज़्ज़ाक को वन्यूशा के पास ले गया। मर्यान्का की मां कोठरी में चूल्हा समेटने चली गयी। मर्यान्का घर में अकेली रह गयी थी। ओलेनिन अपने को चुस्त और ताजा महसूस कर रहा था, जैसे कि वह अभी-अभी जागा हो। वह सब कुछ देख-सुन रहा था, बूढ़ों को आगे जाने देकर वह घर में लौट आया: मर्यान्का सोने की तैयारी कर रही थी। वह उसके पास गया, उससे कुछ कहना चाहता था, लेकिन उसके मुंह से आवाज़ नहीं निकली। वह बिस्तर पर बैठ गयी, टांगें समेटकर उससे दूर एक कोने में दुबक गयी और चुपचाप, आशंकित नज़रों से उसे देख रही थी। स्पष्टतः वह उससे डर रही थी। ओलेनिन यह महसूस कर रहा था। उसे अपने आप पर शर्म आयी और खेद हुआ, लेकिन साथ ही घमंड भरा संतोष भी कि वह उसमें ऐसी भावना जगा रहा है। "मर्यान्का!" वह बोला। "तुम्हें कभी भी मुझ पर तरस नहीं आयेगा? मैं कह नहीं सकता, कितना प्यार है मुझे तुमसे।"

वह और भी दूर सरक गयी।

"देखो तो, शराब क्या कहलवाती है। कुछ नहीं मिलने का तुम्हें!"

"नहीं, यह शराब नहीं है। तुम लुकाश्का से ब्याह मत करो। मैं तुमसे ब्याह करूंगा।"

इन शब्दों को कहते-कहते ही उसने मन में सोचा: "यह मैं क्या कह रहा हूं? क्या कल मैं यही बात कह सकूंगा?" "हां-हां, कह सकूंगा, कल भी कहूंगा और अभी भी दोहराऊंगा।" उसके अंतःकरण में किसी स्वर ने उत्तर दिया। "करोगी मुझसे ब्याह?"

मर्यान्का ने गंभीर नज़रों से उसे देखा और उसका भय मानो जाता रहा।

"मर्यान्का! मैं पागल हो जाऊंगा। मैं अपना नहीं रहा। जो तुम कहोगी वही करूंगा," और इतने प्यार भरे, इतने कोमल शब्द उसके मुंह से स्वतः निकलने लगे।

"क्या, बेकार की बातें करते हो," मर्यान्का ने उसे टोक दिया और वह जो हाथ उसकी ओर बढ़ा था उसे सहसा पकड़ लिया। वह उसका हाथ परे नहीं झटक रही थी, बल्कि अपनी सशक्त उंगलियों से उसने उसे कसकर दबा लिया था। "कभी साहब लोग भी कज्ज़ाक लड़कियों से ब्याह करते हैं? जाओ!"

"पर तुम करोगी? मैं सब कुछ..."

"लुकाश्का का क्या करेंगे?" उसने हंसते हुए कहा।

ओलेनिन ने अपना हाथ छुड़ाया जिसे वह पकड़े हुए थी और उसकी जवान देह को कसकर बांहों में भर लिया। लेकिन वह हिरनी की तरह उछली, नंगे पांव ही बाहर भाग गयी। ओलेनिन होश में आ गया और अपने किये पर हक्का-बक्का रह गया। एक बार फिर उसे लगा कि इस नारी के सामने वह इतना अधम है। लेकिन पलांश को भी उसे अपने कहे पर पश्चात्ताप नहीं हुआ, वह घर चला गया। वहां बैठकर पी रहे बूढ़ों की तरफ़ देखे बिना ही लेट गया और सो गया। इतनी गहरी नींद उसे अरसे से नहीं आयी थी।

३५

अगले दिन त्योहार था। शाम को सभी लोग घरों से बाहर निकल आये। उनके सजीले वस्त्र डूबते सूरज की किरणों में चमचमा रहे थे। इस साल सदा से अधिक अंगूरी खींची गयी थी। लोग अपने परिश्रम से मुक्त हो गये थे। महीने भर बाद कज़्ज़ाक मुहिम पर जानेवाले थे, और इस बीच बहुत से घरों में शादियां होने जा रही थीं।

सबसे अधिक लोग चौक में ही जमा थे, पंचायत के सामने और दो दुकानों के पास, जिनमें एक मिठाइयों की थी और एक कपड़ों की। सुरमई और काले कोट पहने, जो गोट या डोरी से नहीं सजे हुए थे, धीर-गंभीर वयोवृद्ध कज़्ज़ाक पंचायत के चबूतरे पर बैठे हुए थे, या उसके पास खड़े थे। बूढ़े नपे-तुले, शांत स्वर में फ़सलों और नौजवानों की, गांव के मामलों और पुराने दिनों की बातें कर रहे थे और युवा पीढ़ी पर उदासीन-सी किंतु गरिमामय दृष्टि डाल रहे थे। उनके पास से गुज़रते हुए औरतें और लड़कियां पल भर को थम जातीं और सिर झुकातीं। नौजवान कज़्ज़ाक आदर से चाल धीमी कर लेते और टोपी उतारकर थोड़ी देर सिर के ऊपर उठाये रखते। बूढ़े तब चुप हो जाते। कोई सख़्ती से तो कोई स्नेह भरी

नजरों से सामने से गुज़रनेवालों को देखता और वे अपनी टोपियां उतारकर फिर से पहनते।

कज्ज़ाक लड़कियों ने अभी घेरे बनाकर नाचना-गाना शुरू नहीं किया था। अभी तो वे रंग-बिरंगे बेशमेत पहने और सिर व चेहरा सफ़ेद रूमाल से ढंककर ज़मीन पर या घरों के चबूतरों पर, सूरज की तिरछी किरणों से बचने के लिए छाया में बैठी थीं और अपनी खनकती आवाज़ों में हंसती हुई बतिया रही थीं। लड़के-लड़कियां चौक में खेल रहे थे, साफ़ आसमान में वे गेंद ऊंची उछालते और किलकारियां भरते हुए इधर-उधर दौड़ते। चौक के दूसरे सिरे पर किशोरियों ने घेरा बनाकर नाचना-गाना शुरू कर दिया था, अपनी बारीक, आवाज़ों में, जो अभी खुली नहीं थी, वे अपने गीत गा रही थीं। लेखाकार, अभी भरती न हुए जवान और त्योहार की छुट्टी पर घर लौटे जवान कज्ज़ाक गोट लगे सजल सफ़ेद और लाल चेर्केस कोट पहने, दो-दो, तीन-तीन की टोलियां बनाये औरतों-लड़कियों के एक झुंड से दूसरे झुंड तक जा रहे थे, लड़कियों के साथ हंसी-मज़ाक कर रहे थे। आर्मीनियाई दुकानदार पतले कपड़े का नीला चेर्केस कोट पहने, जिस पर सुनहरी गोट लगी हुई थी, दुकान के खुले दरवाज़े के पास खड़ा था। दुकान में रंग-बिरंगे रूमाल सजे हुए थे। पूर्वी सौदागर के गर्व से और अपने महत्व को समझते हुए वह खरीदारों की राह देख रहा था। लाल दाढ़ी-वाले, नंगे पांव दो चेचेन तेरेक के पार से त्योहार की रौनक देखने आये थे। अपने परिचित के घर के पास वे ज़मीन पर उकड़ूं बैठे थे, अपनी छोटी-छोटी पाइपों से तंबाकू पी रहे थे और थूक रहे थे, आते-जाते लोगों पर नज़र डालते हुए वे कभी-कभार अपने कंठ्य स्वर में एक दूसरे को कुछ कह देते थे। कभी अचानक कोई सिपाही अपना पुराना बरान कोट पहने रंग-बिरंगी भीड़ के बीच से जल्दी-जल्दी गुज़रता। कहीं-कहीं मस्ती में आ गये कज्ज़ाकों के गीत सुनायी देने लगे थे। सभी घर बंद थे, ओसारे कल शाम को ही धो दिये गये थे। बूढ़ी औरतें भी घरों से बाहर निकल आयी थीं। सूखी गलियों में एक जगह धूल में तरबूज़ और कद्दू के बीजों के छिलके बिखरे हुए थे। हवा गरम और निश्चल थी, आसमान साफ़ था और उसकी नीलिमा गहरी। घरों की छतों के पीछे दूधिया सफ़ेद पर्वत-शृंखला बिल्कुल पास ही लगती थी। डूबते सूरज की किरणें इस सफ़ेदी में गुलाबी रंग घोल रही थीं। कभी-कभार नदी पार कहीं बहुत दूर तोप चलने की दबी-दबी गूंज सुनायी दे जाती। लेकिन गांव में त्योहार की भांति-

भांति की हर्षमय ध्वनियां ही एक-दूसरी में घुलती-मिलती हवा में तिर रही थीं।

ओलेनिन मर्यान्का को देख पाने की उम्मीद में सारी सुबह अहाते में टहलता रहा था। लेकिन वह घर का काम निबटाकर गिरजे में चली गयी; फिर लौटकर कभी सहेलियों के साथ चबूतरे पर बैठी बीज खाती रही, कभी सहेलियों के साथ ही घर आती, तो किरायेदार पर हर्षमय, स्नेहभरी नज़र डाल जाती। ओलेनिन मज़ाकिया लहजे में और दूसरों के सामने उससे बात करने में डर रहा था। वह कल की बात पूरी कहना चाहता था और उससे कोई पक्का जवाब पाना चाहता था। उसे कल शाम जैसे ही किसी क्षण की प्रतीक्षा कर रहा था, लेकिन ऐसा क्षण नहीं आ रहा था। आगे प्रतीक्षा करते रहने की शक्ति अब उसमें नहीं रही थी। वह फिर से बाहर चली गयी और उसके थोड़ी देर बाद, स्वयं यह न जानते हुए कि वह कहां जा रहा है, वह उसके पीछे चल दिया। वह उस नुक्कड़ से आगे निकल गया, जहां वह चमचम करता नीला अतलसी बेशमेत पहने बैठी थी, और दुखते हृदय से उसने अपने पीछे लड़कियों का खिलखिलाहट सुनी।

बेलेत्स्की का घर चौक पर था। उसके पास से गुज़रते हुए ओलेनिन को बेलेत्स्की की आवाज़ सुनायी दी: "अंदर आइये," और वह अंदर चला गया।

कुछ बातें करके वे दोनों खिड़की के पास बैठ गये। थोड़ी देर में येरोश्का मामा भी नया बेशमेत पहने वहां आ गया और उनके पास फ़र्श पर बैठ गया।

"यह यहां की चुनी हुई लड़कियों की टोली है," बेलेत्स्की ने मुस्कराते हुए अपनी सिगरेट से नुक्कड़ पर खड़ी लड़कियों की ओर इशारा किया। "मेरी भी वहां है – देखा आपने? लाल बेशमेत पहने। नया है। अरे, नाच कब शुरू करोगी?" खिड़की से सिर बाहर निकालकर वह चिल्लाया। "ज़रा ठहरिये, अंधेरा होते ही हम भी बाहर चलेंगे। फिर उन्हें उस्तेन्का के यहां बुलायेंगे। इन्हें दावत देनी चाहिए।"

"मैं भी उस्तेन्का के यहां चलूंगा," ओलेनिन ने दृढ़तापूर्वक कहा। "मर्यान्का वहां होगी?"

"होगी, ज़रूर चलिये!" बेलेत्स्की ने ज़रा भी हैरान हुए बिना कहा। "बड़ा सुंदर लगता है," रंग-बिरंगी भीड़ की ओर इशारा करते हुए उसने कहा।

"हां, बहुत सुंदर है!" ओलेनिन ने उदासीन दिखने का प्रयत्न करते हुए हां में हां मिलायी फिर वह बोला: "ऐसे त्योहारों में मुझे सदा इस बात पर आश्चर्य होता है कि क्यों एकाएक सभी लोग संतुष्ट और खुश हो जाते हैं, सिर्फ़ इसलिए कि आज कैलंडर में त्योहार का दिन है? हर बात में त्योहार नज़र आता है। लोगों की आंखें, चेहरे, आवाजें, गतियां, कपड़े, हवा और धूप – सभी कुछ समारोही है। हमारे यहां तो ऐसे त्योहार रहे ही नहीं।"

"हां," बेलेत्स्की ने कहा। उसे इस तरह की बातें पसंद नहीं थीं। "तुम क्यों नहीं पी रहे, बाबा?" उसने येरोश्का से पूछा।

येरोश्का ने ओलेनिन को आंख मारकर बेलेत्स्की की तरफ़ इशारा किया:

"क्यों, गर्वीला है, तुम्हारा कुनाक।"

बेलेत्स्की ने गिलास उठाया।

"अल्लाह बिरदी!" उसने कहा और गिलास ख़ाली कर दिया। (अल्लाह बिरदी का अर्थ है अल्लाह ने दी; काकेशिया में लोग आम तौर पर मिल-जुलकर पीते समय यही कहकर जाम उठाते हैं।)

"साउ बुल (जियो)," येरोश्का ने कहा और मुस्कराते हुए अपना गिलास खाली कर दिया। "तुम कहते हो त्योहार है!" उठकर खिड़की में झांकते हुए उसने ओलेनिन से कहा। "यह भी कोई त्योहार है? तुमने यह नहीं देखा पुराने ज़माने में लोग कैसे त्योहार मनाते थे! औरतें आतीं सुनहरी गोट से सजे सराफ़ान पहने, छाती पर सोने के सिक्कों की दोहरी हमेल। चलतीं तो ऐसी झंकार होती! अरे, झुंड की झुंड निकल आती थीं और सारी-सारी रात गाती रहती थीं। और कज़्ज़ाक चिख़ीर के पीपे बाहर लुढ़का लाते और जम जाते, सारी रात पौ फटने तक पीते रहते। या फिर हाथ डालकर चल पड़ते गांव में – जो मिलता उसे पकड़कर अपने साथ कर लेते, बस, ऐसे ही एक से दूसरे के यहां जाते रहते। कभी-कभी तो लगातार तीन दिन मौज उड़ाते रहते। मुझे याद है, बापू हमारा आता, लाल सुर्ख और फूला हुआ, टोपी के बिना, सब कुछ खो-खाकर, आता और लेट जाता। मां को सब पता था क्या करना है: मछली के ताज़े अंडे ला देती और चिख़ीर – खुमार तोड़ने के लिए, और ख़ुद गांव में उसकी टोपी ढूंढने चली जाती। बापू दो दिन तक सोता रहता! ऐसे थे लोग! अब क्या हैं भला?"

“पर वे सराफ़ान पहने लड़कियां? वे क्या अकेली त्योहार मनाती थीं?” बेलेत्स्की ने पूछा।

“अजी हां, अकेली! कज्ज़ाक चले आते, पैदल ही या फिर घोड़ों पर सवार होकर; कहते, चलो घेरे तोड़ने चलें, और चल देते, लड़कियां डंडे पकड़ लेतीं। अब कोई बांका जो है, उड़ता चला आ रहा है, लड़कियां हैं कि उसे पीट रही हैं, घोड़े को पीट रही हैं, पर लो, उसने दीवार तोड़ ली और अपनी प्यारी को उठाकर उड़ गया! कितना प्यार करता था! अरे, वो लड़कियां भी क्या थीं! रानियां थीं, रानियां!”

३६

इसी समय बगल की एक गली से दो घुड़सवार चौक पर पहुंचे। उनमें एक नज़ारका था और दूसरा लुकाश्का। लुकाश्का अपने हृष्ट-पुष्ट कुम्मैत कबरदा घोड़े पर ज़रा तिरछा होकर बैठा हुआ था। घोड़ा अपना सलोना सिर और रेशमी अयाल उछालते हुए सख़्त रास्ते पर हल्के-हल्के कदम रख रहा था। खोल में ठीक से बंद बंदूक, पीठ पर लटकती पिस्तौल और ज़ीन के पीछे बंधा लबादा यह बताते थे कि लुकाश्का किसी शांतिपूर्ण जगह से, या पास की जगह से नहीं आ रहा है। ज़रा तिरछा होकर बैठने में, उसके हाथ की लापरवाही भरी गति में जिससे वह घोड़े के पेट तले चाबुक ज़रा-ज़रा हिला रहा था, और ख़ास तौर पर उसकी चमकती काली आंखों में, जिन्हें ज़रा सिकोड़ते हुए वह सगर्व चारों ओर नज़रें डाल रहा था– इस सब में अपनी शक्ति और यौवन के आत्मविश्वास की चेतना छलकती थी। इधर-उधर देखती उसकी आंखें मानो कह रही थीं–“देखा बांके जवान को?” सुघड़-सुडौल घोड़े, उसके चांदी से सजे साज़, हथियारों और स्वयं कज़्ज़ाक ने चौक पर जमा सभी लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचा। दुबले और गिठने नज़ारका के कपड़े लुकाश्का से कहीं बदतर थे। बूढ़ों के पास से गुज़रते हुए लुकाश्का थम गया और उसने भेड़ की खाल की अपनी सफ़ेद टोपी छोटे-छोटे काले बालोंवाले सिर के ऊपर उठायी।

“बहुत सारे घोड़े चुरा लिये नोगाइयों के?” एक दुबले-पतले बूढ़े ने भौंहें टेढ़ी करके पूछा।

“बाबा, तुम क्या गिनते रहे हो, जो पूछ रहे हो,” लुकाश्का ने मुंह फेरकर जवाब दिया।

"लड़के को बेकार ही अपने पीछे घसीटता है," बूढ़े ने पहले से भी अधिक मनहूस स्वर में कहा।

"देखो तो, शैतान को सब पता है," लुकाश्का ने मन ही मन कहा और उसके चेहरे पर चिंता की छाप पड़ गयी; लेकिन, फिर नुक्कड़ पर नज़र डालकर, जहां बहुत सारी लड़कियां खड़ी थीं, लुकाश्का ने घोड़ा उधर मोड़ दिया।

"नमस्ते री, लड़कियो," एकाएक घोड़े को रोकते हुए उसने अपनी तेज़ आवाज़ में कहा। "बुढ़िया गयीं मेरे बिना, चुड़ैलें।" और वह हंस पड़ा।

"नमस्ते लुकाश्का, नमस्ते!" हर्षमय स्वर सुनायी दिये। "पैसे ख़ूब लाये? मिठाई तो ख़रीदो लड़कियों के लिए। कब तक रहोगे? बड़े दिनों बाद आये हो।"

"नज़ारका के साथ एक रात मौज करने आये हैं," लुकाश्का ने चाबुक चमकाते और घोड़े को लड़कियों की ओर बढ़ाते हुए जवाब दिया।

"हां, मर्यान्का तो तुझे बिल्कुल भूल ही गयी," उस्तेन्का ने अपनी पतली आवाज़ में कहा और मर्यान्का को टहोका मारकर हंस दी।

मर्यान्का घोड़े से परे हट गयी और सिर ऊपर उठाकर उसने अपनी बड़ी-बड़ी चमकती आंखों से कज़्ज़ाक पर शांत नज़र डाली।

"हां, बड़े दिनों बाद आये हो! क्या घोड़े को चढ़ा रहे हो?" रूखे स्वर में यह कहकर उसने मुंह मोड़ लिया।

लुकाश्का ख़ास तौर पर ख़ुश नज़र आता था। उसके चेहरे पर निडरता और प्रसन्नता की दमक थी। मर्यान्का के रूखे जवाब पर वह दंग रह गया था। अचानक उसने त्योरियां चढ़ायीं।

"खड़ी हो जाओ मेरी रकाबों में, पहाड़ों पर ले जाऊंगा," सहसा वह चिल्लाया, जैसे कि अपने बुरे विचारों को भगा रहा हो, और लड़कियों के बीच घोड़े को घुमाने लगा। फिर वह मर्यान्का की ओर झुका: "हाय चूम लूंगा, ऐसा चुम्मा लूंगा कि बस!"

मर्यान्का और उसकी नज़रें टकरायीं और सहसा मर्यान्का के गालों पर लाली दौड़ गयी, वह पीछे हट गयी।

"चलो हटो! पांव ही कुचल डालोगे," उसने कहा और सिर झुकाकर अपने सुघड़ पांवों को देखने लगी, जिनमें वह पतली सी चांदी की गोट से सजी लाल जूतियां पहने थी।

लुकाश्का उस्तेन्का से कुछ कहने लगा और मर्यान्का एक कज़्ज़ाक औरत के पास बैठ गयी, जिसकी गोद में बच्चा था। बच्चा लड़की की ओर बढ़ा और अपने गदराये कोमल हाथ से उसने उसके नीले बेशमेत पर लटकती हमेल का धागा पकड़ लिया। मर्यान्का ने उस पर झुककर लुकाश्का पर तिरछी नज़र डाली। लुकाश्का अपने चेर्केस कोट के पीछे से काले बेशमेत की जेब में से मिठाई की पोटली निकाल रहा था।

"लो, सबकी सब खाओ," उस्तेन्का को पोटली पकड़ाते हुए उसने कहा और मुस्कराकर मर्यान्का की ओर नज़र डाली।

एक बार फिर लड़की के चेहरे पर सकपकाहट का भाव आया। उसकी अनुपम आंखों पर कुहासा-सा छा गया। उसने अपना रूमाल होंठों से नीचे उतारा और सहसा बच्चे के गोरे मुखड़े पर झुककर उसे दबादब चूमने लगी। बच्चा अपने नन्हे-नन्हे हाथ उसके ऊंचे वक्ष पर रखे हुए था और अपना दंतहीन मुंह खोलकर चीख रहा था।

"क्या बच्चे का दम घोंट रही है?" बच्चे की मां ने बच्चे को छीनते हुए और उसे दूध पिलाने के लिए बेशमेत के बटन खोलते हुए कहा। "जाके अपने मंगेतर से लाड कर।"

"अभी घोड़े को बांध आऊं, फिर नज़ारका और मैं सारी रात मौज करेंगे," चाबुक फटकारकर लुकाश्का ने कहा और लड़कियों से परे चल दिया।

नज़ारका के साथ बग़ल की गली में मुड़कर वे अगल-बग़ल बने दो मकानों के पास पहुंचे।

"ले, भई, आ गये! अच्छा, अब जल्दी करना!" लुकाश्का ने पड़ोस के अहाते के पास उतर गये नज़ारका से चिल्लाकर कहा और अपने घोड़े को सावधानी से अपने अहाते के टट्टर के फाटक में से अंदर ले गया। "नमस्ते स्तेप्का," उसने गूंगी से कहा। वह भी सजीले कपड़े पहने गली से अंदर आयी थी – भाई का घोड़ा संभालने। लुकाश्का ने इशारों से उसे समझाया कि वह घोड़े को घास डाल दे और ज़ीन नहीं उतारे।

गूंगी घोड़े की ओर इशारा करते हुए घुरघुरायी, घोड़े को पुचकारा और उसका माथा चूमा। इसका मतलब था कि उसे घोड़ा बड़ा प्यारा लगता है और वह अच्छा है।

"नमस्ते, मां! अभी बाहर नहीं गयीं क्या?" बंदूक संभालते हुए ओसारे पर चढ़कर वह चिल्लाया।

मां ने दरवाज़ा खोला।

"अरे, हमने तो सोचा तक न था," वह बोली, "कीरका कह रहा था कि अभी नहीं आयेगा।"

"मां, चिख़ीर ले आओ। नज़ारका आयेगा, त्योहार मनायेंगे।"

"अभी लाती हूं, बेटा, अभी," मां ने जवाब दिया। "सारी औरतें ख़ुशियां मना रही हैं। हमारी गूंगी भी बाहर गयी लगती है।"

और चाबी लेकर वह जल्दी-जल्दी कोठरी की ओर चल दी।

नज़ारका अपने घोड़े को घर पर बांधकर और बंदूक उतारकर लुकाश्का के यहां चला आया।

३७

"पहला जाम तुम्हारी सेहत का," मां के हाथों से लबालब भरा प्याला लेकर उसे सावधानी से होंठों तक ले जाते हुए लुकाश्का ने कहा।

"देखा तूने," नज़ारका बोला, "बुर्लाक बाबा क्या पूछता था: 'बहुत घोड़े चुराये क्या?' लगता है, सब जानता है।"

"ओझा है!" लुकाश्का ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया। "तो क्या हुआ?" सिर झटककर उसने आगे कहा, "वे तो अब नदी पार हैं। ढूंढते फिरो।"

"तो भी, अच्छा नहीं।"

"क्या अच्छा नहीं! कल जाकर उसे चिख़ीर दे आइयो। समझा, ऐसे करते हैं, और सब ठीक होगा। अब मौज कर। पी!" लुकाश्का बिल्कुल वैसे ही चिल्लाया जैसे येरोश्का मामा यह बात कहता था। "बाहर चलेंगे मौज करने, लड़कियों के पास। तू जाकर शहद् ले आ, या मैं गूंगी को भेज देता हूं। सुबह तक मौज करेंगे।"

नज़ारका मुस्करा रहा था।

"क्यों, देर तक रहेंगे यहां?" उसने पूछा।

"मौज करने दे! जा, जाके वोद्का ले आया! यह ले पैसे!"

आज्ञाकारी नज़ारका याम्का के पास गया।

येरोश्का मामा और येर्गुशोव को हिंसक पक्षियों की भांति इसकी गंध मिल गयी थी कि कहां ढल रही है और वे दोनों एक के बाद एक लड़खड़ाते हुए अंदर आये।

"मां, आधी बाल्टी और देना!" उनके अभिवादनों के जवाब में लुकाश्का चिल्लाया।

"बोल, पट्ठे, कहां चुराये?" येरोश्का चिल्लाया। "शाबाश! है न मेरा प्यारा!"

"हुं, बड़ा प्यारा हूं," लुकाश्का ने हंसते हुए जवाब दिया। "कैडेटों के तोहफ़े ले जाकर लड़कियों को देते हो। वाह, मामा, वाह!"

"झूठ, बिल्कुल झूठ!... ओह, मार्का!" बूढ़े ने ठहाका मारा। "कितनी मिन्नतें कर रहा था, यह शैतान! कहता था, जा जुगाड़ कर दे! बंदूक दे रहा था। नहीं-नहीं, भाड़ में जाये! मैं तो सब जुगाड़ कर देता—पर तुझ पर तरस आता है मुझे। बोल, कहां गया था," बूढ़ा तातारों की बोली में बोलने लगा।

लुकाश्का फटाफट जवाब दे रहा था।

येर्गुशोव यह बोली नहीं समझता था, बस कभी-कभार रूसी के दो शब्द जोड़ देता था।

"मैं कहता हूं, घोड़े भगाये हैं। पक्का पता है मुझे," वह बीच-बीच में कह रहा था।

"गिरेइका के साथ हम गये," लुकाश्का बता रहा था (गिरेइ ख़ान को गिरेइका कहना भी कज़्ज़ाकों के लिए बांकापन था)। "नदी पार तो बड़ी डींगें हांक रहा था कि सारी स्तेपी जानता है, सीधा पहुंचा देगा, पर जब चले तो रात अंधेरी थी, गिरेइका भटक गया, लगा चक्कर काटने, कुछ पता ही न चले। मिलकर ही नहीं देता गांव। हम शायद ज़्यादा दाहिने निकल गये थे। यह समझो कि आधी रात तक ढूंढते रहे। वो तो अच्छा हुआ कुत्ते हुआने लगे।"

"बुद्धू हो," येरोश्का मामा बोला। "हम भी ऐसे स्तेपी में भटक जाते थे। कोई चलता रास्ता तो है नहीं। बस मैं किसी टीले पर चढ़ जाता और भेड़िये की तरह हुआने लगता, देख, ऐसे!" उसने हाथ मुंह पर रखे और ऐसी आवाज़ें निकालने लगा जैसे कि भेड़ियों का पूरा झुंड एक ही सुर में हुआ रहा हो। "बस तुरंत कुत्ते जवाब में भौंक पड़ते। अच्छा, आगे बताओ। मिल गये घोड़े?"

"फटाफट भगा ले गये! नज़ारका को तो नोगाई औरतों ने पकड़ ही लिया था। सच!"

"अजी हां, पकड़ लिया था," इस बीच लौट आये नज़ारका ने बुरा मानते हुए कहा।

"चल दिये ; फिर से गिरेइका भटक गया ; समझो टीलों में ही ले गया था। कहता यही था कि तेरेक को जा रहे हैं और जा उलट दिशा को रहे हैं।"

"अरे, तो तारों से देख लेना था," येरोश्का मामा ने कहा।

"मैं भी कहता हूं," येर्गुशोव ने फिर अपनी बात जोड़ी।

"कहां देखते, इतना अंधेरा था। बड़ी कोशिश की मैंने, बड़ी कोशिश की। आख़िर एक घोड़ी पकड़कर उस पर लगाम डाल दी, अपने घोड़े को खुला छोड़ दिया, सोचा यह हमें ले जायेगा। क्या ख़याल है तुम्हारा? घोड़े ने फुफकारकर ज़मीन सूंघी और लो दौड़ चला, सीधा गांव में ले आया। शुक्र है, अच्छे मौक़े पर लौट आये, बिल्कुल उजाला हो चला था : मुश्किल से घोड़ों को जंगल पार छिपा पाये। नदी पार से नगीम आया, सबको ले गया।"

येर्गुशोव ने सिर हिलाया :

"मैं तो कहता हूं : सफ़ाई का काम है। कितने मिले?"

"सब यहां है," लुकाश्का ने जेब थपथपाकर कहा।

तभी उसकी मां अंदर आ गयी और उसने बात अधूरी छोड़ दी।

"पियो!" वह चिल्लाया।

"ऐसे ही गीरचिक के साथ हम एक बार देर से निकले..." येरोश्का ने कहना शुरू किया।

"ओह, मामा, तुम्हारे क़िस्से तो कभी ख़त्म नहीं होंगे!" लुकाश्का ने कहा। "अच्छा, मैं चलता हूं," प्याले में बची अंगूरी पीकर और पेटी कसकर लुकाश्का बाहर निकल आया।

३८

अंधेरा हो चुका था जब लुकाश्का बाहर निकला। पतझड़ की रात शांत और ताज़गी भरी थी। चौक के एक ओर उग रहे ऊंचे वृक्षों के पीछे से पूर्णिमा का सुनहरा चांद उठ रहा था। धुआंरों से उठता धुआं धुंध में मिलकर गांव पर फैल रहा था। कहीं-कहीं खिड़कियों में रोशनी थी। उपलों, अंगूर के ताज़े रस और धुंध की मिली-जुली गंध हवा में घुली थी। बातों की आवाज़ें, हंसी, गीतों के स्वर और बीज छीलने की चट-चट – ये सभी ध्वनियां दिन की ही भांति घुली-मिली, किंतु अधिक

स्पष्टतः सुनायी दे रही थीं। अंधेरे में बाड़ों और घरों के पास सफ़ेद रूमाल और टोपियां झुंडों में दिखायी दे रहे थे।

चौक में, दुकान के खुले दरवाज़े के सामने, जिसमें से रोशनी आ रही थी, कज़्ज़ाक लड़के-लड़कियों की सफ़ेद और काली आकृतियां अंधेरे में उभर रही थीं और उनके गाने की, हंसने-बतियाने की आवाज़ दूर तक गूंज रही थी। लड़कियां एक दूसरी का हाथ पकड़े घेरा बनाकर घूम रही थीं। एक दुबली-पतली और सबसे कम सुंदर लड़की ने गीत छेड़ा:

जंगल से जी, घने जंगल से,
बाग से जी, हरे बाग से,
चले आते हैं दो बांके जी,
बांके जी, दो कंवारे जी।
आते हैं वे चले आते हैं,
गली में वे थम जाते हैं,
थम जाते हैं भिड़ जाते हैं।
सुंदरी तब इक आती है,
आती है, वह कहती है:
"किसी एक की मैं हो जाऊंगी।"
हो गयी वह बांके गोरे की,
बांके गोरे की, बांके चिट्टे की।
गोरा हाथ वह उसका लेता है,
गोरा साथ उसे ले जाता है,
संगी-साथियों को उसे दिखाता है:
"देखो, कैसी यह मेरी प्यारी है!"

बूढ़ी औरतें पास ही खड़ी गीत सुन रही थीं। छोटे लड़के-लड़कियां अंधेरे में छुआ-छुई खेलते एक दूसरे के पीछे दौड़ रहे थे। चारों ओर खड़े कज़्ज़ाक आती-जाती लड़कियों को छेड़ रहे थे, कभी वे घेरा तोड़कर उसमें घुस जाते। बेलेत्स्की और ओलेनिन चेर्केस कोट और भेड़ की खाल की ऊंची टोपियां पहने दरवाज़े के पास अंधेरे में खड़े थे। वे कज़्ज़ाकों की भांति ज़ोर-ज़ोर से तो नहीं, लेकिन इस तरह कि दूसरे सुन पायें बोल रहे थे। उनका लहजा कज़्ज़ाकों से भिन्न था और वे यह अनुभव कर रहे थे

कि दूसरों का ध्यान ग्राकर्षित कर रहे हैं। पास ही लाल बेशमेत पहने गोल-मटोल उस्तेन्का ग्रौर नयी कमीज़, नया बेशमेत पहने गरिमामयी मर्यान्का हाथ में हाथ डाले घेरे में चक्कर लगा रही थीं। ग्रोलेनिन ग्रौर बेलेत्स्की यह बातें कर रहे थे कि कैसे मर्यान्का ग्रौर उस्तेन्का को घेरे में से निकालें। बेलेत्स्की का ख़याल था कि ग्रोलेनिन यों ही मौज करना चाहता है, जबकि ग्रोलेनिन ग्रपने भाग्य के निर्णय की प्रतीक्षा कर रहा था। वह हर हालत में ग्राज ही मर्यान्का से ग्रकेले में मिलना चाहता था ताकि उसे सब कुछ बता दे ग्रौर पूछे कि क्या वह उसकी पत्नी बन सकती है ग्रौर बनना चाहेगी। वह जानता था कि इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक है, तो भी उसे ग्राशा थी कि वह जो कुछ ग्रनुभव कर रहा है वह सब उसे बता पायेगा ग्रौर वह उसे समझ लेगी।

"ग्रापने पहले क्यों नहीं कहा," बेलेत्स्की उससे कह रहा था, "मैं उस्तेन्का से कहकर मिला देता। ग्राप भी इतने ग्रजीब हैं!"

"क्या करें? किसी दिन, शायद बहुत जल्दी ही मैं ग्रापको सब कुछ बता दूंगा। लेकिन ग्रभी, भगवान के वास्ते, बस इतना कर दीजिये कि वह उस्तेन्का के यहां ग्रा जाये।"

"ग्रच्छी बात है। यह कोई मुश्किल बात नहीं।... क्यों, मर्यान्का तू बांके गोरे की हो जायेगी? लुकाश्का की नहीं?" बेलेत्स्की ने ग्रदब का ख़याल रखते हुए पहले मर्यान्का से बात की; ग्रौर फिर उसके उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही वह उस्तेन्का के पास गया ग्रौर उससे कहने लगा कि वह मर्यान्का को ग्रपने साथ ले ग्राये। वह ग्रपनी बात पूरी भी नहीं कर पाया था कि नया गीत छिड़ गया ग्रौर लड़कियां एक दूसरी को खींचती घेरे में चलने लगीं। वे गा रही थीं:

ग्ररी, बागों में बौर छाया,
देखो, बांका एक ग्राया,
फेरा गली का लगाया।
पहली बार जो वह ग्राया,
हाथ उसने तब हिलाया,
दूसरी बार जो वह ग्राया,
बनके छैला जी वह ग्राया,

तीसरी बार जो वह आया,
घर गोरी का उसने पाया,
और ठहर वह गया,
सज-संवर वह गया।
"तुझे बुलाने मैं हूं आया,
उलाहना लेके मैं हूं आया,
क्यों नहीं आती मेरी प्यारी,
घूमने बगिया में तू न्यारी?
नहीं क्या तुझे मैं प्यारा?
नहीं क्या तुझे मैं गवारा?
याद करेगी तू यह बात,
रोया करेगी तब दिन रात।
समझ ले अभी भी सयानी,
बनेगी तू ही मेरी रानी।
ब्याहने तुझे मैं आऊंगा,
ब्याहके तुझे ले जाऊंगा।"
अरी, जानती थी क्या मैं बोलूं,
पर न निकला मुंह से बोल,
न निकला मुंह से बोल
चली आयी लाज मैं छोड़।
लो जी, बगिया में मैं आयी,
देख मीत को घबरायी।
मुखड़ा मेरा हुआ लाल,
छूटा हाथ से रूमाल।
उठाया मीत ने रूमाल,
ले, मेरी प्यारी, इसे संभाल।
गोरे हाथों में इसे तू ले ले,
गोरी प्यार तू मुझसे कर ले।
मैं न जानूं जी, क्या दूं,
अपनी प्यारी को मैं क्या दूं?
सुंदर शाल तुझे ला दूं,
झोली प्यार से भर दूं।

लुकाश्का और नज़ारका घेरा तोड़कर लड़कियों के बीच चक्कर काटने लगे। लुकाश्का भी गाने में शामिल हो गया, अपनी बांहें झुलाता वह घेरे के बीच में चल रहा था।

"चलो आओ, कौन आती है!" वह बोला।

लड़कियां मर्यान्का को धकेल रही थीं, वह घेरे में से निकलना नहीं चाहती थी। गीत के स्वरों के पीछे खनकती हंसी, धौल, चुंबन और काना-फ़ुसी की आवाज़ें आ रही थीं।

ओलेनिन के पास से गुज़रते हुए लुकाश्का ने दोस्ताना ढंग से सिर हिलाया।

"द्मीत्री अन्द्रेइच, तुम भी आ गये मेला देखने?" उसने कहा।

"हां," ओलेनिन ने दृढ़ और रूखा उत्तर दिया।

बेलेत्स्की ने उस्तेन्का के कान पर झुककर कुछ कहा। वह जवाब देना चाहती थी, लेकिन देर हो गयी, दूसरे चक्कर में उसने कहा:

"अच्छी बात है, आयेंगी।"

"मर्यान्का भी?"

ओलेनिन मर्यान्का की ओर झुका।

"आओगी न? ज़रूर आना, एक मिनट को ही सही। मुझे तुमसे बात करनी है।"

"लड़कियां आयेंगी, तो मैं भी आऊंगी।"

"तुम मुझे बताओगी जो मैंने पूछा था?" उसने फिर से उसकी ओर झुककर पूछा। "आज तो तुम ख़ुश हो।"

वह उससे दूर जा रही थी। वह उसके पीछे चल दिया।

"बताओगी?"

"क्या?"

"जो कल मैंने पूछा था," ओलेनिन ने उसके कान पर झुककर कहा। "मुझसे ब्याह करोगी?"

मर्यान्का कुछ देर सोचती रही।

"बता दूंगी," उसने जवाब दिया, "आज बता दूंगी।"

और अंधेरे में उसकी आंखों में हर्ष और स्नेह की चमक दौड़ गयी।

वह उसके पीछे-पीछे चल रहा था। उस पर झुकना उसे अच्छा लग रहा था।

लेकिन लुकाश्का ने गीत गाते हुए उसका हाथ पकड़कर उसे झटके

से खींच लिया ग्रौर घेरे के बीच में ले ग्राया। ग्रोलेनिन बस इतना ही कह पाया: "उस्तेन्का के यहां ग्राना," ग्रौर ग्रपने साथी के पास चला गया। गीत ख़त्म हो गया। लुकाश्का ने होंठ पोंछे, मर्यान्का ने भी ग्रौर उन्होंने चुंबन लिया। "नहीं, ग्रभी झोली नहीं भरी," लुकाश्का कह रहा था। लयबद्ध गतियों ग्रौर लयबद्ध स्वरों का स्थान बातों ने, हंसी ग्रौर भागदौड़ ने ले लिया। लुकाश्का काफ़ी पिये हुए लगता था, वह लड़कियों को मिठाइयां बांटने लगा।

"ग्राग्रो, सब लो," वह घमंडे भरे, हास्यास्पद ग्रौर साथ ही मर्मस्पर्शी ग्रात्मसंतोष से कह रहा था। "जो सिपाहियों के साथ मौज करना चाहती है वह चली जाये घेरा छोड़के," सहसा ग्रोलेनिन पर कुपित दृष्टि डालकर उसने कहा।

लड़कियां उससे मिठाइयां झपट रही थीं ग्रौर हंसती हुई एक दूसरी से छीन रही थीं। बेलेत्स्की ग्रौर ग्रोलेनिन एक ग्रोर को हट गये।

लुकाश्का को ग्रपनी इस उदारता पर शर्म-सी ग्रा रही थी। टोपी उतारकर ग्रास्तीन से माथा पोंछते हुए मर्यान्का ग्रौर उस्तेन्का के पास गया।

"नहीं क्या तुझे मैं गवारा?" उसने ग्रभी-ग्रभी ख़त्म हुए गीत के शब्द दोहराये ग्रौर फिर मर्यान्का की ग्रोर मुड़ा: "नहीं क्या मैं गवारा?" एक बार फिर उसने गुस्से से कहा। "याद करेगी तू यह बात, रोया करेगी तब दिन रात," उसने ग्रागे कहा ग्रौर उस्तेन्का व मर्यान्का दोनों को बांहों में भरा।

उस्तेन्का उसकी गलबहियों से निकल गयी ग्रौर उसने ग्रपनी बांह घुमाकर उसकी पीठ पर इतने ज़ोर से मुक्का मारा कि उसका ग्रपना ही हाथ दुखने लगा।

"क्यों, ग्रौर गाग्रोगी?" लुकाश्का ने पूछा।

"जैसे लड़कियां चाहें," उस्तेन्का ने जवाब दिया, "मैं तो घर जा रही हूं, मर्यान्का भी हमारे यहां ग्राना चाहती थी।"

लुकाश्का ने ग्रभी भी मर्यान्का को ग्रपनी बांहों में भर रखा था। वह उसे भीड़ से परे मकान के ग्रंधेरे नुक्कड़ पर ले गया।

"मत जा, मर्यान्का," उसने कहा, "ग्राख़िरी बार मौज कर लें। घर चली जा, मैं तेरे पास ग्राऊंगा।"

"क्या करूंगी मैं घर जाकर? हंसी-ख़ुशी के लिए ही तो त्योहार है। मैं उस्तेन्का के यहां जाऊंगी," मर्यान्का ने कहा।

"ब्याह तो मैं तुझसे करूंगा ही।"

"ठीक है," मर्यान्का ने कहा, "ब्याह का दिन आयेगा, तब देखेंगे।"

"जायेगी?" लुकाश्का ने सख़्ती से पूछा और उसे अपनी छाती से लगाकर उसका गाल चूमा।

"अरे, छोड़ो! क्या पीछे पड़ गये?" और मर्यान्का उसके हाथों से छूटकर परे हट गयी।

"अरी लड़की!... बुरा होगा," लुकाश्का ने उलाहने से सिर हिलाते हुए कहा। "रोया करेगी तू दिन-रात," और फिर उसकी ओर से मुंह फेरकर उसने चिल्लाकर लड़कियों से कहा: "चलो, शुरू करो री!"

मर्यान्का मानो उसकी बात से डर गयी थी और उसे गुस्सा भी आया था। वह थम गयी।

"क्या बुरा होगा?"

"वही।"

"क्या?"

"वही कि किरायेदार सिपाही से मिलने जाती है, इसीलिए अब मुझसे प्यार नहीं करती।"

"मेरी मर्ज़ी है, प्यार करूं, न करूं। तुम मेरे बापू नहीं या मां नहीं। चाहते क्या हो? जिसे चाहूंगी उसी को प्यार करूंगी।"

"ठीक है, ठीक है!" लुकाश्का ने कहा। "याद रखना!" वह बेंच के पास चला गया और चिल्लाया: "अरी लड़कियो, क्या बैठ गयीं? चलो, घेरा बनाओ। नज़ारका, जा चिख़ीर ले आ।"

"क्यों, आयेंगी?" ओलेनिन बेलेत्स्की से पूछ रहा था।

"अभी आती होंगी," बेलेत्स्की ने जवाब दिया। "चलिये, कुछ तैयारी कर लें।"

३९

काफ़ी रात गये ओलेनिन मर्यान्का और उस्तेन्का के पीछे-पीछे बेलेत्स्की के घर से निकला। अंधेरी गली में लड़की का सफ़ेद रूमाल झलक रहा था। सुनहरा चांद स्तेपी की ओर डूब रहा था। गांव पर रजत कुहासा छाया हुआ था। पूर्ण नीरवता थी, कहीं कोई बत्ती नहीं जल रही थी, बस दूर जाती लड़कियों की पदचाप सुनायी दे रही थी। ओलेनिन का हृदय ज़ोरों से धड़क रहा था। तमतमाये चेहरे पर रात की नम हवा का

शीतल स्पर्श हो रहा था। उसने ग्राकाश की ग्रोर देखा, फिर मुड़कर उस घर पर नज़र डाली जहां से वह निकला था, वहां ग्रभी-ग्रभी वत्ती वुझी थी, ग्रौर वह फिर से लड़कियों की दूर जाती परछाईं को देखने लगा। सफ़ेद रूमाल कोहरे में छिप गया। वह ग्रकेले रहने से डर रहा था; वह इतना सुखी था! ग्रोसारे से कूदकर वह लड़कियों के पीछे भागा।

"क्या करते हो? कोई देख लेगा!" उस्तेन्का ने कहा।

"कोई बात नहीं!"

ग्रोलेनिन ने मर्यान्का के पास जाकर उसे बाहों में भर लिया। वह छूटने की कोशिश नहीं कर रही थी।

"ग्रभी चूम-चूमकर जी नहीं भरा," उस्तेन्का ने कहा। "ब्याह लोगे, तब चूमना, ग्रब सब्र करो।"

"ग्रच्छा, मर्यान्का। कल मैं तुम्हारे पिता जी के पास जाऊंगा, खुद उनसे बात करूंगा। तुम कुछ न कहना।"

"मैं क्या कहूंगी?" मर्यान्का ने जवाब दिया।

दोनों लड़कियां दौड़ चलीं। ग्रोलेनिन ग्रकेला चल दिया, जो कुछ हुग्रा था उसे याद करते हुए। सारी शाम उसने मर्यान्का के साथ बितायी थी, वे दोनों ग्रलावघर के पास एक कोने में बैठे रहे थे। उस्तेन्का पल भर को भी कमरे से बाहर नहीं निकली थी, दूसरी लड़कियों ग्रौर बेलेत्स्की के साथ लगी रही थी। ग्रोलेनिन दबी ग्रावाज़ में मर्यान्का से बातें करता रहा था।

"मुझसे ब्याह करोगी?" उसने पूछा था।

"धोखा दोगे, ब्याह नहीं करोगे," मर्यान्का ने शांत ग्रौर प्रसन्न स्वर में जवाब दिया था।

"पर तुम मुझसे प्यार करती हो? बता दो, मेरी कसम!"

"तुमसे प्यार करने में क्या है, तुम कोई लूले-लंगड़े तो हो नहीं!" मर्यान्का ने हंसते हुए ग्रौर ग्रपने खुरदरे हाथों में उसके हाथ दबाये थे। "कितने गोरे-गोरे हाथ हैं तुम्हारे, मक्खन जैसे नरम।"

"मैं मज़ाक नहीं कर रहा। बता दो मुझे, मुझसे ब्याह करोगी?"

"बापू मेरा ब्याह तुमसे करने को राज़ी होंगे तो क्यों नहीं करूंगी?"

"ग्रपनी बात याद रखना। तुमने ग्रगर मुझे धोखा दिया तो मैं पागल हो जाऊंगा। कल मैं तुम्हारे मां-बाप से बात करूंगा, रिश्ता मांगूगा।"

ग्रचानक मर्यान्का खिलखिलाकर हंसने लगी थी।

"क्या हुआ?"

"ऐसे ही, हंसी आ रही है।"

"मैं सच कहता हूं! मैं बाग खरीद लूंगा, मकान भी, कज़्ज़ाकों में नाम लिखा लूंगा।..."

"तब फिर दूसरी औरतों की तरफ़ आंख उठाकर मत देखना! इस मामलें में बड़ी ग़ुस्सैल हूं मैं।"

ओलेनिन अपनी कल्पना में ये सभी शब्द सहर्ष दोहरा रहा था। इन यादों से कभी उसके हृदय में टीस उठती और कभी वह आनंद विभोर हो उठता। टीस इसलिए उठती कि उससे बातें करते हुए वह सदा की ही भांति शांत थी। लगता था इस नयी स्थिति से वह ज़रा भी उत्तेजित नहीं है। उसे जैसे ओलेनिन पर विश्वास नहीं था और वह भविष्य के बारे में नहीं सोच रही थी। ओलेनिन को लग रहा था कि उसे वर्तमान क्षण में ही ओलेनिन से प्यार था, अपना भविष्य वह उसके साथ नहीं जोड़ती थी। सुखी वह इसलिए था कि मर्यान्का के सभी शब्द उसे सच लगते थे और वह उसका होने पर सहमत थी।

"हां," वह अपने आपसे कह रहा था, "जब वह मेरी हो जायेगी, तभी हम एक दूसरे को समझ पायेंगे। ऐसे प्रेम के लिए कोई शब्द नहीं हैं, इसके लिए तो जीवन चाहिए, पूरा जीवन। कल सब कुछ स्पष्ट हो जायेगा। मैं और ऐसे नहीं रह सकता। कल मैं उसके पिता को, बेलेत्स्की को, सारे गांव को सब कुछ बता दूंगा।..."

दो रातें सोये बिना काटने के बाद लुकाश्का ने त्योहार पर इतनी पी ली थी कि पहली बार वह ढह गया और याम्का के घर में पड़ा सोता रहा।

४०

अगले दिन ओलेनिन सदा से पहले जग गया और जागते ही सबसे पहले उसके दिमाग में यह विचार आया कि उसे आज क्या करना है। उसके चुंबन, उसके कठोर हाथों का स्पर्श और उसके शब्द: "कितने गोरे हैं तुम्हारे हाथ!"–यह सब वह सहर्ष याद कर रहा था। वह उछलकर खड़ा हो गया और उसी क्षण जाकर मकान मालिकों से उनकी बेटी का रिश्ता मांगना चाहता था। सूरज अभी निकला नहीं था। ओलेनिन को

लगा कि बाहर कुछ ज़्यादा ही हलचल है: लोग पैदल ग्रौर घोड़ों पर ग्रा-जा रहे थे, बोल रहे थे। ग्रपना चेर्केस कोट कंधों पर डालकर वह ग्रोसारे पर निकल ग्राया। मकान मालिक के घर में ग्रभी सब सो रहे थे। पांच घुड़सवार कज़्ज़ाक ज़ोर-ज़ोर से बातें करते जा रहे थे। सबसे ग्रागे ग्रपने चौड़ी छाती वाले कबरदा घोड़े पर लुकाश्का जा रहा था। सारे कज़्ज़ाक बोल रहे थे, चिल्ला रहे थे, कुछ समझ पाना मुश्किल था।

"ऊपर की चौकी पर पहुंचो!" एक चिल्ला रहा था।

"ज़ीन कसके जल्दी से निकलो," दूसरा कह रहा था।

"उस फाटक से पास रहेगा।"

"क्या बोलते हो," लुकाश्का चिल्ला रहा था, "बीच के फाटक से जाना चाहिए।"

"हां, ठीक है, वहां से पास रहेगा," पसीने से लथपथ घोड़े पर सवार धूल से सना कज़्ज़ाक कह रहा था।

लुकाश्का का चेहरा कल के पीने से लाल ग्रौर सूजा हुग्रा था; उसकी टोपी गुद्दी पर सरक गयी थी। वह ऐसे हुक्मराना ग्रंदाज़ में चिल्ला रहा था जैसे कि वही ग्रफ़सर हो।

"क्या हुग्रा? कहां जा रहे हो?" ग्रोलेनिन ने बड़ी मुश्किल से उनका ध्यान ग्रपनी ग्रोर खींचकर पूछा।

"ग्रबरेकों को पकड़ने जा रहे हैं–टीलों में बैठे हुए हैं। ग्रभी जाना है, लोग कम पड़ रहे हैं।"

ग्रौर कज़्ज़ाक चिल्लाते ग्रौर जमा होते हुए गली में ग्रागे बढ़ गये। ग्रोलेनिन के दिमाग़ में यह बात ग्रायी कि यदि वह घर पर बैठा रहा तो ग्रच्छा न होगा; वह यह भी सोच रहा था कि जल्दी ही लौट ग्रायेगा। उसने कपड़े पहने, बंदूक में गोलियां भरीं ग्रौर घोड़े पर सवार हो गया, जिस पर वन्यूशा ने जल्दी-जल्दी ज़ीन कसी थी। गांव से बाहर वह कज़्ज़ाकों के पास पहुंचा। कज़्ज़ाक घोड़ों से उतरकर घेरा बनाकर खड़े थे ग्रौर ग्रपने साथ लायी छोटी पीपी से लकड़ी के प्याले में चिख़ीर ढालकर एक दूसरे को दे रहे थे, ग्रपने काम की सफलता की कामना करते पी रहे थे। एक बना-ठना जवान कार्नेट भी उनके बीच था, जो संयोगवश ही इस गांव में ग्राया हुग्रा था। उसने गांव से जमा हुए नौ कज़्ज़ाकों की कमान संभाल ली थी। ये सभी कज़्ज़ाक साधारण सैनिक थे, कार्नेट इनका ग्रफ़सर दिखने की कोशिश भले ही कर रहा था, लेकिन बात सभी लुकाश्का की ही सुन

रहे थे। ओलेनिन की ओर कज़्ज़ाक ज़रा भी ध्यान नहीं दे रहे थे। जब सब घोड़ों पर सवार होकर चल दिये तो ओलेनिन कार्नेट के पास जाकर उससे पूछ-ताछ करने लगा। कार्नेट यों तो स्वभाव से मृदु था, लेकिन अब अपने को अफ़सर महसूस करते हुए उसे हेय दृष्टि से देख रहा था। बड़ी मुश्किल से ओलेनिन उससे यह पता लगा पाया कि मामला क्या है। अबरेकों को खोजने के लिए भेजे दल को कुछ अबरेक गांव से कोई आठ वेर्स्ता दूर टीलों में दुबके मिले थे। अबरेक एक खड्ड में जम गये थे, गोलियां चला रहे थे और कह रहे थे कि जीते जी गिरफ़्तारी नहीं देंगे। दो कज़्ज़ाकों के साथ टोह पर गया हवलदार उन पर नज़र रखने के लिए वहीं रह गया था और एक कज़्ज़ाक को उसने दूसरों को बुलाने भेज दिया।

सूरज निकल ही रहा था। गांव से कोई तीन वेर्स्ता की दूरी पर वे खुली स्तेपी में पहुंच गये। यहां नीरस, सूखे मैदान के अलावा चारों ओर कुछ भी नज़र नहीं आता था। कहीं-कहीं गरमी से झुलसी घास थी, जगह-जगह मवेशियों की खुरियां थीं, निचानों में छोटे-छोटे सरकंडे उग रहे थे और विरले ही कहीं पगडंडी होने का आभास होता था। बहुत दूर, क्षितिज पर ख़ानाबदोश नोगाइयों के डेरे दीख पड़ते थे। कहीं कोई छाया नहीं थी और सारी प्रकृति पर एक उदासी की छाप थी। स्तेपी में सूरज चढ़ते और डूबते समय सदा लाल होता है। जब हवा चलती है तो वह बालू के टीले के टीले उड़ाकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचा देती है। जब हवा शांत होती है, जैसे कि उस सुबह थी, तब ऐसी आश्चर्यजनक नीरवता होती है, जो किसी गति, किसी ध्वनि से भंग नहीं होती। सूरज चढ़ जाने पर भी सुबह धुंधली थी; एक विचित्र सूनेपन और कोमलता की अनुभूति होती थी। कहीं कुछ हिल-डुल नहीं रहा था; बस घोड़ों की टापों और फुफकार की ही आवाज़ आती थी, किंतु यह ध्वनि भी क्षीण होती और तुरंत ही विलुप्त हो जाती।

वे चुपचाप ही चले जा रहे थे। कज़्ज़ाक अपने अस्त्र-शस्त्र इस तरह धारण करते हैं कि कहीं खनखन या खड़खड़ न हो। हथियार खनकें– इससे बढ़कर शर्म की बात कज़्ज़ाक के लिए और कोई नहीं हो सकती। गांव से दो और कज़्ज़ाक भी इस दल में आ मिले, उन्होंने भी दो-एक शब्द ही कहे। लुकाश्का का घोड़ा ठोकर खा गया या उसका पांव घास में अटक गया और उसका क़दम टूट गया। कज़्ज़ाकों में यह अपशकुन माना जाता है। लुकाश्का के साथियों ने पलटकर देखा और तुरंत ही मुंह मोड़

लिया – जैसे कि उन्होंने इस बात की ओर ध्यान न दिया हो, जो इस क्षण विशेष महत्व रखती थी। लुकाश्का ने लगाम खींची, त्योरी चढ़ायी, दांत भींचे और चाबुक सिर के ऊपर फटकारी। उसका शानदार कबरदा घोड़ा एकाएक चारों पांव जल्दी-जल्दी बदलने लगा, लगता था जैसे उसकी समझ में नहीं आ रहा कि कौनसा पांव बढ़ाये और वह पंखों पर ऊपर उठ जाना चाहता है; लेकिन लुकाश्का ने उसके तगड़े पुट्ठों पर एक बार चाबुक मारी, दूसरी बार, तीसरी बार मारी और घोड़े ने अपने दांत चमकाये, पूंछ फुलायी, फुफकारा और पिछली टांगों पर उठ गया, और कज़्ज़ाकों के दल से कुछ क़दम परे हट गया।

"वाह, बढ़िया घोड़ी है!" कार्नेट बोला।

घोड़े को घोड़ी कहने का मतलब उसकी ख़ास तारीफ़ करना था।

"शेर घोड़ा है," एक बुज़ुर्ग कज़्ज़ाक ने कहा।

कज़्ज़ाक चुपचाप कभी क़दमचाल से और कभी दुलकी चाल से चले जा रहे थे। उनके चाल बदलने से ही उनकी गति की नीरवता और भव्यता भंग होती थी।

स्तेपी में आठ वेर्स्ता के रास्ते में उन्हें बस एक नोगाई परिवार मिला, जो अपना तंबू बैलगाड़ी पर डाले उनसे कोई एक वेर्स्ता की दूरी पर धीमे-धीमे चला जा रहा था। यह ख़ानाबदोश परिवार स्तेपी में नये स्थान पर डेरा डालने जा रहा था। इसके अलावा उन्हें एक निचान में चौड़े मुंहवाली फटेहाल दो नोगाई औरतें मिलीं। वे पीठ पर टोकरी बांधे थीं और स्तेपी में चर रहे ढोरों का गोबर जमा कर रही थीं। कार्नेट को उनकी बोली ठीक से नहीं आती थी तो भी वह उनसे कुछ पूछने लगा; वे उसकी बात नहीं समझ पा रही थीं और सहमी-सहमी-सी एक दूसरी की ओर देख रही थीं।

लुकाश्का ने पास आकर घोड़ा थामा और अभिवादन के उनके आम शब्द फटाक से कहे। नोगाई औरतें ख़ुश हो गयीं और अपने भाई-बंधु की तरह उससे खुलकर बातें करने लगीं।

"वाइ-वाइ, कोप अबरेक!" उन्होंने दयनीय स्वर में कहा और उस दिशा में इशारा किया जिधर कज़्ज़ाक जा रहे थे। ओलेनिन समझ गया कि वे कह रही हैं: "बहुत सारे अबरेक हैं।"

ओलेनिन ने ऐसी कोई मुठभेड़ पहले नहीं देखी थी, येरोश्का मामा के क़िस्सों से ही वह इनके बारे में कुछ जान पाया था, सो अब वह कज़्ज़ाकों

से पीछे नहीं रहना चाहता था, सब कुछ देखना चाहता था। वह कज्ज़ाकों को विमुग्ध दृष्टि से देख रहा था, हर बात की ओर ध्यान देता हुआ, सब कुछ सुनता हुआ अपने प्रेक्षण कर रहा था। वह तलवार और बंदूक लेकर चला था, लेकिन यह देखकर कि कज्ज़ाक उससे कन्नी काट रहे हैं, उसने मुठभेड़ में भाग न लेने का फ़ैसला किया। उसका अपना विचार यह था कि अपनी टुकड़ी के साथ मुहिम के दौरान वह अपनी वीरता का पर्याप्त प्रमाण दे चुका है। लेकिन उसके इस निश्चय का सबसे बड़ा कारण यह था कि वह बहुत ख़ुश था, सुखी था।

अचानक दूर से गोली चलने की आवाज़ आयी।

कार्नेट उत्तेजित हो गया और आदेश देने लगा कि कैसे कज्ज़ाक अलग-अलग हो जायें और किस दिशा से पास जायें। लेकिन कज्ज़ाक इन आदेशों की ओर कोई ध्यान नहीं दे रहे थे, वे लुकाश्का की ही बात सुन रहे थे और उसकी ओर ही देख रहे थे। लुकाश्का के चेहरे और आकृति से निश्चिंतता और सौम्यता का आभास होता था। वह अपने कबरदा घोड़े को दुलकी चाल से ले जा रहा था, जिससे क़दमचाल चलते दूसरे घोड़े पीछे छूट रहे थे। आंखें सिकोड़ते हुए वह सामने नज़रें गड़ा रहा था।

"घुड़सवार आ रहा है," अपने घोड़े को थामते हुए और दूसरों के पास आते हुए उसने कहा।

ओलेनिन आंखें फाड़-फाड़कर देख रहा था, लेकिन उसे कुछ नज़र नहीं आ रहा था। कज्ज़ाकों ने शीघ्र ही दो घुड़सवारों को आते देख लिया और क़दमचाल से, इतमीनान से उनकी ओर चल दिये।

"ये अबरेक हैं?" ओलेनिन ने पूछा।

कज्ज़ाकों ने इस सवाल का कोई जवाब नहीं दिया, जो उनकी नज़रों में एकदम बेतुका था। अबरेक निरे बेवक़ूफ़ होते यदि वे घोड़ों पर इस ओर आते।

"लगता है, हमारा रोद्का हाथ हिला रहा है," लुकाश्का ने दो घुड़सवारों की ओर इशारा करते हुए कहा, जो अब साफ़ दिखने लगे थे। "हमारी ओर आ रहा है।"

सचमुच ही कुछ मिनटों में स्पष्ट हो गया कि ये घुड़सवार गश्त पर निकले कज्ज़ाक थे, और हवलदार लुकाश्का के पास आ गया।

"दूर हैं?" लुकाश्का ने बस इतना ही पूछा।

इसी समय कोई तीस क़दम दूर गोली चली। हवलदार मुस्करा दिया।

"हमारा गूरका उन पर गोलियां चला रहा है," जिधर गोली चली थी, उस ओर सिर से इशारा करते हुए उसने कहा।

और कुछ क़दम दूर जाने पर उन्हें गूरका दिखा, जो एक बालुई टीले के पीछे बैठा बंदूक में गोलियां भर रहा था। ऊब के मारे वह दूसरे टीले के पीछे बैठे अबरेकों पर गोलियां चला रहा था और जवाब में वे भी गोलियां दाग़ रहे थे। उधर से एक गोली सनसनाती आयी। कार्नेट का रंग उड़ गया था और वह घबरा रहा था। लुकाश्का घोड़े से उतरा और घोड़ा एक कज़्ज़ाक की ओर बढ़ाकर गूरका के पास गया। ओलेनिन ने भी ऐसा ही किया और कमर झुकाकर उसके पीछे-पीछे जाने लगा। वे गोलियां चला रहे कज़्ज़ाक के पास पहुंचे ही थे कि उनके ऊपर से दो गोलियां सनसनाती हुई निकलीं। लुकाश्का ने हंसते हुए पीछे मुड़कर ओलेनिन पर नज़र डाली और नीचे झुक गया।

"देखो, कहीं गोली-वोली न लग जाये, द्मीत्री अन्द्रेइच," उसने कहा। "अच्छा हो, तुम यहां से चले जाओ। तुम्हारा यहां कोई काम नहीं है।"

लेकिन ओलेनिन हर हालत में अबरेकों को देखना चाहता था।

टीले के पीछे से कोई दो सौ क़दम की दूरी पर उसे टोपियां और बन्दूकें दिखीं। अचानक वहां धुआं नज़र आया और फिर से सनसन करती गोली आयी। अबरेक एक टीले तले दलदल में बैठे थे। ओलेनिन का सारा ध्यान उस स्थान पर केंद्रित था, जहां वे बैठे थे। वह स्थान सारी स्तेपी जैसा ही था, लेकिन चूंकि वहां अबरेक बैठे थे, इसलिए वह मानो सबसे अलग हो गया था और उसका अपना स्वरूप था। उसे लगा कि यही वह स्थान है, जहां अबरेकों को बैठे होना चाहिए। लुकाश्का अपने घोड़े के पास लौट आया और उसके पीछे-पीछे ओलेनिन भी।

"घास से लदी बैलगाड़ी लानी चाहिए," लुकाश्का ने कहा, "नहीं तो मार डालेंगे। उधर उस टीले के पीछे नोगाइयों की घास से लदी बैलगाड़ी खड़ी है।"

कार्नेट ने उसकी बात सुनी, हवलदार भी सहमत था। कज़्ज़ाक घास की गाड़ी खींच लाये और उसके पीछे छिपकर आगे बढ़ने लगे। ओलेनिन एक टीले पर चढ़ गया जहां से उसे सब कुछ दिखायी देता था। घास से लदी गाड़ी आगे बढ़ रही थी; कज़्ज़ाक उसके पीछे थे। कज़्ज़ाक आगे बढ रहे थे। उधर चेचेन – वे नौ जाने थे – घुटने से घुटना सटाये बैठे थे और गोलियां नहीं चला रहे थे।

चारों ओर सन्नाटा था। सहसा चेचेनों की ओर से येरोश्का मामा के हाय रे, हाय-हाय-हाय, जैसे शोकमय गीत के विचित्र स्वर सुनायी दिये। चेचेन जानते थे कि अब बच निकलना नामुमकिन है, सो भाग खड़े होने के प्रलोभन से बचने के लिए उन्होंने घुटने से घुटना सटाकर एक दूसरे की पेटी से पेटी बांध ली, बंदूकें तैयार कर लीं और मृत्यु गीत गाने लगे।

घास से लदी बैलगाड़ी के पीछे कज़्ज़ाक पास ही पास आते जा रहे थे, ओलेनिन इस प्रतीक्षा में था कि किसी भी क्षण गोलियां चलने लगेंगी, लेकिन अबरेकों का शोकमय गीत ही सन्नाटे को चीर रहा था। सहसा गीत ख़त्म हो गया, एक गोली चली और गाड़ी से जा टकरायी, चेचेनों की गालियां और चीखें सुनायी दीं। एक के बाद एक धमाका हो रहा था और गोलियां गाड़ी से टकरा रही थीं। कज़्ज़ाक गोलियां नहीं चला रहे थे। वे अब पांच क़दम से अधिक दूर नहीं थे।

एक क्षण और बीता, और फिर हुंकारा भरते हुए कज़्ज़ाक गाड़ी के दोनों ओर से आगे लपके। लुकाश्का सबसे आगे था। ओलेनिन ने बस कुछेक बार गोलियां चलने की आवाज़ें, चीख और कराहट ही सुनी। उसे लगा कि उसने धुएं के पीछे ख़ून देखा। घोड़ा छोड़कर वह बदहवास-सा कज़्ज़ाकों के पास दौड़ आया। उसकी आंखों पर भय का पर्दा पड़ा हुआ था। उसकी कुछ समझ में नहीं आ रहा था, बस एक बात उसकी चेतना तक पहुंची कि सब कुछ ख़त्म हो गया है। लुकाश्का का चेहरा एकदम सफ़ेद था, घायल चेचेन के हाथ पकड़े हुए वह चिल्ला रहा था: "इसे मत मारो! ज़िंदा ही पकड़ूंगा!" यह वही लाल बालोंवाला चेचेन था – मारे गये अबरेक का भाई, जो उसकी लाश लेने आया था। लुकाश्का उसकी बांहें मरोड़ रहा था। सहसा चेचेन ने हाथ छुड़ा लिये और पिस्तौल चला दी। लुकाश्का गिर पड़ा। उसके पेट पर ख़ून का धब्बा प्रकट हुआ। वह उछलकर खड़ा हुआ और फिर गिर पड़ा, वह रूसी में और तातारों की बोली में गालियां दे रहा था। उसके शरीर पर और उसके नीचे ख़ून

अधिक होता जा रहा था। कज़्ज़ाक उसके पास आये और उसकी पेटी खोलने लगे। उनमें एक, नज़ारका, लुकाश्का की मदद करने से पहले बड़ी देर तक अपनी तलवार म्यान में नहीं रख पाया : हर बार वह उलटी पड़ती थी। तलवार ख़ून से रंगी हुई थी।

लाल बालों और छंटी हुई मूंछोंवाले चेचेन मारे-काटे पड़े हुए थे। एक वही जाना-पहचाना चेचेन, जिसने लुकाश्का पर गोली चलायी थी, बुरी तरह से घायल था और ज़िंदा था। वह घायल बाज़ जैसा, ख़ून से लथपथ (उसकी दायीं आंख तले से ख़ून बह रहा था), दांत भींचे, मनहूस, सफ़ेद चेहरा लिये, बड़ी-बड़ी, हताशा भरी आंखों से चारों ओर देखते हुए उकड़ूं बैठा था, उसके हाथ में कटार थी, अभी भी वह अपनी रक्षा करने को तैयार था। कार्नेट उसके पास गया और फिर मानो उसके बगल से गुज़रते हुए, उसने झटके से उसके कान में गोली दाग़ दी। चेचेन लपका, लेकिन देर हो चुकी थी। वह वहीं ढेर हो गया।

हांफ़ते कज़्ज़ाक मारे गये चेचेनों को परे हटा रहे थे, उनके हथियार उतार रहे थे। लाल बालोंवाले इन सभी चेचेनों में हर कोई आदमी था, हर किसी के चेहरे का अपना अलग भाव था। लुकाश्का को उठाकर गाड़ी की ओर ले जाने लगे। वह अभी भी रूसी में और तातार बोली में गालियां दे रहा था।

"नहीं, नहीं जा पायेगा, गला घोंट दूंगा! मेरे हाथों से नहीं बच पायेगा! आना सेनी!" वह छटपटाता हुआ चिल्ला रहा था। शीघ्र ही वह कमज़ोरी के कारण चुप हो गया।

ओलेनिन घर चला गया। शाम को उसने सुना कि लुकाश्का मरने-मरने को है, लेकिन नदी पार का हकीम जड़ी-बूटियों से उसका इलाज कर रहा है।

लाशें पंचायत के सामने लाकर रखी गयीं। औरतें और लड़के उन्हें देखने को जमा हो गये।

झुटपुटा होने पर ओलेनिन लौटा। वह यह सब देखने के बाद बड़ी देर तक होश में नहीं आ पाया, लेकिन सांझ ढले फिर से कल की यादें उमड़ आयीं; उसने खिड़की में झांककर देखा : मर्यान्का घर से कोठरी में आ-जा रही थी, घर का काम समेट रही थी। मां उसकी अंगूर के बाग में गयी हुई थी और बाप पंचायत में था। ओलेनिन उसका काम निबटने तक इंतज़ार नहीं कर पाया, और उसके पास चला गया। वह घर में

थी, पीठ दरवाज़े की ओर किये खड़ी थी। ओलेनिन ने सोचा कि वह शर्मा रही है।

"मर्यान्का!" वह बोला, "मर्यान्का! मैं अंदर आ सकता हूं?"

एकाएक मर्यान्का घूम गयी। उसकी आंखों में आंसुओं का एक क्षीण आभास होता था। उसके मुखड़े पर गरिमामय शोक की छाप थी। उसने ओलेनिन पर मौन दृष्टि डाली।

ओलेनिन ने फिर से कहा:

"मर्यान्का! मैं आया हूं..."

"चले जाओ," उसने कहा। उसके चेहरे का भाव नहीं बदला, लेकिन आंखों से अश्रुधारा बह चली।

"क्या हुआ तुम्हें? क्या बात है?"

"क्या हुआ?" उसने रूखी आवाज़ में कहा। "कज़्ज़ाक मारे गये, यह हुआ है।"

"लुकाश्का?"

"चले जाओ यहां से, क्या चाहिए तुम्हें!"

"मर्यान्का!" ओलेनिन ने उसके पास जाते हुए कहा।

"तुम्हें कभी मुझसे कुछ नहीं मिलेगा।"

"मर्यान्का, ऐसे मत कहो," ओलेनिन याचना कर रहा था।

"चले जाओ यहां से, मैं तुम्हारी शक्ल तक नहीं देखना चाहती," लड़की चिल्लायी और पांव पटककर फुफकारती हुई आगे बढ़ी। उसके चेहरे पर ऐसी घृणा, हिकारत और क्रोध अंकित थे कि ओलेनिन सहसा समझ गया कि उसे कुछ उम्मीद नहीं रखनी चाहिए, कि इस स्त्री की अगम्यता के बारे में पहले जो वह सोचता रहा था, वह बिल्कुल सच था।

ओलेनिन ने कुछ नहीं कहा, दौड़कर बाहर निकल भागा।

४२

अपने कमरे में लौटकर वह दो घंटे तक हिले-डुले बिना बिस्तर पर पड़ा रहा, फिर अपनी कंपनी के कमांडर के पास गया और उससे हेडक्वार्टर में चले जाने की इजाज़त मांगी। किसी से भी विदा लिये बिना और वन्यूशा के हाथ मकान मालिक का हिसाब चुकता करके वह उस क़िले में जाने को तैयार हो गया, जहां उनकी रेजिमेंट तैनात थी। अकेला येरोश्का

मामा ही उसे विदा कर रहा था। उन्होंने पी, फिर और पी, फिर और पी। मास्को से उसके विदा होने के समय की ही भांति अब भी बाहर त्रोइका गाड़ी उसका इंतज़ार कर रही थी। लेकिन अब ओलेनिन उस दिन की भांति अपने आप से बातें नहीं कर रहा था और यह नहीं कह रहा था कि यहां उसने जो कुछ सोचा और किया था वह "वह" नहीं था। वह अब अपने आप से नये जीवन का वायदा नहीं कर रहा था। वह मर्यान्का से पहले से भी अधिक प्रेम करता था और अब जानता था कि उसका प्रेम कभी भी नहीं पा सकेगा।

"अच्छा तो, विदा, भाई मेरे!" येरोश्का मामा कह रहा था। "मुहिम पर जाओगे, तो समझदारी से काम लेना, मुझ बूढ़े की बात मानो। कभी धावा बोलने या कहीं और जाना पड़े (मैंने तो बहुत कुछ देखा है, सब जानता हूं), और अगर गोलियां चल रही हों तो तुम झुंड में नहीं चलना, जहां लोग ज़्यादा हों। तुम सिपाही लोगों को तो जब भी डर लगता है, भीड़ में घुसे जाते हैं, सोचते हैं, लोगों के साथ अच्छा रहेगा। लेकिन यहीं सबसे बुरा होता है। भीड़ पर ही गोलियां चलती हैं। मैं तो हमेशा लोगों से दूर ही रहता था, इसीलिए कभी घायल नहीं हुआ। यों अपने ज़माने में क्या कुछ नहीं देखा है!"

"तुम्हारी पीठ में तो गोली लगी हुई है," वन्यूशा ने कहा जो कमरे की सफ़ाई कर रहा था।

"यह तो कज़्ज़ाक मस्ती मार रहे थे," येरोश्का ने जवाब दिया।

"कज़्ज़ाक? सो कैसे?" ओलेनिन ने पूछा।

"ऐसे ही! हम पी रहे थे। एक कज़्ज़ाक था वान्का सीत्किन, ज़्यादा मस्ती में आ गया। और बस गोली चला दी उसने – मेरे ठीक यहां आ लगी।"

"बहुत दर्द हुआ था क्या?" ओलेनिन ने पूछा। "वन्यूशा, कितनी देर है अभी?"

"अरे, कहां की जल्दी है तुम्हें! ठहरो सुनाता हूं।... बस, उसने गोली मेरी पीठ में जमा दी, गोली ने हड्डी तो नहीं तोड़ी, मांस में ही फंस गयी। मैं बोला, तूने तो मुझे जान से मार डाला, भाई मेरे। हैं? यह क्या किया तूने? मैं तुझे ऐसे नहीं छोड़ने का। ला, बाल्टी निकलवा।"

"बहुत दर्द हुआ था क्या?" ओलेनिन ने उसकी बात प्रायः न सुनते हुए फिर से पूछा।

"सुनो तो। लो, बाल्टी आ गयी। सारी पी डाली। लेकिन फिर भी खून बहे जा रहा था। सारा घर भर गया। बुर्लाक बाबा बोला: 'यह तो पट्ठा मर ही जायेगा। ला, एक बोतल मीठी और, नहीं तो हम तुझे हवालात में पहुंचा देंगे।' और ले आये। पीते रहे, पीते रहे..."

"तो दर्द बहुत हुआ था क्या?" ओलेनिन ने फिर से पूछा।

"कैसा दर्द! टोको मत, अच्छा नहीं लगता मुझे। पूरी बात सुनो। बस ख़ूब चढ़ायी, ख़ूब चढ़ायी, सुबह तक मौज करते रहे और ऐसे ही अलावघर पर सो रहा, नशे में धुत्त। सुबह उठा तो पीठ सीधी न हो।"

"बहुत दर्द हुआ था?" ओलेनिन ने फिर से पूछा यह सोचते हुए कि आख़िरकार वह अपने सवाल का जवाब पा लेगा।

"मैंने कहा क्या दर्द हुआ था? दर्द नहीं था, बस पीठ सीधी नहीं होती थी, चला नहीं जाता था।"

"फिर भर गया घाव?" ओलेनिन ने कहा, उसका मन इतना बोझिल था कि वह हंसा तक नहीं।

"भर गया, लेकिन गोली यहीं रह गयी। यह देखो," और उसने कमीज़ उठाकर अपनी लंबी-चौड़ी पीठ दिखायी, जिस पर हड्डी के पास गोली हिल-डुल रही थी।

"देखा, कैसे घूमती है," येरोश्का बोला। लगता था जैसे यह गोली उसके लिए खिलौना है। "देखो, अब नीचे को आ गयी।"

"लुकाश्का बच जायेगा?"

"भगवान जाने! डाकदर नहीं है। बुलाने गये हैं।"

"कहां से लायेंगे, ग्रोज़नया से?" ओलेनिन ने पूछा।

"अरे नहीं, भाई मेरे। मैं ज़ार होता तो तुम्हारे सब रूसी डाकदरों को फांसी दे देता, उन्हें तो बस चीरना-काटना ही आता है। हमारे कज़्ज़ाक बक्लाशेव को अमानुस बना दिया, टांग उसकी काट डाली। मतलब, बुद्धू हैं। अब बक्लाशेव किस काम का रह गया? नहीं, भाई मेरे, पहाड़ों में हैं असली डाकदर। मेरा कुनाक गीरचिक मुहिम में घायल हुआ था, यहां छाती में। तुम्हारे डाकदरों ने तो जवाब ही दे दिया था, पहाड़ों से सईब आया, उसने ठीक कर दिया। जड़ी-बूटियां जानते हैं वे।"

"छोड़ो यह बकवास," ओलेनिन ने कहा, "मैं हेडक्वार्टर से डाक्टर भेज दूंगा।"

"बकवास!" बूढ़े ने उसकी नकल उतारी। "बुद्धू है, बुद्धू! बकवास!

डाकदर भेज दूंगा! अरे, अगर तुम्हारे डाकदर इलाज करते होते तो कज़्ज़ाक और चेचेन तुम्हारे यहां इलाज कराने जाते। पर यहां तो तुम्हारे अफ़सर और कर्नल पहाड़ों से डाकदर बुलाते हैं। तुम्हारे यहां सब कुछ झूठ है, फ़रेब है।"

ओलेनिन ने कोई जवाब नहीं दिया। वह इस बात से पूरी तरह सहमत था कि जिस संसार से वह आया था और जहां लौट रहा था, वहां सब कुछ झूठ था, फ़रेब था, पाखंड था।

"लुकाश्का कैसा है? गये थे उसके पास?" उसने पूछा।

"हां, मुर्दों-सा पड़ा हुआ है। कुछ खाता नहीं, पीता नहीं, बस वोद्का ही उसके गले से उतरती है। खैर, वोद्का पी रहा है तो ठीक है। नहीं तो बड़ा अफ़सोस होगा लड़के का। अच्छा जवान है, मेरे जैसा निडर बांका। ऐसे ही मैं भी एक बार मरने को हो गया था। बुढ़ियां तो रोने-बिलखने ही लगी थीं। सिर ऐसे तप रहा था, जैसे भट्ठी हो। मुझे उठाकर कोने में लिटा दिया, जहां ईसा की मूर्ति है। बस मैं वहां लेटा था और मेरे सिर के ऊपर अलावघर पर बालिश्त भर के ढोलची बैठे ढोल पीट रहे थे। मैं उन्हें डांटूं तो वे और भी ज़ोर से पीटने लगें।" बूढ़ा हंस दिया। "औरतें जाकर हमारे पादरी को बुला लायीं, मुझे दफ़नाने की तैयारियां कर रही थीं; बोलीं: यह अधर्मियों के साथ उठता-बैठता रहा है, उनके साथ खाता-पीता था, औरतों के साथ मौज उड़ाता था, इसने लोगों की जानें ली हैं, व्रत नहीं रखता था, बलालाइका बजाता था। मुझसे कहने लगीं – पच्छाताप कर ले। मैं पच्छाताप करने लगा। बोला, मैं पापी हूं। पादरी जो कहे, मेरा बस एक ही जवाब: पापी हूं। वह बलालाइका की बात पूछने लगा। मैं बोला इसका भी पापी हूं। वह कहने लगा कहां है यह शैतान की ईजाद? तू दिखा दे मुझे और तोड़ डाल। मैं बोला: मेरे पास नहीं है। ख़ुद मैंने उसे कोठरी में जाल में छिपा रखा था, जानता था कि कोई ढूंढ नहीं पायेगा। बस वे मुझे छोड़कर चले गये। और जी, मैंने आराम कर लिया और लगा अपनी बलालाइका बजाने।... हां, तो मैं क्या कह रहा था," वह आगे बोला, "तुम मेरी बात याद रखना, लोगों से दूर रहना। नहीं तो ऐसी बुरी मौत मारे जाओगे। मुझे तुम पर दया आती है, सच। तुम तो पियक्कड़ हो, मैं तुम्हें प्यार करता हूं। तुम्हारे भाई-बंधुओं को तो टीलों पर चढ़ने का शौक होता है। एक आया था हमारे यहां रूस से, टीलों पर ही चढ़ता रहता था।

जैसे ही टीला देखा, घोड़ा दौड़ाकर टीले पर चढ़ गया। बस ऐसे ही एक बार चढ़ा, बड़ा ख़ुश था। उधर चेचेन ने गोली चलायी और वहीं उसका काम तमाम कर दिया। बड़े तेज़ हैं चेचेन – टेक से बंदूक चलाने में। मुझसे बढ़कर भी हैं। ज़रा अच्छा नहीं लगता मुझे जब ऐसी बुरी मौत मारते हैं। तुम्हारे सिपाहियों को देखके तो मुझे बड़ी हैरानी होती है। देखो तो बुद्धुओं को! चले जा रहें, सबके सब झुंड बनाकर, ऊपर से लाल कालर और लगा रखे हैं। अरे बताओ, निशाना कैसे न लगे! एक को मार देते हैं, उसे घसीट ले जाते हैं। उसकी जगह दूसरा ले लेता है। क्या बुद्धू हैं!" बूढ़े ने सिर हिलाते हुए फिर से कहा। "यह नहीं कि दूर-दूर हो जायें और अलग-अलग चलें। बस ऐसे ही ईमान से जाओ। अरे, वह तुम्हारा निशाना लगा ही नहीं पायेगा। ऐसे ही करना तुम।"

"अच्छा, शुक्रिया, मामा! चलता हूं। भगवान ने चाहा तो फिर मिलेंगे," ओलेनिन ने कहा और उठकर दरवाज़े को चल दिया।

बूढ़ा फ़र्श पर ही बैठा था, उठ नहीं रहा था।

"ऐसे विदा होते हैं क्या? बुद्धू है, निरा बुद्धू!" वह बोला। "तौबा, क्या लोग हैं आजकल के! साल भर तक साथ रहा, अब उठे और चल दिये। अरे, मैं तो तुम्हें प्यार करता हूं, कितनी दया आती है मुझे तुम पर! ऐसे दुखियारे हो, अकेले ही, अकेले। कोई तुम्हें प्यार नहीं करता। मुझे तो कई बार नींद नहीं आती, इतना तरस आता है। जैसे वह गीत है न:

मुश्किल है, भैया मेरे,
परदेस में, रे, जीना!

ऐसे ही तुम हो।"

"अच्छा तो, विदा," ओलेनिन ने फिर से कहा।

बूढ़े ने उठकर अपना हाथ उसकी ओर बढ़ाया, वह हाथ मिलाकर जाना चाहता था।

"अरे, थूथना तो दे इधर, थूथना अपना।"

बूढ़े ने अपने दोनों मोटे हाथों में उसका सिर पकड़ा, अपनी गीली मूंछों व होंठों से तीन बार उसे चूमा और रो पड़ा।

"मैं तुझे प्यार करता हूं। अच्छा, जा!"

ओलेनिन गाड़ी में बैठ गया।

"अरे, तो क्या ऐसे ही चले जाओगे? अपनी याद में कुछ देते ही जाओ। बंदूक ही दे दो। दो-दो बंदूकें लेकर क्या करोगे," बूढ़े ने सच्चे मन से सुबकते हुए कहा।

ओलेनिन ने बंदूक निकालकर उसे दे दी।

"क्या कुछ नहीं दिया इस बूढ़े को!" वन्यूशा बड़बड़ा रहा था। "इसका मन ही नहीं भरता। भिखमंगा कहीं का! सभी ऐसे छिछोरे हैं," ओवरकोट में लिपटकर कोचवान के पास बैठते हुए उसने कहा।

"चुप, सूअर!" बूढ़े ने हंसते हुए उसे डपटा। "देखो तो कैसा कंजूस है!"

मर्यान्का कोठरी में से निकली। उसने त्रोइका गाड़ी पर उदासीन नज़र डाली, सिर झुकाया और अंदर चली गयी।

"ला फ़िल!*" वन्यूशा ने कहा और आंख मारकर अपनी भोंडी हंसी हंस दिया।

"चलो!" ओलेनिन गुस्से से चिल्लाया।

"अच्छा, भाई मेरे! सुखी रहो! मैं तुम्हें याद करूंगा!" येरोश्का ने चिल्लाकर कहा।

ओलेनिन ने पीछे मुड़कर देखा। येरोश्का मामा मर्यान्का से बातें कर रहा था, प्रत्यक्षतः अपने किन्हीं कामों की। बूढ़ा और लड़की – दोनों में से कोई भी उसकी ओर नहीं देख रहा था।

१८५२–१८६२

---

* लड़की!

पाठकों से

रादुगा प्रकाशन इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिज़ाइन के बारे में आपके विचार जानकर अनुगृहीत होगा। हमें आशा है कि आपकी भाषा में प्रकाशित रूसी और सोवियत साहित्य से आपको हमारे देश की संस्कृति और इसके लोगों की जीवन-पद्धति को अधिक अच्छी तरह जानने-समझने में मदद मिलेगी। हमारा पता है :

रादुगा प्रकाशन,
१७, ज़ूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।

प्रकाशित होनेवाली है

फ़० दोस्तोयेव्स्की। बौड़म।

१९ वीं शती के प्रतिभाशाली रूसी लेखक फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की (१८२१–१८८१) इतिहास में मनोवैज्ञानिक गद्य के एक कुशल लेखक, तथा पीड़ित और दलित लोगों के प्रवीण संरक्षक के रूप में उदित हुए हैं। इनके उपन्यासों 'बौड़म', 'करामाज़ोव बंधु', 'अपराध और दंड', लघु उपन्यासों 'दरिद्र नारायण', 'रजत रातें' तथा अन्य कृतियों को आज विश्व में उत्तम ख्याति प्राप्त है।

'बौड़म' दोस्तोयेव्स्की की सबसे अधिक गीतिका-प्रधान कृति है, इसमें "निश्चित रूप से अच्छे व्यक्ति" के चरित्र को साकार रूप देने का प्रयास है, जो लेखक का सर्वदा प्रिय विषय रहा है।

प्रकाशित हुई है

फ़० दोस्तोयेव्स्की। कहानियां।

फ़० दोस्तोयेव्स्की (१८२१-१८८१) का रूसी तथा विश्व साहित्य के इतिहास में मनोवैज्ञानिक गद्य के एक कुशल लेखक के रूप में आविर्भाव हुआ है। उनके उपन्यास 'बौड़म', 'करामाज़ोव बंधु' तथा 'अपराध और दंड' को उनके जीवन काल में ही विश्व ख्याति प्राप्त हो गयी थी।

प्रस्तुत संस्करण में उनके लघु उपन्यास 'दरिद्र नारायण' तथा 'रजत रातें' के साथ-साथ उनकी लघु कथाएं 'दिल का कमज़ोर', 'एक अटपटी घटना', 'विनीता' तथा 'एक हास्यास्पद व्यक्ति का सपना' समाविष्ट हैं।

"बुराई लोगों की सामान्य अवस्था है–इस बात में मैं विश्वास नहीं करता, और न ही करना चाहता हूं," दोस्तोयेव्स्की के ये शब्द उनके विश्व दर्शन और उनकी कृतियों के मूल संदेश का सार प्रतिबिंबित करते हैं।

"...ईमानदारी से जीने के लिए आदमी को कुछ करने को लालायित होना, छटपटाना चाहिए, भटकना और गलतियां करनी चाहिए, शुरू करना और छोड़ना चाहिए, फिर से शुरू करना और फिर से छोड़ना चाहिए और निरंतर संघर्ष करना चाहिए। इत्मीनान और चैन तो मानसिक अधमता है," लेव तोलस्तोय (१८२८–१९१०) के ये शब्द उनके सृजन में हमारे लिए बहुत कुछ स्पष्ट करते हैं।

'कज़्ज़ाक' उपन्यास पर तोलस्तोय ने १८५२ से १८६२ तक काम किया। काकेशिया में बिताये वर्षों का उनका अनुभव इसमें प्रतिबिंबित हुआ है। इस उपन्यास में लेखक ने मानव जीवन के मूल्य के बारे में अपने विचार व्यक्त किये हैं, जन-जीवन का सौंदर्य और निश्छलता तथा कुलीन समाज का झूठ और पाखंड दिखाया है।

रादुगा प्रकाशन·मास्को